Master of Arts (Public Administration) (DDE)

Semester – II

Paper Code – 20PUB22C2

ADMINISTRATIVE THOUGHT – II

प्रशासनिक विचार – II

DIRECTORATE OF DISTANCE EDUCATION

MAHARSHI DAYANAND UNIVERSITY, ROHTAK

(A State University established under Haryana Act No. XXV of 1975)
NAAC 'A+' Grade Accredited University

Material Production

Content Writer: *Dr.* _____

Copyright © 2020, Maharshi Dayanand University, ROHTAK

All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK – 124 001

ISBN :

Price : Rs. 325/-

Publisher: Maharshi Dayanand University Press

Publication Year : 2021

M.A. (Public Administration) Sem-II
Administrative Thought-II (20PUB22C2)

Total Marks = 100 Semester End Exam = 80
Time = 3 hrs. Internal Assessment = 20

Note: The question paper will consist of **five** units. Each of the first four units will contain two questions and the students shall be asked to attempt **one** question from each unit. Unit - V of each question paper shall contain **eight** short answer type questions without any internal choice and it shall be covering the entire syllabus. As such unit - V shall be Compulsory.

Course Outcomes

CO-1. Help in knowing that how behavioural aspects of human affect the output of the organization.

CO-2. Help in knowing the different factors which can motivate the person to work efficiently.

CO-3. Help in knowing that how the management techniques can be used to increase the performance of the administration.

CO-4. Impart the knowledge of student about Policy formulation and Implementation.

UNIT-I

Elton Mayo, C.I. Barnard, Herbert Simon

UNIT-II

Abraham Maslow, Doughlas Mcgregor, Fredrick Herzberg,

UNIT-III

Chris Argyris, Rensis Likert, Peter Drucker,

UNIT-IV

Karl Marx, Yehezkal Dror, Dwight Waldo,

Suggested Readings:

1. Nisha Ali, S.S. , Eminent Administrative Thinkers, Delhi, Associated Publishing House, 1998
2. Maheshwari ,S.R. , Administrative Thinkers, New Delhi: Macmillan, India Ltd., 1998
3. Prasad, Ravindra; V.S. Prasad and Satyanarayan (ed.), Administrative Thinkers, New Delhi, Sterling, 2010.(Hindi & English)
4. Sudha G.S., History of Management Thought, Jaipur, RBSA, 2003, Fourth Edition, (Hindi Medium) reprint in 2010.
5. Kumar, Umesh and Sanjay Kumar Singh, Prachin Avm Adhunik Parshaskiya Vicharak, New Delhi, National Book, 1980.
6. Sarkar Monoranjan , Administrative Thinkers, Delhi: Wisdom Press, 2013.
7. Sapru, R.K. , Administrative Theories and Management Thought, New Delhi: PHI Learning, 2009 (2nd Edition).
8. Theory, Narender Kumar, Theory, Eminent Administrative Thinkers, Jaipur: RBSA Publishers, 2002 (Hindi Medium)
9. Goel, S.L., Administrative and Management Thinkers, New Delhi: Deep and Deep, 2008.
10. Polinaidu, S., Public Administration, New Delhi: Galgotia, 2010 (Reprint of 2004 Edition)

विषय सूची

इकाई 1 :– Elton Mayo, C.I. Barnard, Herbert Simon

1. जार्ज एल्टन मेयो 1–9

- मेयो के प्रयोग (Mayo's Experiments)
- प्रकाश प्रयोग (Illumination Experiment) .
- 'रिले असैम्बली' टेस्ट रुम प्रयोग
- साक्षात्कार अध्ययन : मानवीय भावनाएँ और अभिवृत्तियाँ
- बैंक वायरिंग अवलोकन प्रयोग
- एल्टन मेयो और फ्रेडरिक टेलर की तुलना

2. चेस्टर इरविंग बरनार्ड 10–19

- संगठनः एंक सहकारी व्यवस्था
- कार्यपालिका के कार्य
- प्राधिकारः मिथक और यथार्थता
- नेतृत्व
- निर्णय–निर्माण

3. हरबर्ट ए. साइमन 20–34

- प्रशासनिक सिद्धान्त : कुछ समस्याएँ
- प्राधिकार की भूमिका
- संचार
- संगठनात्मक – प्रभाव के तरीके
- दक्षता का मापदण्ड
- मानव प्रतिमान

इकाई 2 :– Abraham Maslow, Doughlas Mcgregor, Fredrick Herzberg

4. एब्राहम एच. मैस्लो 35–41

- मैस्लो की अभिप्रेरणा विचारधारा : आवश्यकता–क्रमिकता विचारधारा
- शारीरिक आवश्यकताएं
- सुरक्षात्मक आवश्यकताएं
- सामाजिक आवश्यकताएं
- सम्मान आवश्यकताएं
- आत्म–प्रबोधन आवश्यकताएं

5. डगलस मैक्ग्रैगर 42–47

- थ्योरी – X तथा थ्योरी – Y
- मैकग्रेगर, हर्जबर्ग तथा मैस्लो की विचारधाराओ मे सम्बन्ध

6. फ्रेडरिक हर्जबर्ग 48–56

- अभिप्रेरणा का द्वि–कारकी सिद्धान्त
- नकारात्मक और सकारात्मक किटा
- कार्य समृद्धिकरण

- प्रत्यक्ष फीडबैक

इकाई 3 :– Chris Argyris, Rensis Likert, Peter Drucker

7. क्रिस अर्गीरिस 57–65

- संगठनात्मक सिद्धान्त : संयोजन मॉडल
- अपरिपक्वता–परिपक्वता विचारधारा
- संवेदनशील प्रशिक्षण या टी–ग्रुप
- संगठनात्मक परिवर्तन
- थ्योरी – X तथा थ्योरी – Y मे प्रतिमान A तथा B

8. रेन्सिस लिकर्ट 66–76

- पर्यवेक्षण शैलियाँ
- प्रबन्ध प्रणालियाँ 1–4
- संगठनात्मक विकास सुधार
- संगठनात्मक प्रभावकारिता
- लिकिंग–पिन मॉडल

9. पीटर ड्रकर 77–84

- सामान्य प्रबंधन
- सरकार प्रबंधन – एक आलोचना
- पुनःनिर्माण सरकार
- उद्देश्यों द्वारा प्रबंधन
- ज्ञान आधारित संगठन

इकाई 4 :– Karl Marx, Yehezkal Dror, Dwight Waldo

10. कार्ल मार्क्स 85–92

- कार्यात्मक और दुष्प्रकार्यात्मक विचार
- नौकरशाही शोषण के औजार के रूप में
- हीगेल का सार्वभौमिकता का आग्रह
- नौकरशाही की परजीवी भूमिका
- इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या

11.. येहेजकेल ड्रोर 93–101

- नीति–विज्ञान
- नीति–विज्ञान बाधाएँ

12: ड्वाइड वाल्डो 102–108

- प्रशासनिक राज्य
- लोक प्रशासन–इतिहास
- संगठनात्मक सिद्धान्त
- नव लोक प्रशासन
- लोक प्रशासन एक पेशे के रूप में

अभ्यास हेतू प्रश्न 109

अध्याय – 1

जॉर्ज एल्टन मेयो

(GEORGE ELTON MAYO)

''यदि हमारा तकनीकी कौशल हमारे कार्य करने के तरीके में त्वरित और आमूलचूल परिवर्तन लाना चाहता है तो हमें सामाजिक कौशल का विकास करना होगा जो कि इन कार्यों में सन्तुलन कर सके..... हम अपने एक पैर को 20वीं सदी में और एक को 18वीं सदी में रखकर न तो रह सकते हैं और न ही खुशहाल हो सकते हैं।''

जॉर्ज एल्टन मेयो उन प्रमुख प्रशासनिक चिन्तकों में से एक हैं जिनके शोध कार्यों ने लगभग 3 दशकों तक अपना प्रभाव बनाए रखा और औद्योगिक समाजशास्त्र एवं मनोविज्ञान के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। मेयो का नाम हॉथोर्न प्रयोगों के साथ जुड़ा है जो कि 'मानवीय सम्बन्ध विचारधारा' की आधारशिला थे। इसी कारण मेयो को मानवीय सम्बन्ध विचारधारा का जनक माना जाता है। यही नहीं मेयो ने उन अनेक शोधकर्ताओं को भी प्रेरणा दी जिनके कार्यों का प्रभाव प्रबन्ध में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है।

जॉर्ज एल्टन मेयो का जन्म 1880 में एडीलेड (ऑस्ट्रेलिया) में हुआ। आपने एडीलेड विश्वविद्यालय में अध्ययन किया और 1899 में यहीं से तर्कशास्त्र और दर्शनशास्त्र में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की। इसके पश्चात् मेयो ने एडिनबर्ग, स्कॉटलैण्ड में मेडिसिन की पढ़ाई की। इसके पश्चात् वे इंग्लैण्ड और पश्चिमी अफ्रीका गए। 1905 में मेयो वापस ऑस्ट्रेलिया आ गए और फिर उन्होंने मनोविज्ञान में पढ़ाई की। प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान मेयो ने घायल सैनिकों की चिकित्सा करके काफी प्रसिद्धि पाई। इसके बाद वे 1919 में क्वीन्सलैण्ड विश्वविद्यालाय में दर्शनशास्त्र विभाग के अध्यक्ष बना दिए गए। 1922 में मेयो अमेरिका चले गए और पेनीसिल्वानिया विश्वविद्यालय के 'वारटन स्कूल ऑफ फाइनेन्स एण्ड कॉमर्स' के संकाय सदस्य बन गए। 1926 में मेयो हावर्ड विश्वविद्यालय में औद्योगिक अनुसंधान के प्रोफेसर बने। यहाँ के बाद ही मेयो तथा उनके साथियों ने प्रसिद्ध हॉथोर्न प्रयोग किए। मेयो के जीवन की संध्या इंग्लैण्ड में बीती और 1949 में, 69 वर्ष की आयु में मेयो का निधन हो गया।

मेयो ने अनेक पुस्तकें लिखीं और कुछ लेख प्रकाशित करवाए। मेयो की महत्वपूर्ण पुस्तकें व लेख इस प्रकार हैं –

- Democracy and Freedom (1919)
- The Human Problems of an Industrial Civilization (1933)
- The Social Problems of an Industrial Civilization (1945)
- The Political Problems of an Industrial Civilization (1947)
- Mayo's Essays : "What is Monotony?"
  "Changing Methods in Industry"
  "Supervision and What it Means"

मेयो ने अनेक प्रयोग किए जिनमें सबसे प्रसिद्ध हॉथोर्न प्रयोग (Hawthorne Experiments) थे। मेयो के प्रयोगों तथा उनके निष्कर्षों को जानने से पहले उस समय की सामाजिक, आर्थिक और प्रौद्योगिक परिस्थितियों की जानकारी होना आवश्यक है क्योंकि उन्हीं परिस्थितियों ने इन प्रयोगों के लिए रास्ता तैयार किया था।

टेलर ने श्रमिकों को निष्क्रिय प्राणी माना जिनको कि आर्थिक प्रोत्साहन देकर अभिप्रेरित किया जा सकता है। इसके विपरीत और प्रतिक्रियास्वरूप मानवीय सम्बन्ध विचारधारा का विकास हुआ। मेयो तथा उनके साथियों ने

अपने प्रयोगों तथा अध्ययनों में मनोवैज्ञानिक, शारीरिक, आर्थिक आयामों को ध्यान में रखते हुए श्रमिकों के व्यवहारों और उत्पादन क्षमताओं पर ध्यान दिया। मेयो इसे 'क्लीनिकल अप्रोच' कहते हैं। इन्हीं प्रयोगों के पश्चात् औद्योगिक संगठनों में मानवीय तत्त्व को महत्त्व दिया जाने लगा और श्रमिक को मशीन का पुर्जा न मानकर एक जीवन्त प्राणी माना जाने लगा जिसे अनौपचारिक साधनों से भी अभिप्रेरित किया जा सकता है। इस प्रकार हॉथोर्न प्रयोगों ने टेलरवाद की मान्यताओं को झुठला दिया। इस प्रकार वह पृष्ठभूमि स्पष्ट है जिन्होंने मानवीय सम्बन्ध विचारकों को प्रोत्साहित किया।

मेयो के प्रयोग (Mayo's Experiments)

यह बात नहीं है कि मेयो ने केवल हॉथोर्न प्रयोग ही किए। इनके अलावा भी कई अन्य प्रयोगों के साथ मेयो का नाम जुड़ा हुआ है। मेयो के प्रयोगों को हम तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं। प्रथम 1923 में फिलाडेल्फिया की एक टेक्सटाइल मिल में किए गए प्रयोग, दूसरे हॉथोर्न प्रयोग और तीसरे 1943 में किए गए प्रयोग। इसमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रयोग हॉथोर्न प्लान्ट मे किए गए प्रयोग थे।

सर्वप्रथम मेयो के आरम्भिक प्रयोगों को संक्षेप में जान लेना समीचीन होगा। मेयो ने 1923 में फिलाडेल्फिया के निकट एक टेक्सटाइल मिल में अपना शोध कार्य प्रारम्भ किया। उस समय मिल काफी अच्छी स्थिति में थी क्योंकि वह अपने श्रमिकों को काफी अच्छी सुविधाएँ प्रदान कर रही थी और इस कारण वह आदर्श संगठन मानी जाती थी। उस मिल के नियोक्ता काफी खुश थे और काफी मानवीय भी थे परन्तु मिल का अध्यक्ष और कार्मिक निदेशक मिल के दोमुही–बुनाई विभाग (Mule-Spinning Department) में उत्पन्न समस्याओं का सामना कर रहे थे। चूँकि मिल के अच्छे से चलते रहने के लिए आवश्यक था कि मिल का यह विभाग ठीक से चलता रहे। प्रबन्धकों ने कर्मचारियों को लुभाने के लिए काफी योजनाएं चलाईं पर सब व्यर्थ जा रहा था। कुछ लोगों से सलाह–मशविरा किया गया। उनके बताए उपायों को लागू भी किया गया पर कोई फायदा नहीं हुआ। आखिरी उपाय के तौर पर मिल ने यह समस्या हार्वर्ड विश्वविद्यालय को सौंप दी। मेयो उस समय हार्वर्ड विश्वविद्यालय में ही पढ़ाते थे और यह उनका सबसे पहला बड़ा कार्य था जिसे 'प्रथम अन्वेषण' (The First Inquiry) नाम दिया गया। मेयो ने विभाग की समस्या का गहन अध्ययन किया। मेयो ने संरक्षित सहभागी अवलोकन विधि से अध्ययन किया और पाया कि दोमुही–बुनाई विभाग में कार्यरत प्रत्येक कारीगर पैर की तकलीफ से ग्रसित था और उस तकलीफ का कोई तत्काल उपचार भी नहीं था। उस तकलीफ के कारण श्रमिकों द्वारा गलियारे में चलना था। श्रमिकों को विभाग में चलने वाली मशीनों पर नजर रखनी होती थी और प्रत्येक व्यक्ति की निगरानी में 10 से 14 मशीनें थीं। कर्मचारी इससे काफी दुःखी थे। इसके अलावा मेयो ने एक नर्स के जरिए कई और बातें भी जानी। मेयो ने पाया कि मशीनों के शोर–शराबे के कारण कारीगरों के बीच संचार नहीं हो पाता था। साथ ही कर्मचारी इतने थक जाते थे कि शाम को वे सामाजिक कार्यक्रम में भी हिस्सा नहीं ले पाते थे।

मेयो ने स्वयं और नर्स की सहायता से जो सूचनाएँ एकत्र की थीं उनके आधार पर मेयो ने प्रबन्ध से इजाजत प्राप्त करके कर्मचारियों के लिए 'आराम के समय' (Rest Period) की व्यवस्था करके प्रयोग प्रारम्भ किया। मेयो ने सुबह और दोपहर में 10–10 मिनट के दो बार 'आराम के समय' की व्यवस्था की। इससे काफी उत्साहजनक परिणाम आए। धीरे–धीरे अन्य सभी श्रमिकों के लिए भी आराम के समय की व्यवस्था की गई। इससे उदासी के लक्षण गायब हो गए और उत्पादन बढ़ने लगा तथा श्रमिकों का मनोबल ऊँचा हो गया। इस प्रकार शारीरिक थकान समाप्त करने में 'आराम के समय' की व्यवस्था काफी फायदेमन्द हुई। इसके साथ–साथ बोनस की व्यवस्था भी की गई जिसके तहत यदि श्रमिक निर्धारित प्रतिशत से अधिक उत्पादन करते हैं तो उनको उत्पादन आधिक्य के अनुपात में बोनस दिया जाएगा। विश्राम और बोनस की व्यवस्था से श्रमिक काफी खुश थे। पर पर्यवेक्षकों को यह सब पसन्द नहीं आया। उन्होंने श्रमिकों को आराम का समय 'कमाने' का सुझाव दिया जिसके तहत यदि श्रमिक अपना कार्य निश्चित समय में कर लें तो उन्हें आराम करने का समय दिया जाएगा। इस नई

योजना के तहत श्रमिक दिन में 3–4 बार 'विश्राम' प्राप्त करने लगे। यह व्यवस्था कुछ समय तो चलती रही पर वस्तुओं की उच्च माँग को ध्यान में रखते हुए पर्यवेक्षकों ने नई व्यवस्था को समाप्त कर दिया जिसके कारण शीघ्र ही उत्पादन गिर गया और श्रमिक फिर से दुःखी रहने लगे। अब पुनः मेयो और उनके साथियों के साथ बातचीत की गई और मिल के अध्यक्ष ने सभी के लिए पुनः आराम के समय की व्यवस्था करवा दी। इससे निराशा मिट गई, उत्पादन बढ़ा और श्रमिक बोनस कमाने लगे। इस प्रकार मेयो ने अपने पहले ही अध्ययन में समस्या की जाँच करने और उसके उपचार सुझाने में कामयाबी हासिल की। इस सफलता के बाद से ही 'भीड़–परिकल्पना' पर प्रश्न उठने शुरु हो गए।

मेयो के सर्वाधिक प्रसिद्ध अध्ययन 'हॉथोर्न प्रयोगों' (Hawthorne Studies) के नाम से जाने जाते हैं। ये हॉथोर्न प्रयोग ही मानवीय सम्बन्ध विचारधारा की आधारशिला माने जाते हैं। ये प्रयोग मेयो तथा उनके सहयोगियों द्वारा अमेरिका के शिकागो शहर की वेस्टर्न इलेक्ट्रिक कम्पनी के हॉथोर्न प्लांट में 1924 से 1932 के बीच किए गए थे। इन प्रयोगों का उद्देश्य इस बात को जानना था कि यदि संगठन के कर्मचारियों को अच्छी कार्य दशाएँ उपलब्ध कराई जाएँ तो उनके व्यवहार और अभिवृत्तियों पर इनका क्या प्रभाव पड़ता है। श्रमिकों की कार्य–दक्षता और उत्पादकता को प्रभावित करने वाले कारक कौन–से हैं, इसका पता लगाना भी प्रमुख उद्देश्य था। हॉथोर्न प्रयोगों/अध्ययनों में मेयो के सहयोगियों में एफ. रोथलिसबर्जर, डब्ल्यू. डिक्सन, टी. व्हाइटहैड आदि थे। उस समय कम्पनी में लगभ 25 हजार कर्मचारी कार्यरत थे। कम्पनी अपने कर्मचारियों को अच्छी सेवा दशाएँ प्रदान कर रही थीं फिर भी कर्मचारी सन्तुष्ट नहीं थे। कम्पनी में असुरक्षा और तनाव का वातावरण व्याप्त था। प्रबन्धकों ने स्थिति को सुधारने के लिए कर्मचारियों को अधिक सुविधाएँ प्रदान की और कार्य के भौतिक वातावरण में काफी सुधार किए। पर इसके बावजूद कोई सकारात्मक परिणाम नहीं आने पर 1924 में कम्पनी ने 'नेशनल एकेडमी ऑफ साइन्सेज' से मदद माँगी और इस संस्था ने मेयो की अध्यक्षता में अनेक अध्ययन किए। हॉथोर्न प्रयोगों के परिणामों को अनेक पुस्तकों में प्रकाशित करवाया गया जिनमें सबसे महत्त्वपूर्ण थी 1939 में प्रकाशित पुस्तक 'मैनेजमेन्ट एण्ड द वर्कर' (Management and the Worker) जिसके लेखक रोथलिसबर्जर तथा डिक्सन थे।

हॉथोर्न प्रयोग 1924 से 1932 तक चले। इस बीच मेयो तथा उनके सहयोगियों ने अनेक अध्ययन किए जिनको हम निम्न शीर्षकों में बाँटकर अध्ययन करेंगे :–

1. प्रकाश प्रयोग (Illumination Experiment) .

हॉथोर्न प्रयोगों की पहली कड़ी में 'प्रकाश प्रयोग' किए गए। ये प्रयोग 1924 में प्रारम्भ किए गए। इस प्रयोग का मुख्य उद्देश्य इस बात का परीक्षण करना था कि प्रकाश व्यवस्था में परिवर्तन का कर्मचारी की दक्षता और उत्पादकता पर क्या प्रभाव पड़ता है । इस प्रयोग से पहले दक्षता–विशेषज्ञों का यह मानना था कि अधिक प्रकाश होने से उत्पादन बढ़ता है। इस बात का परीक्षण करने के लिए कर्मचारियों के दो समूह चुने गए। एक समूह प्रयोगात्मक या परीक्षणात्मक समूह या जिसको कि प्रकाश की परिवर्तित होती मात्रा के अधीन कार्य करना था तथा दूसरा समूह नियन्त्रित समूह था जिसको प्लांट की सामान्य प्रकाश व्यवस्था में ही कार्य करना था। इस प्रयोग के दौरान जैसे ही प्रकाश बढ़ाया गया वैसे ही पूर्वानुमानित प्रयोगात्मक या परीक्षणात्मक समूह का उत्पादन बढ़ गया। पर आश्चर्यजनक रूप से बिना प्रकाश बढ़ाए ही नियन्त्रित समूह का उत्पादन भी बढ़ गया जिसको कि किसी ने नहीं सोचा था। इस प्रघटना की अलग–अलग व्याख्याएँ बाद में की गई।

1. मानवीय कर्मचारी सम्भवतः पूर्णतया मशीनों के समान नहीं हैं।
2. वेस्टर्न इलेक्ट्रिक कम्पनी के कर्मचारी प्रकाश या प्रकाश की अनुपस्थिति के अलावा भी अन्य चरों (Variables) के प्रति प्रतिक्रिया कर रहे हैं जो कि उन्हें अभिप्रेरित करते हैं।

3. वे कमजोर कार्य दशाओं के बावजूद अधिक उत्पादन कर रहे थे क्योंकि वे जानते थे कि उनको देखा जा रहा है।

मेयो तथा उनके सहयोगी इन प्रारम्भिक नई बातों से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने लगातार कई और प्रयोग किए।

2. 'रिले असैम्बली' टेस्ट रुम प्रयोग

प्रकाश प्रयोगों के परिणाम चौंकाने वाले थे। उन्होंने पाया कि प्रौद्योगिकी और भौतिक परिवर्तनों के साथ–साथ कुछ व्यावहारिक बातों पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए और इसके लिए मेयो और उनके साथियों को कहा गया।

मेयो तथा उनके सहयोगियों ने अपना प्रयोग टेलीफोन के पुर्जे जोड़ने वाली महिला श्रमिकों के समूह के साथ प्रारम्भ किया। इस प्रयोग के दौरान मेयो तथा साथी शोधकर्ताओं ने महिला श्रमिकों की कार्य की दशाओं में सुधार किए जैसे कइ योजनाएँ लागू की गईं। उदाहरण के लिए विश्राम का समय अनुसूचित कर दिया गया, कम्पनी की ओर से दोपहर के भोजन की व्यवस्था की गई और कार्य–सप्ताह को छोटा कर दिया गया। इन सबका परिणाम सकारात्मक हुआ और उत्पादन बढ़ गया। इसके बाद शोधकर्ताओं ने महिला श्रमिकों को प्रदान की जा रही सभी सुविधाएँ समाप्त कर दी और कार्य की दशाएँ पुनः वे ही हो गई जो कि प्रयोग करने से पहले उपलब्ध थीं। इस प्रकार के आमूल–चूल परिवर्तन के कारण यह सोचा गया कि इससे नकारात्मक मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ेगा और महिला श्रमिकों द्वारा किया जा रहा उत्पादन कम हो जाएगा। पर आश्चर्य की बात यह रही कि उत्पादन कम होने के बजाए उत्पादन काफी ऊँचा उछला। ऐसा क्यों हुआ?

इस प्रश्न का उत्तर प्रयोग के उत्पादन सम्बन्धी आयामों अर्थात् भौतिक कार्य दशाओं में परिवर्तन में नहीं बल्कि मानवीय आयामों में खोजा गया। प्रयोगकर्ताओं द्वारा महिला श्रमिकों पर जो ध्यान दिया गया उससे महिला श्रमिकों को लगा कि वे भी कम्पनी का महत्त्वपूर्ण हिस्सा थीं। उन्होंने यह सोचना शुरु किया कि वे एकान्त व्यक्ति (Isolated Individual) नहीं हैं और सिर्फ इसलिए साथ काम नहीं कर रहीं कि वे भौतिक रूप से पास पास थीं। इसके विपरीत वे एक सहयोगी और सम्बद्ध कार्य समूह की सहभागी सदस्य थीं। इस प्रकार जो प्रबन्ध विकसित हो गए थे उनके कारण उनमें लगाव, क्षमता तथा उपलब्धि की भावनाएँ पैदा हो गई। इस प्रकार उनकी ये आवश्यकताएँ जो कार्य स्थल पर कभी भी पूरी नहीं होती थीं अब सन्तुष्ट हो गई थीं। इससे महिला श्रमिकों ने कठोर परिश्रम किया और पहले से अधिक प्रभावशाली ढंग से कार्य किया। इस प्रकार इस प्रयोग से यह तो स्पष्ट हो गया कि कार्य के भौतिक और तकनीकी पहलुओं की तुलना में मानवीय पहलुओं का कर्मचारी के व्यवहार पर अधिक गहरा प्रभाव पड़ता है।

इसके बाद समूह बोनस के प्रभावों को जाँचने सम्बन्धी प्रयोग भी किया गया जिसका परिणाम यह था कि समूह बोनस दिए जाने से कर्मचारियों की उत्पादन क्षमता बढ़ती है। साथ ही 'माइका स्पिलिटिंग ग्रुप प्रयोग' द्वारा भी सम्बद्ध समूह की महत्तता को स्वीकार किया गया। इस प्रयोग ने 'अनौपचारिक समूह' की अवधारणा को महत्त्वपूर्ण बनाया।

3. साक्षात्कार अध्ययन : मानवीय भावनाएँ और अभिवृत्तियाँ

हॉथोर्न प्रयोगों की कड़ी में मानवीय भावनाओं और अभिवृत्तियों को जानने के लिए 1927 से 1932 के बीच साक्षात्कार प्रयोग किए गए। इसके लिए कम्पनी के प्रत्येक विभाग के कुल मिलाकर 21,000 से भी अधिक कर्मचारियों का साक्षात्कार लिया गया। साक्षात्कार प्रयोगों का उद्देश्य शोधकर्ताओं की इस बात को जानने में मदद करना था कि कर्मचारी अपने कार्य, अपनी कार्य दशाओं, अपने पर्यवेक्षकों, अपनी कम्पनी और उन सब बातों में जो उनको परेशान करती हैं तथा किस प्रकार उनकी इन भावनाओं का उनकी उत्पादकता पर प्रभाव पड़ता है, क्या

सोचते हैं। पहले मेयो तथा अन्य शोधकर्ताओं ने संरचित प्रश्न एवं उत्तर प्रकार के साक्षात्कारों का प्रयोग किया जिसमें कि पहले से ही प्रश्न बना लिए जाते थे और उन्हें बारी बारी से कर्मचारियों से पूछा जाता था। पर शोधकर्ताओं ने पाया कि 'संरचित–प्रश्न–उत्तर प्रकार' के साक्षात्कारों से उनको वे सूचनाएँ नहीं मिल रही थीं जो कि वे चाहते थे। इसके विपरीत कर्मचारी बिल्कुल स्वतन्त्र होकर बोलना चाहते थे। इसलिए पूर्व निर्धारित प्रश्नों को त्याग दिया गया और साक्षात्कारदाताओं को यह छूट दे दी गई कि वे जो चाहें पूछ सकते हैं।

इन साक्षात्कारों का कई दृष्टियों से फायदा हुआ और कई महत्त्वपूर्ण बातों का खुलासा हुआ। सर्वप्रथम ये साक्षात्कार नैदानिक (थैरेपेटिक) साबित हए। इनसे कर्मचारियों को यह मौका मिल गया कि वे अपने आपको अभिव्यक्त कर सकें। बहुतों ने यह सोचा कि इस प्रकार के साक्षात्कार कम्पनी द्वारा अब तक किए गए सभी कार्यों में सबसे बढ़िया काम था। इसके परिणामस्वरूप अभिवृत्तियों में व्यापक परिवर्तन आया। कर्मचारियों द्वारा दिए गए बहुत से सुझावों को प्रबन्ध ने क्रियान्वित किया और इससे कर्मचारी यह महसूस करने लगे कि प्रबन्ध ने उनको व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से महत्त्वपूर्ण माना है। अब वे कम्पनी के कार्य परिचालन और भविष्य में भागीदार बन गए थे। दूसरे, मेयो ने पाया कि जब अनौपचारिक समूहों को प्रबन्ध महत्त्व देना शुरु कर देता है तो उत्पादन बढ़ता है। तीसरे, मेयो ने यह भी पया कि जब कर्मचारी यह सोचने लगता है कि उसके लक्ष्य और प्रबन्ध के लक्ष्य विरोधी हैं तो उत्पादकता काफी निम्न स्तरीय रहती है। ऐसा उस समय होता है जब कि कर्मचारियों के कार्यों का कड़ा पर्यवेक्षण किया जाता है तथा जब उनका कार्य व पर्यावरण पर कोई नियन्त्रण नहीं होता है। चौथे, इन प्रयोगों से उन प्रश्नों को सुलझाने में मदद मिली जो प्रबन्धकों को सामन्यतया परेशान करते थे कि क्यों कुछ समूह अधिक उत्पादक होते हैं और कुछ नहीं। इसने प्रबन्धकों को इस बात के लिए भी प्रोत्साहित किया कि कर्मचारियों को अपने कार्य के नियोजन, संगठन और नियन्त्रण में शामिल किया जाए ताकि उनका सकारात्मक सहयोग प्राप्त किया जा सके। पाँचवें, यह महसूस किया गया कि जब तक कर्मचारियों की भावनाओं ओर संवेगों को न समझा जाए तब तक उनकी वास्तविक समस्याओं को नहीं समझा जा सकता। साक्षात्कार के माध्यम से कर्मचारियों को अपनी भावनाएँ, शिकवे–शिकायतें आदि अभिव्यक्त करने का अवसर मिल गया।

4. बैंक वायरिंग अवलोकन प्रयोग

हॉथोर्न प्रयोगों के अन्तिम चरण में 1931–32 में सामूहिक व्यवहार का अध्ययन करने के लिए ये प्रयोग किए गए। इनमें अवलोकन विधि का उपयोग किया गया। अध्ययन के लिए कर्मचारियों का एक समूह चुना गया। इस प्रयोग के अधीन समूह प्रोत्साहन–योजना के तहत मजदूरी का भुगतान किया जाता था और समूह के कुल उत्पादन में अपने हिस्से के अनुसार प्रत्येक कर्मचारी अपना भाग ले लेता था। यह पाया गया कि कर्मचारियों ने उत्पादन के मानक (Standard) तय कर लिए थे जो प्रबन्ध द्वारा निर्धारित लक्ष्य से कम था। इस निर्धारित मानक से कम या ज्यादा उत्पादन की अनुमति समूह नहीं दे सकता था । यद्यपि वे उत्पादन बढ़ा सकते थे पर उन्होंने उत्पादन में एकरूपता रखी। ये कर्मचारी अपने सामाजिक समूह से एकताबद्ध थे तथा अनौपचारिक दबाव का प्रयोग किया जाता था। समूह सुदृढ़ता के लिए निम्न आचार संहिता का इस्तेमाल किया गया।

1. प्रत्येक व्यक्ति को औसतन निर्धारित काम पूरा करने की दर बनाए रखना था। यह दर स्वयं समूह द्वारा तय की गई थी न कि प्रबन्धकों द्वारा जो भी व्यक्ति उस अनौपचारिक ढंग से तय की गई दर से कम काम करता उसे 'चिसलर' (Chiseller) कहा जाता।
2. दूसरा नियम पहले में ही निहित है पर उस पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। नियम यह था कि प्रत्येक व्यक्ति यह ध्यान रखे कि वह समूह द्वारा निश्चित की गई काम की दर से आगे न बढ़े। इस नियम को तोड़ने वाला 'रेट–बस्टर' (Rate-Buster) कहलाता।
3. तीसरा नियम यह था कि कोई भी व्यक्ति प्रबन्धकों के प्रतिनिधि से ऐसी कोई बात न कहे जिससे किसी अन्य सदस्य को हानि पहुँचे। इस नियम को तोड़ने वाला 'स्क्वीलर' (Squealer) या चुगलखोर गिना जाता।

मेयो तथा उनके सहयोगियों द्वारा किया गया यह प्रयोग अनौपचारिक संगठन या सामाजिक संगठन के महत्त्व का प्रतिपादन करता है। बैंक वायरिंग अवलोकन समूहं प्रयोग हॉथोर्न प्रयोगों की अन्तिम कड़ी था।

यद्यपि 1932 के बाद समस्त हॉथोर्न प्रयोग पूर्ण हो चुके थे तथा 1939 में रोथलिंसबर्जर व डिक्सन की पुस्तक 'मैनेजमेन्ट एण्ड द वर्कर' में उनके परिणाम भी प्रकाशित हो चुके थे फिर भी 1943 में मेयो द्वारा किए गए अध्ययन भी संक्षेप में यहाँ जान लेना उचित होगा क्योंकि उनमें हॉथोर्न प्रयोगों के ज्ञान का उपयोग किया गया था। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान एयरक्राफ्ट बनाने वाली तीन फैक्ट्रियों में श्रमिकों की अनुपस्थितिवाद (Absenteecism) का अध्ययन करने के बाद मेयो ने निष्कर्ष निकाला कि इस प्रकार की समस्या को रोका जा सकता है, यदि प्रबन्ध अनौपचारिक समूहों के गठन को प्रोत्साहित करे तथा कर्मचारियों की समस्याओं को मानवीय समझ के आधार पर सुलझाए। प्रबन्ध को चाहिए कि वह उद्योग में मानवीय सम्बन्धों का विकास करे और कर्मचारियों को पहल करने के लिए प्रोत्साहित करे।

हॉथोर्न प्रयोगों के परिणाम तथा प्रभाव (Results and Impact of Howthorne Experiments)

मेयो के हॉथोर्न प्रयोगों का प्रशासनिक विचारधारा के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान है। हॉथोर्न प्रयोगों का प्रभाव लम्बे समय तक देखने को मिलता है और आज भी प्रयोगों के परिणाम प्रासंगिकता रखते हैं। **हॉथोर्न प्रयोगों** को **'मानवीय सम्बन्ध विचारधारा'** की आधारशीला माना जाता है। इन्हीं प्रयोगों के बाद मानवीय सम्बन्धों पर ध्यान दिया जाना प्रारम्भ हुआ। इस प्रकार हॉथोर्न प्रयोगों का सर्वप्रथम परिणाम उद्योग में **'मानवीय तत्त्व'** की स्थापना रहा। अब उद्योग में मानवीय तत्त्व का महत्त्व समझा गया। इन प्रयोगों द्वारा **'भीड़ परिकल्पना'** या **'रैबल हायपोथेसिस'** का खण्डन किया गया। **'रैबल परिकल्पना'** के अन्तर्गत मनुष्य को उन असंगठित लोगों का झुण्ड माना जाता है जो केवल अपने स्वार्थों के लिए ही कार्य करते हैं। टेलर का वैज्ञानिक प्रबन्ध आन्दोलन मनुष्य को इसी दृष्टिकोण से देखता है। **भीड़–परिकल्पना अभिप्रेरणा** का अति संकुचित विचार है। मेयो ने अपने हॉथोर्न अध्ययनों द्वारा यह दर्शाया कि **भीड़ परिकल्पना** वैध नहीं है और इसे उन्होंने **'हर्ड परिकल्पना'** **(Herd Hypothesis)** द्वारा बदला। उन्होंने संगठन में मानवीय तत्त्व के महत्त्व को उजागर किया और दर्शाया कि उत्पादकता श्रमिक की केवल शारीरिक क्षमता पर ही निर्भर नहीं होती। हॉथोर्न प्रयोगों के बाद ही उद्यम में कर्मचारी को मशीन के पुर्जे के स्थान पर 'एक व्यक्ति' की पहचान मिली। मेयो ने यह भी प्रदर्शित किया कि मनुष्य केवल 'आर्थिक प्राणी' नहीं है जो कि आर्थिक तत्त्वों से ही अभिप्रेरित होता हो।

हॉथोर्न प्रयोगों का एक अन्य महत्त्वपूर्ण परिणाम है अनौपचारिक समूहों का महत्त्व । यह स्पष्ट है कि संगठन एक औपचारिक समूह होता है जिसमें भिन्न–भिन्न व्यक्ति अलग–अलग भूमिकाएँ निभाते हैं। मेयो ने पाया कि जब कर्मचारी आपस में सम्बद्ध समूह का निर्माण कर लेते हैं तो वे सन्तुष्टि महसूस करते हैं तथा उत्पादन में बढ़ोतरी होती है। मेयो के रिले असेम्बली टेस्ट रूप प्रयोगों से स्पष्ट हुआ कि उत्पादन वृद्धि में भौतिक और तकनीकी आयामों के साथ–साथ मानवीय आयाम भी अति महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसी प्रकार बैंक वायरिंग अवलोकन समूह प्रयोगों से भी उत्पादन पर अनौपचारिक दबावों का महत्त्व स्पष्ट हो गया। साथ ही मेयो का मानना था कि उद्यम में सामाजिक सम्बन्धों की स्थापना का प्रयास प्रबन्ध द्वारा किया जाना चाहिए। वे उत्पादन को सामाजिक प्रणाली मानते हैं।

अभिप्रेरणा को एक नए दृष्टिकोण से स्पष्ट करना भी हॉथोर्न प्रयोगों का एक महत्त्वपूर्ण परिणाम है। टेलर ने व्यक्ति से अधिक काम लेने के लिए आर्थिक प्रेरणाओं को सर्वाधिक महत्त्व दिया। मेयो का मानना था कि व्यक्ति को केवल आर्थिक प्राणी नहीं माना जाना चाहिए। वह एक सामाजिक प्राणी है। सामाजिक सम्बन्धों को महत्त्व, अनौपचारिक संगठन की स्थापना, कर्मचारी की भावनाओं, उसकी समस्याओं पर ध्यान, उसके सुझावों को महत्त्व देकर भी उसे अधिक कार्य करने के लिए अभिप्रेरित किया जा सकता है। साक्षात्कार द्वारा कर्मचारियों ने अपने मन

की बात प्रबन्ध को बताई और सुझाव दिए। जब प्रबन्धकों ने इन सुझावों को लागू किया तो कर्मचारियों को अपना महत्त्व स्पष्ट हुआ और वे अधिक कार्य करने को प्रवृत्त हुए।

मनोबल का सम्बन्ध भी संगठन के उत्पादन से जोड़ा जा सकता है। मेयो के अनुसार अमेरिकी अद्योगों में कार्य करने का मतलब है अपमान या लज्जा (Humiliation) क्योंकि नैत्यिक, ऊबाऊ और अतिसरलीकृत कार्य लक्ष्यों का, उस पर्यावरण में जिस पर किसी का नियन्त्रण नहीं था, निष्पादन करना पड़ता था। इस पर्यावरण में व्यक्ति की सम्मान और आत्म विकास की आवश्यकताएँ कभी सन्तुष्ट नहीं होती थीं। इस प्रकार आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होने के कारण तनाव, चिन्ता और निराशा पैदा होती थी। मेयो ने इन असाध्यतापूर्ण भावनाओं को 'एनोमी' कहा। यह स्थिति वह थी जिसमें श्रमिक अपने ही पर्यावरण के शिकार थे। मेयो ने अपने प्रयोगों से निष्कर्ष निकाला कि कर्मचारियों के मनोबल को बढ़ाने के लिए उनकी सम्मान और आत्म–विकास की आवश्यकताओं की पूर्ति के अवसर भी प्रदान करने चाहिए।

हॉथोर्न प्रभाव (Hawthorne Effect) का पालन करके भी कर्मचारी को अधिक कार्य करने के लिए अभिप्रेरित किया जा सकता है। हॉथोर्न प्रभाव का आशय यह है कि जब कर्मचारी को इस बात का पता चलता है कि उसका अवलोकन किया जा रहा है तथा प्रबन्धक उनमें रुचि ले रहे हैं तो वे सर्वोत्तम अनुक्रिया (रिस्पोंस) देते हैं तथा अपना अधिकतम समय देने को तैयार हो जाते हैं। इस तरह मेयो प्रबन्धकों को सलाह देते हैं कि कर्मचारियों में उन्हें रुचि रखनी चाहिए और उनके सुझावों को महत्त्व देना चाहिए।

''हॉनोर्थ प्रयोगों का सन्देश तेज और स्पष्ट था– सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कारक कर्मचारी की उत्पादकता निर्धारण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रयोग के परिणाम प्रदर्शित करते हैं कि जब कर्मचारी को मानवीय प्राणी मानकर उस पर अधिक ध्यान दिया जाता है तो इससे उसके आत्म–सम्मान में वृद्धि होती है और वह अधिक उत्पादन के लिए प्रवृत्त होता है।'' संक्षेप में, हॉथोर्न प्रयोगों के निम्न परिणाम उल्लेखनीय हैं–

1. उत्पादकता पर केवल शारीरिक क्षमता और सामर्थ्य का ही प्रभाव नहीं पड़ता अपितु सामाजिक और मनोवैज्ञानिक घटक भी इसे प्रभावित करते हैं।
2. गैर–आर्थिक पुरस्कार और दण्ड कर्मचारी के अभिप्रेरणा और कार्य सन्तुष्टि के स्तर को निर्धारित करते हैं।
3. विशेषीकरण पर कार्य–विभाजन को कठोरता से आधारित मानना अधिक प्रभावी दृष्टिकोण नहीं है।
4. कर्मचारी अनौपचारिक संगठनों के सदस्य के रूप में प्रबन्ध से अनुक्रिया करते हैं न कि व्यक्तिगत रूप से।

एल्टन मेयो और फ्रेडरिक टेलर की तुलना (Comparison between Elton Mayo and Frederick Taylor) : प्रशासनिक चिन्तन में एल्टन मेयो और फ्रेडरिक टेलर दो ऐसे नाम हैं जो कि अमर हैं। दोनों चिन्तकों की विचारधारा ने प्रबन्ध जगत पर अमिट छाप छोड़ी है। टेलर 'वैज्ञानिक प्रबन्ध विचारधारा' के जनक थे तथा मेयो 'मानवीय सम्बन्ध' विचारधारा के जनक। मेयो एक औद्योगिक मनोवैज्ञानिक (Industrial Psgchologist) थे तथा टेलर एक इंजीनियर थे। दोनों की मुख्य रुचि इस बात में थी कि उद्योगों में 'अधिकतम उत्पादन' कैसे हो? इस विषय के सम्बन्ध में दोनों ने अपनी–अपनी विचारधाराओं का प्रतिपादन किया। मेयो का दृष्टिकोण मानव सम्बन्ध–अभिमुखी तथा मनो–सामाजिक (Psycho-Social) था जबकि टेलर का दृष्टिकोण तकनीकी और भौतिकवाद, प्रकृति का था । मेयो 'सामाजिक व्यक्ति' की अवधारणा का समर्थन करते थे तथा उद्योग को एक 'सामाजिक प्रणाली' मानते थे। उनके मत में मनुष्य 'साध्य' (End) है तथा उद्योग में उसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसके विपरीत टेलर ने मानव की प्रकृति के सन्दर्भ में भिन्न दृष्टिकोण अपनाया तथा 'उत्पादन' को अधिक महत्त्व देते हुए 'व्यक्ति' को गौण तत्त्व स्वीकारा। हालांकि यह बात पूरी तरह से सही नहीं मानी जा सकती क्योंकि टेलर के दृष्टिकोण में भी मानवीय तत्त्व थे तथा वे श्रमिकों के लिए कार्य की अच्छी दशाओं का समर्थन करते थे। बहरहाल उनका मत था कि वित्तीय प्रोत्साहनों की मदद से श्रमिक को अधिक कार्य (उत्पादन) करने के लिए अभिप्रेरित किया जा सकता है। मेयो के

विपरीत टेलर ने संगठन के 'अनौपचारिक' पक्षों पर अधिक ध्यान नहीं दिया। वे पूर्ण रूप से तार्किक और वैज्ञानिक तरीकों से श्रमिकों के चयन और प्रशिक्षण के साथ–साथ कार्य के आवंटन में भी तार्किक व वैज्ञानिक विधियों का समर्थन करते थे। इस प्रकार उनका दृष्टिकोण 'यांत्रिक' (Mechanistic) माना जा सकता है। यही कारण है कि कुछ विद्वान् 'वैज्ञानिक प्रबन्ध विचारधारा' की गणना संगठन की 'शास्त्रीय विचारधारा' के रूप में करते हैं। मेयो ने टेलर के समान 'पूर्ण मानसिक क्रान्ति' का समर्थन नहीं किया। हालांकि गम्भीरता से विश्लेषण करें तो हम पाएँगे कि मेयो भी श्रमिकों के सम्बन्ध में प्रबन्धकों का दृष्टिकोण बदलने की सलाह देते हैं और कहते हैं कि प्रबन्धकों को चाहिए कि वे श्रमिकों के प्रति 'मानवीय दृष्टिकोण' रखें। टेलर का दृष्टिकोण उग्र मानसिक क्रान्ति के विचार पर आधारित था। मेयो यह मानते थे कि जब श्रमिक सन्तुष्ट होते हैं तो वे अधिक उत्पादन को प्रेरित होते हैं। इसके विपरीत टेलर मानते थे कि यदि उत्पादन अधिक होगा तो श्रमिकों में सन्तुष्टि बढ़ेगी क्योंकि इससे उनको वित्तीय लाभ होंगे। इस प्रकार टेलर का दर्शन भीड़ परिकल्पना (Rebble Hypothesis) के नजदीक था जबकि मेयो ने इसका खण्डन किया।

यह प्रश्न किया जा सकता है कि 'मानवीय सम्बन्ध विचारधारा' अधिक उपयुक्त है या टेलर का दृष्टिकोण। वस्तुतः दोनों ही दृष्टिकोणों को एक साथ सावधानी और कुशलता के साथ लागू करने से उत्पादकता बढ़ती है। प्रबन्धकों को चाहिए कि वे श्रमिकों के प्रति मानवीय दृष्टिकोण तो रखे ही, साथ ही साथ टेलर द्वारा सुझाए गए उत्पादकता वृद्धि के उपायों को भी सावधानी से लागू करें।

आलोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Evaluation) : हॉथोर्न प्रयोग 'मानवीय सम्बन्ध विचारधारा' की आधारशीला थे। इन प्रयोगों ने एल्टन मेयो को काफी प्रसिद्धि दिलाई और मेयो को 'मानवीय सम्बन्ध विचारधारा' का जनक कहा गया। इस विचारधारा ने जहाँ प्रबन्ध जगत को लम्बे समय तक प्रभावित किया वहीं इसकी काफी आलोचनाएँ भी हुई। डब्ल्यू.एच.व्हाइट मेयो की यह कहकर आलोचना करते हैं कि उन्होंने कर्मचारियों (श्रमिकों) के व्यक्तिगत जीवन में नियोक्ताओं के हस्तक्षेप को प्रोत्साहन किया है।

डेनियल सैल (Daniel Sell), एलेक्स कारे (Alex Carey), डेलवर्ट मिलर तथा विलियम फॉर्म आदि विद्वान् हॉथोर्न प्रयोगों की वैज्ञानिकता तथा पद्धतिशास्त्र (Methodology) का परीक्षण करते हैं। डेनियल सैल मानते हैं कि मेयो और उनके साथियों ने प्रयोगों के दौरान जो मैथ्डोलॉजी अपनाई थी वह दोषपूर्ण थी। एलेक्स कारे यह तर्क देते हैं कि मेयो ने अपने प्रयोगों में 5 या 6 श्रमिकों को प्रतिचयन (Sampling) में लेना और उनके आधार पर कोई सामान्य निष्कर्ष निकालना उचित नहीं जान पड़ता क्योंकि ये विश्वसनीय प्रतिदर्शन (निदर्शन) नहीं माना जा सकता। कारे यह भी मानते हैं कि हॉथोर्न प्रयोगों के दौरान जो आँकड़े एकत्रित किए गए उनकी हॉथोर्न परिणामों से काफी भिन्नता थी। ये आँकड़े तो अभिप्रेरणा की परम्परागत विचारधारा (मौद्रिक प्रोत्साहन) का अधिक समर्थन करने वाले हैं। कारे हॉथोर्न अन्वेषणों की यह कहकर भी आलोचना करते हैं कि उनका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। डेलबर्ट मिलर तथा विलियम फॉर्म (Delbert Miller and William Form) के मत में हॉथोर्न प्रयोगों की विधियाँ दोषपूर्ण थी। पीटर ड्रकर मेयो की आलोचना करते हैं और कहते हैं कि मानव–सम्बन्धवादी विचारकों में आर्थिक आयामों के प्रति जागरुकता की कमी है। व्यापक सामाजिक और प्रौद्योगिकीय व्यवस्थाओं के प्रति भी वे जागरुक नहीं थे। आर.जे. एस. बेकर अपनी पुस्तक 'एडमिनिस्ट्रेटिव थ्योरी एण्ड पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन' में मेयो के विचारों की समीक्षा करते हुए कहते हैं कि मेयो ने संगठन में काम करने वालों के प्रति भावनात्मक लगाव रखा और उनमें काफी नर्मी तथा दिशा का अभाव देखने को मिलता है। साथ ही मेयो की यह भी आलोचना की जाती है कि उन्होंने संगठनात्मक जीवन में 'संघर्ष' के तत्त्व की अति सरल व्याख्या की। बड़ी ही सहजता से उन्होंने मान लिया कि संगठन में सामंजस्य की स्थापना आसान कार्य है, जबकि वास्तव में संगठनात्मक जीवन में सामंजस्य की स्थापना इतनी आसान नहीं है। मेयो पर औपचारिक संगठनों की उपेक्षा तथा सामाजिक सम्बन्धों पर आवश्कता से अधिक बल देने का आरोप भी लगाया जाता है। मेयो का यह मानना कि यदि श्रमिक सन्तुष्ट होता है तो वह अधिक उत्पादन करता

है, भी स्थिति की सरल व्याख्या है क्योंकि उसका उत्पादन करना अनेक अन्य जटिल कारकों से प्रभावित होता है। हॉथोर्न शोधकर्ताओं को 'गाय समाजशास्त्री' (Cow Sociologists) कहकर भी इनकी आलोचना

की जाती है। हेरल्ड शैपर्ड (Harold Sheppard), लोरेन बारिज (Loren Baritz) आदि विद्वान् यूनियन (श्रम–संघ) के सम्बन्ध में मेयो के विचारों का परीक्षण करते हैं। शैपर्ड मेयो पर आरोप लगाते हैं कि उन्होंने स्वतन्त्र समाज में यूनियनों की भूमिका को समझा ही नहीं। ऐसा माना जाता है कि मेयो ने यूनियनों को अपने विचारों में एकीकृत करने का कभी प्रयास ही नहीं किया। यही कारण है कि लॉरेन बारिज आदि विद्वानों ने 'मेयोवादियों' को 'यूनियन–विरोधी' तथा 'प्रबन्ध की ओर झुके हुए' कहा।

उपर्युक्त आलोचनाओं के बावजूद मेयो के प्रयोग प्रशासनिक विचारधारा में 'मील का पत्थर' साबित हुई। उर्विक व ब्रेच लिखते हैं, 'अन्वेषण (हॉथोर्न प्रयोग) किसी भी रूप में प्रबन्ध के व्यवहार की एक पाठ्यपुस्तक से कम नहीं थे।' हेनरी लैण्डसबर्गर तो यहाँ तक कहते हैं कि हॉथोर्न प्रयोगों के बाद ही सर्वाधिक आश्चर्यचकित कर देने वाली अकादमिक लड़ाई सामने आई। हॉथोर्न अध्ययन आज भी मानवीय सम्बन्धों के क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ, सर्वाधिक उन्नत और सर्वाधिक पूर्ण कार्य है। निःसन्देह ये शोध प्रबन्ध को उसकी समस्याओं को सुलझाने में मदद करने के लिए ही किये गये थे।

अध्याय – 2

चेस्टर इरविंग बरनार्ड
(CHESTER IRVING BARNARD)

''बरनार्ड सभी जगह संगठनात्मक–सिद्धान्त के क्षेत्र में पथ–प्रदर्शक योगदान के लिए जाने जाते हैं।''

– ओलिवर विलियमसन

बरनार्ड का जन्म 1886 में अमेरिका में एक गरीब परिवार में हुआ। काम करने के साथ–साथ पढ़ाई जारी रही। माउण्ट हरमन अकादमी से आरम्भिक शिक्षा लेने के बाद बरनार्ड ने 1906 में हावर्ड विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। उन्होंने वहाँ अर्थशास्त्र पढ़ा और रिकार्ड 3 सालों में ही बरनार्ड ने सभी पाठ्यक्रम आवश्यकताएँ पूरी कर लीं। परन्तु बरनार्ड को हावर्ड विश्वविद्यालय से उपाधि प्राप्त नहीं हो सकी और 1909 में आपने विश्वविद्यालय छोड़ दिया। बाद में उन्होंने अमेरिकी टेलीफोन और टेलीग्राम सिस्टम के सांख्यिकी विभाग में प्रवेश लिया। वे क्लर्क बनाए गए। 1927 में बरनार्ड न्यूजी बैल के अध्यक्ष बन गए और अपनी सेवानिवृत्ति तक इसी संगठन में कार्य करते रहे। बरनार्ड 4 वर्षों के लिए 'रोकेफेलर फाउण्डेशन' के अध्यक्ष भी रहे। वे न्यूजर्सी रिलीफ एडमिनिस्ट्रेशन, जो कि एक सरकारी संगठन था, के राज्य स्तरीय डायरेक्टर भी बने। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान बरनार्ड ने यूनाइटेड सर्विस ऑर्गेनाइजेशन में कार्य किया। इस प्रकार अलग–अलग जगहों पर कार्य करने से बरनार्ड को बड़े–बड़े निगमों, सरकारी संगठनों तथा सेवा संगठनों की आन्तरिक कार्य–प्रणाली का परीक्षण करने का मौका मिला। उन्होंने संगठनात्मक गतिविधियों का अवलोकन किया तथा संगठन में कार्यरत लोगों के पारस्परिक सम्बन्धों को देखा। यही कारण है कि बरनार्ड ने पूरी क्षमता के साथ संगठनों पर लिखा।

बरनार्ड विद्वान् लेखक थे। सन् 1938 में उनकी एक किताब प्रकाशित हुई जिसका शीर्षक था 'द फंक्शन्स ऑफ द एक्जेक्यूटिव' (The Functions of the Executive)। यह किताब संगठनात्मक विचारधारा की शास्त्रीय कृति मानी जाती है। लोक–प्रशासन के अनुशासन के विकास चरणों में भी यह किताब काफी महत्त्वपूर्ण साबित हुई। बरनार्ड ने अनेक लेख भी लिखे जो विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। उनके लेख बाद में 1948 में 'ऑर्गेनाइजेशन एण्ड मैनेजमेन्ट' (Organization and Management) शीर्षक से एक पुस्तक में प्रकाशित हुए।

बरनार्ड ने अपनी मृत्यु तक (1961 तक) अपना समय प्रबन्ध के विश्लेषण और उसे समझने में लगाया। ओलिवर शेल्डन, एल्टन मेयो, फौलेट आदि विचारकों ने बरनार्ड को प्रेरणा दी। सक्रिय प्रबन्धक होने के कारण बरनार्ड को अनेक विश्वविद्यालयों में पढ़ाने का मौका मिला जिसने उनकी संगठनात्मक समझ को और गहरा किया। बरनार्ड ने प्रबन्ध के सिद्धान्त और व्यवहार दोनों को काफी प्रभावित किया और साइमन जैसे विचारक को प्रेरणा दी। साइमन सदैव बरनार्ड के ऋणी रहेंगे। इस सम्बन्ध में फ्रैंक शेरवुड कहते हैं, ''यह सर्वश्रेष्ठ प्रकार की स्कॉलरशिप है जिसमें एक व्यक्ति की बुद्धि और अनुभव प्रत्यक्षतः किसी दूसरे को स्थानान्तरित किए गए।'' यही कारण है कि साइमन और बरनार्ड को साथ–साथ जोड़ा जाता है। साइमन ने बरनार्ड के काफी विचार उधार लिए। बरनार्ड के प्रमुख विचारों में हम इस अध्याय में संगठन, कार्यपालिका के कार्य, सत्ता की अवधारणा, नेतृत्व, निर्णयन, प्रोत्साहन आदि पर उनके विचारों का मूल्यांकन करेंगे।

संगठन : एक सहकारी व्यवस्था (Organization : A Cooperative System)

चेस्टर बरनार्ड के संगठनात्मक विश्लेषण पर विचार काफी महत्त्व रखते हैं। बरनार्ड ने संगठन, संगठन और व्यक्ति, संगठन सहकारी व्यवस्था के रूप में, औपचारिक संगठन, अनौपचारिक संगठन आदि विविध आयामों पर काफी कुछ लिखा। 1938 में प्रकाशित उनकी पुस्तक 'द फन्क्शन्स ऑफ दि एक्जीक्यूटिव' बरनार्ड के संगठन सम्बन्धी विचारों को स्पष्ट करती है। इस पुस्तक में संगठन (या कार्यपालिका) के कार्य, प्रक्रिया, आवश्यक समस्याओं, सहकारी व्यवस्था के प्रबन्ध आदि पर उनके व्यक्तिगत अनुभव व अवलोकन पर आधारित सामग्री उपलब्ध है। पुस्तक के लगभग आधे भाग में सहकार और संगठन सम्बन्धी विचारधारा पर बरनार्ड की व्याख्या है। शेष आधे भाग में हर प्रकार के संगठनों में कार्यरत कार्यपालिका के कार्यों तथा कार्यपालिका की सफलता के लिए आवश्यक गुणों की चर्चा की गई है। सत्य ही यह पुस्तक प्रशासनिक साहित्य की अमूल्य धरोहर है।

बरनार्ड संगठन की परिभाषा इस प्रकार करते हैं–

संगठन दो या दो से अधिक व्यक्तियों की सचेत रूप से समन्वित गतिविधियों या कार्यों की एक व्यवस्था है।

स्पष्ट है कि बरनार्ड संगठन को व्यक्तियों की गतिविधियों की समन्वित व्यवस्था के रूप में देखते हैं। इस परिभाषा में बरनार्ड 'व्यवस्था' तथा 'व्यक्तियों' पर अधिक जोर देते हैं। बरनार्ड संगठन की शास्त्रीय विचारधारा के पक्के आलोचक थे तथा उसे अत्यधिक वर्णनात्मक तथा सतही बताकर इसकी कड़ी आलोचना करते हैं। बरनार्ड संगठन को एक 'व्यवस्था' या प्रणाली के रूप में देखते हैं तथा इसमें व्यक्तियों की क्रियाओं को जान–बूझकर समन्वित किया जाता है । इस प्रकार संगठन सहकारी प्रणाली है। बरनार्ड की संगठन की यह परिभाषा सभी प्रकार के संगठनों पर लागू होती है। उनका मत है कि कोई संगठन तभी तक अस्तित्व में रहता है जब तक कि वह निम्न शर्ते पूरी करता रहे –

(1) लोग परस्पर संचार करते रहें : बरनार्ड औपचारिक संगठन के लिए सम्प्रेषण को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व के रूप में स्वीकार करते हैं। संचार से लोगो के विचारों में पारस्परिक आदान–प्रदान होता रहेगा और वे संगठन के उद्देश्यों तथा कार्यक्रमों के बारे में जानते रहेंगे।

(2) सहयोग की इच्छा हो : संगठन के लिए आवश्यक है कि लोगों में सहयोग की इच्छा हो। संगठन के लिए कार्य करने की इच्छा ही संगठन को जन्म देती है।

(3) सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति : संगठन की स्थापना के लिए या उसके अस्तित्व के लिए सभी सदस्यों की संगठन के सामान्य उद्देश्यों की जानकारी होनी चाहिए और उन उद्देश्यों को प्राप्त करने की इच्छा भी होनी चाहिए। बरनार्ड कहते हैं कि, ''वे सभी सामान्य प्रनियम (Principles) जो कि सरल संगठनों को चलाते हैं, वे ही उन जटिल संगठनों के लिए होते हैं जो कि मिश्रित व्यवस्था वाले होते हैं।'' बरनार्ड संगठन को एक 'जीवन्त निकाय' के रूप में देखते हैं और उनकी रुचि संगठन के सतही लक्षणों का अध्ययन करने में न होकर संगठनों की आन्तरिक कार्यप्रणाली को जानने में थी। वे कहते हैं, "संगठनों के सतही लक्षणों के विवरण और विश्लेषण के लिए श्रेष्ठ कार्य किए गए हैं। यह महत्त्वपूर्ण है पर यह ठीक वैसा ही है जैसे कि विवरणात्मक भूगोल जिसमें भौतिकी, रसायनशास्त्र, भू–गर्भशास्त्र तथा जीव विज्ञान न हो।

बरनार्ड का मानना है कि एक संगठन उस पर्यावरण से अलग होता है जिसमें कि वह कार्य करता है। व्यक्ति संगठन को सेवाओं का योगदान देते हैं तथा दो भिन्न–भिन्न तरह की भूमिकाएँ निभाते हैं– एक व्यक्तिगत भूमिका और एक संगठनात्मक भूमिका। संगठन को व्यक्ति द्वारा योगदान की गई सेवाओं को अवश्य पहचानना चाहिए और पुरस्कार व सन्तोष के बीच में एक साम्य (Equilibrium) की स्थापना करनी चाहिए। बरनार्ड स्वयं लिखते हैं कि संगठन की क्षमता का मूल्यांकन इस बात से लगाया जा सकता है कि वह किस हद तक साम्य की स्थापना कर सकता है।

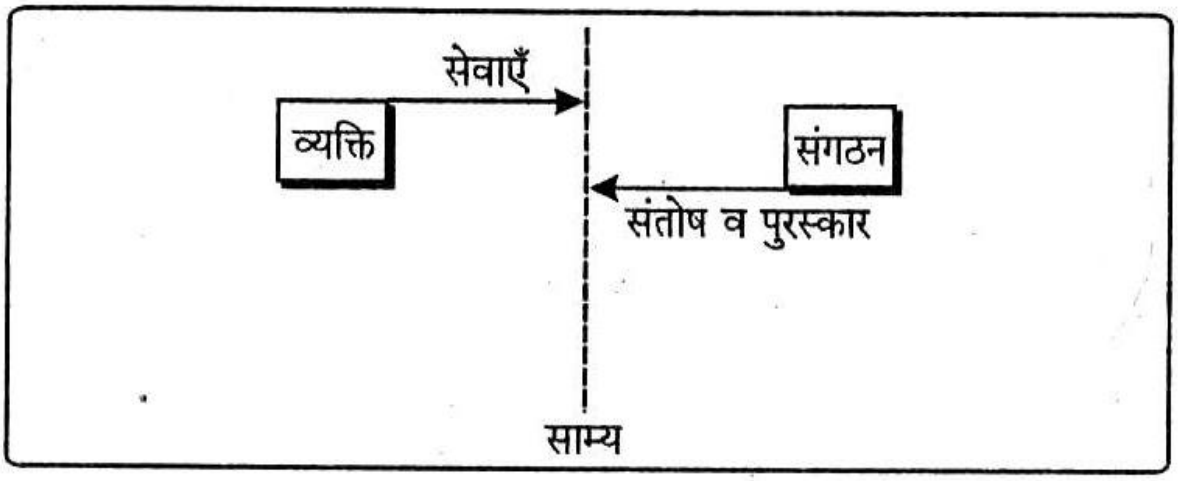

चित्र 1. – बरनार्ड की साम्य विचारधारा

यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि बरनार्ड की साम्य की विचारधारा स्थिर नहीं है। साम्य केवल व्यक्तियों पर ही निर्भर नहीं करता अपितु संगठन और समाज पर भी निर्भर करता है। सामाजिक परिवर्तन और अर्थव्यवस्था के परिवर्तन संगठन में भी परिवर्तन लाते हैं। बरनार्ड के मत में संगठन और पर्यावरण के बीच सम्बन्ध प्रकार्यात्मक होते हैं। बरनार्ड कहते हैं– इस बाह्य समाज में दो बातें हैं– प्रथम है संगठन की प्रभावशीलता जो कि संगठन व व्यक्तियों के बीच अन्तरपरिवर्तन से समझौता करती है। इस प्रकार उल्लेखित तत्त्व बाह्य कारकों के साथ बदल जाते हैं और इसी समय वे अन्तर्निर्भर (Inter-Dependent) होते हैं।

बरनार्ड अपनी संगठन विचारधारा की व्याख्या करते हुए आगे बताते हैं कि संगठन की परम्परागत विचारधारा जो कि आर्थिक प्रोत्साहनों पर बल देती है, उचित नहीं है। वे सन्तुष्टि के बहु–प्रकारों का उल्लेख करते हैं और चार प्रकार के प्रलोभनों को गिनाते हैं– (1) भौतिक प्रलोभन जैसे– धन, चीजें या फिर भौतिक दशाएँ, (2) व्यक्तिगत गैर–भौतिक प्रलोभन जैसे विभेद का अवसर, प्रतिष्ठा, व्यक्तिगत शक्ति आदि, (3) वांछनीय कार्य की भौतिक दशाएँ, तथा (4) आदर्श परिलाभ जैसे– कारीगरी पर गर्व, पर्याप्तता की भावना, परिवार व अन्यों के लिए परार्थी सेवाएँ, संगठन के लिए विश्वास, धार्मिक भावनाएँ आदि। इनके अलावा बरनार्ड कुछ सामान्य प्रोत्साहक कारकों का उल्लेख करते हैं– (1) संघीयता का आकर्षण जिसे बरनार्ड 'सामाजिक संगतता' कहते हैं, (2) कार्य दशाओं की आदतन विधियों और अभिवृत्तियों से अनुकूलन, (3) व्यापक भागीदारी का अवसर, (4) दूसरों के साथ भाईचारे की स्थिति। बरनार्ड का मत है कि सभी प्रकार के व्यक्तियों को सभी स्थानों पर एक समान प्रोत्साहकों से प्रेरित नहीं किया जा सकता। उनके मत में अधिकांश संगठन सभी प्रकार के या पर्याप्त प्रोत्साहक प्रस्तुत ही नहीं कर पाते।

बरनार्ड संगठन और व्यक्तियों के पारस्परिक सम्बन्धों का परीक्षण करते हैं। संगठन का निर्माण व्यक्तियों से ही होता है तथा व्यक्ति ही संगठन को योगदान देते हैं। इसी प्रकार संगठन भी व्यक्ति को पुरस्कार और सन्तुष्टि देकर उस योगदान से साम्य स्थापित करने की कोशिश करता है। संगठन में कार्यरत विभिन्न व्यक्तियों के बीच पारस्परिक अन्तःक्रियाएँ होती रहती हैं जिससे उनके बीच सम्बन्धों की स्थापना हो जाती है। ये अन्तःक्रियाएँ अपने व्यक्तिगत हितों की पूर्ति के लिए होती हैं। ये अन्तःक्रियाएँ संगठन में सतत् रूप से जारी रहती हैं और जब ये व्यवस्थित हो जाती हैं तो इसके परिणामस्वरूप अनौपचारिक संगठन का जन्म होता है। बरनार्ड कहते हैं कि अनौपचारिक संगठन व्यक्तिगत सम्पर्कों तथा अन्तःक्रियाओं का योग तथा व्यक्तियों के सम्बन्धित समूह को कहा जाता है। इस प्रकार के अनौपचारिक संगठन अनन्त, संरचनाहीन तथा आकृतिविहीन होते हैं। यह अनौपचारिक

संगठन औपचारिक संगठन को काफी प्रभावित करता है और इन दोनों में लगातार अन्तःक्रियाएँ होती रहती हैं। अनौपचारिक संगठनों का आकार कई बातों पर निर्भर करता है जैसे संचार की सीमाएँ, उद्देश्यों की जटिलता, तकनीकी दशाएँ, व्यक्तिगत सम्बन्धों की जटिलता आदि। ये अनौपचारिक संगठन स्वयं भी परस्पर सम्बन्धितं होते हैं। इनकी संख्या में बढ़ोतरी होने से समूह के सम्बन्धों में जटिलता भी बढ़ जाती है। ये अनौपचारिक संगठन व्यक्तियों की सोच और क्रियाओं को प्रभावित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। औपचारिक संगठन जहाँ इन्हें व्यवस्था, आकार तथा संगतता प्रदान करते हैं वहीं अनौपचारिक संगठन भी औपचारिक संगठन को महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। ये दोनों प्रकार के संगठन एक–दूसरे पर निर्भर हो जाते हैं। इनके बीच लगातार पारस्परिक क्रिया चलती रहती है। बरनार्ड का मत था कि औपचारिक संगठनों को प्रभावशाली रूप से चलाने के लिए उन्हें अनौपचारिक संगठनों की रचना करनी चाहिए। अनौपचारिक संगठन बरनार्ड के मत में संचार के साधन के रूप में, संगठन में सम्बद्धता (Cohesion) लाने आदि में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। संक्षेप में, बरनार्ड अनौपचारिक संगठन के निम्न कार्य बताते हैं :– संचारात्मक कार्य, सम्बद्धता बनाए रखना, व्यक्तिगत एकता, आत्म–सम्मान तथा स्वतन्त्र चयन की भावनाओं को बनाए रखना, सम्बन्धों की सामाजिक रिक्तता समाप्त करना।

बरनार्ड संगठन में प्रभावशीलता तथा दक्षता के विचार पर भी ध्यान देते हैं। वे प्रभावकारिता या प्रभावशीलता (Effectiveness) तथा दक्षता (Efficiency) में भेद करते हैं और कहते हैं– प्रभावकारिता उस सहकारी उद्देश्य की प्राप्ति से सम्बन्ध रखती है जो कि चरित्र में सामाजिक तथा गैर–व्यक्तिक होता है। दक्षता व्यक्तिगत लक्ष्यों की सन्तुष्टि से सम्बन्ध रखती है और यह चरित्र में व्यक्तिगत होती है। प्रभावकारिता का परीक्षण किसी उद्देश्य या उद्देश्यों की प्राप्ति से सम्बन्धित है और प्रभावकारिता को मापा जा सकता है।

इस प्रकार बरनार्ड संगठन के विविध पहलुओं पर विचार करते हैं और अनौपचारिक संगठनों के महत्त्व का प्रतिपादन करते हैं। सम्भवतः अनौपचारिक संगठनों को उनके द्वारा महत्त्व दिया जाना मेयो तथा हॉथोर्न प्रयोगों का प्रभाव है।

कार्यपालिका के कार्य (The Functions of the Executive)

बरनार्ड ने 1938 में प्रकाशित अपनी शास्त्रीय पुस्तक का शीर्षक 'द फंक्शन्स ऑफ द एक्सक्यूटिव' (The Functions of the Executive) रखा और संगठन में कार्यपालिका या निष्पादन के कार्यों का विशद् विश्लेषण किया। वे कहते हैं कि कार्यपालिका का कार्य संगठन नहीं है बल्कि संगठन के परिचालन को बनाए रखने के लिए विशिष्ट कार्य करना है। वे कहते हैं। बरनार्ड द्वारा कार्यपालिका के निम्न कार्यों का प्रतिपादन किया गया :

(1) संगठनात्मक संचार की व्यवस्था बनाए रखना : बरनार्ड संगठन में संचार व्यवस्था बनाए रखने को कार्यपालिका का महत्त्वपूर्ण कार्य बताते हैं। यह कार्य तीन चरणों में किया जाता है। प्रथम चरण है 'संगठन की योजना' (Scheme of Organization) को स्पष्टतः परिभाषित करना। इस चरण में संगठन की प्रशासनिक संरचना तथा कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों का निर्धारण, शक्तियों का निर्धारण, समन्वय आदि शामिल हैं। दूसरा चरण है 'उचित कर्मचारियों की भर्ती'। कोई प्रशासनिक संरचना तब तक कोई महत्त्व नहीं रखती जब तक कि समुचित मात्रा में कार्मिक न हों क्योंकि निर्णय लेने का कार्य तो कार्मिक ही करते हैं। जो कार्मिक संगठन के लिए भर्ती किए जाते हैं वे विश्वासपात्र होने चाहिए और उनमें कुछ वैयक्तिगत गुण होने चाहिए। ये गुण सामान्य तथा विशिष्ट हो सकते हैं। सामान्य गुणों में शामिल हैं– सतर्कता, हितों की समझ, लचीलापान, सामंजस्य, साहस आदि। विशिष्ट गुण या योग्यताएँ अभिवृत्तियों तथा तकनीकों से सम्बन्ध रखती है। इस प्रकार 'संगठन की योजना' और 'कार्मिकों की व्यवस्था' के चरण आपस में भी घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं। इसी प्रक्रिया का तीसरा चरण है 'अनौपचारिक संगठन की स्थापना करना'। बरनार्ड अनौपचारिक संगठनों के महत्त्व को उजागर करते हुए उसकी स्थापना को आवश्यक बताते हैं। अनौपचारिक संगठन बरनार्ड के मत में निम्न कार्य करते हैं– संचारात्मक कार्य, सम्बद्धता बनाए रखना,

व्यक्तिगत एकता, आत्म–सम्मान तथा स्वतन्त्र चयन की भावनाओं को बनाए रखना तथा सम्बन्धों की सामाजिक रिक्तता को समाप्त करना।

बरनार्ड संचार को संगठन की प्रेरक शक्ति के रूप में देखते हैं। उनके मत में संचार संगठन को एक गतिशील सहकारी व्यवस्था बनाता है। वह कहते हैं–

संचार की उपयुक्त तकनीक के अभाव के कारण संगठन के आधार के रूप में कुछ उद्देश्यों को स्वीकार करने की सम्भावना समाप्त हो जाती है। संचार तकनीक संगठन के आकार और आन्तरिक अर्थव्यवस्था का निर्धारण करती है।

बरनार्ड संचार को सत्ता से जोड़ कर देखते हैं। उनका मत था कि सत्ता का संचार करने से पूर्व आवश्यक है कि अधिकारी और अधीनस्थ के बीच पारस्परिक समझ हो। संगठन में विषयनिष्ठ सत्ता को बनाए रखने के लिए बरनार्ड सात विशिष्ट संचार कारकों का उल्लेख करते हैं :

1. संचार के चैनल (माध्यम) की स्पष्ट जानकारी होनी चाहिए।
2. संगठन के प्रत्येक सदस्य के लिए संचार का एक निश्चित चैनल होना चाहिए।
3. संचार की रेखा जहाँ तक सम्भव हो, सीधी और छोटी होनी चाहिए।
4. संचार की पूर्ण औपचारिक रेखा को सामान्यतया उपयोग में लेना चाहिए।
5. संचार केन्द्रों के रूप में कार्य करने वाले व्यक्ति समर्थ होने चाहिए।
6. जब संगठन कार्य कर रहा हो तो संचार की रेखा में कोई रुकावट नहीं आनी चाहिए।
7. हर संचार प्राधिकृत (ओथेन्टिक) होना चाहिए।

इस तरह संगठन में संचार व्यवस्था बनाए रखना कार्यपालिका का प्रथम कार्य है।

2. व्यक्तियों से आवश्यक कार्य–सेवाएँ प्राप्त करना : बरनार्ड कार्यपालिका का दूसरा कार्य उन लोगों से आवश्यक सेवाएँ प्राप्त करना बताते हैं जो संगठन में कार्य करते हैं। इसके लिए कार्यपालिका को दो कार्य करने होते हैं– प्रथम कार्य है, लोगों को संगठन की सहकारी सम्बन्ध व्यवस्था में लाना और दूसरा कार्य है, सम्बन्धों की व्यवस्था में आ जाने के बाद कर्मचारियों से आवश्यक सेवाएँ प्राप्त करना। इसके लिए प्रलोभनों तथा प्रोत्साहनों की व्यवस्था की जाती है। मनोबल को बनाए रखना, प्रेरणाओं, प्रोत्साहकों, पर्यवेक्षण, नियन्त्रण, शिक्षण, प्रशिक्षण आदि भी इस कार्य हेतु आवश्यक हैं। कहने का आशय यह है कि संगठन केवल व्यक्तियों का एकत्रीकरण ही नहीं है बल्कि प्रत्येक व्यक्ति का आवश्यक कार्य और भूमिका होती है और कार्यपालिका का कार्य संगठन के संचालन के लिए उसमें कार्यरत व्यक्तियों से सेवाएँ प्राप्त करना है।

3. **संगठन के प्रयोजन व उद्देश्यों का निर्धारण :** बरनार्ड कार्यपालिका का तीसरा कार्य संगठन के प्रयोजन (Purpose) तथा उद्देश्यों के निर्धारण को बताते हैं। कोई भी संगठन निरुद्देश्यीय नहीं हो सकता। इसकी स्थापना किसी प्रयोजन की पूर्ति और उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए की जाती है। कार्यपालिका का कार्य इनका निर्धारण है । संगठन के उद्देश्य बिल्कुल स्पष्ट होने चाहिए तथा उनको संगठन के प्रत्येक व्यक्ति द्वारा स्वीकारा जाना चाहिए। संगठन के उद्देश्य सामाजिक, आर्थिक या अन्य हो सकते हैं। साथ ही आवश्यकता पड़ने पर संगठन के उद्देश्यों की पुनर्परिभाषा भी आवश्यक हो जाती है। यह उल्लेखनीय है कि प्रयोजन का निर्धारण और परिभाषीकरण व्यापक रूप से वितरित कार्य होता है और उसका केवल सामान्य भाग ही कार्यपालिका से जुड़ा होता है। प्रयोजन के निर्धारण और पुनर्परिभाषिकरण के लिए संचार, कल्पना, अनुभव और विवेचना की संवेदनशील व्यवस्थाओं की आवश्यकता होती है। बरनार्ड के मत में कार्यपालिका के ये कार्य एक 'सावयवी समग्र' (ऑर्गेनिक होल) के तत्त्व हैं और उनके संयोजन से संगठन बनता है।

प्राधिकार : मिथक और यथार्थता (Authority : Myth and Reality)

बरनार्ड का संगठनात्मक विचारधाराओं को एक अन्य अति–महत्त्वपूर्ण योगदान उनकी सत्ता की विचारधारा (Theory of Authority) है। सत्ता पर बरनार्ड के विचार मौलिक और गम्भीर प्रकृति के हैं। बरनार्ड सत्ता को परिभाषित करते हुए लिखते हैं – सत्ता औपचारिक संगठन में संचार (आदेश) का वह गुण है जिसके कारण संगठनों को योगदान करने वाले अथवा सदस्य उसे स्वीकार करते हैं। यह उस क्रिया को शासित करती है जो सदस्य योगदान करता है।

सामान्यतया यह माना जाता है कि सत्ता की उत्पत्ति संगठन के शीर्ष पर होती है और यह ऊपर से नीचे की ओर प्रवाहित होती है। बरनार्ड ही पहले व्यक्ति थे जिन्होंने इस विचारधारा का प्रतिपादन किया कि सत्ता अधीनस्थों की स्वीकृत्ति अथवा सहमति पर निर्भर करती है। वह कहते हैं– यदि कोई निर्देशित करने वाला संचार उस व्यक्ति द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है जिसको कि सम्बोधित करते हुए वह प्रसारित किया जाता है तो इसका अर्थ है वह संचार सत्ता है या सत्ता की स्थापना की जाती है। यही क्रिया का आधार बनता है। इस प्रकार के संचार की अवज्ञा का अर्थ होगा कि उसने सत्ता को अस्वीकार कर दिया है।

बरनार्ड उन चार परिस्थितियों का उल्लेख करते हैं जिनके एक साथ पाए जाने के कारण ही संगठन का कोई व्यक्ति सत्ता को स्वीकार करता है या करेगा।

1. यदि वह संचार को समझ सकता है : बरनार्ड कहते हैं कि संगठनों में अधिकांश संचार सामान्य और अस्पष्ट होते हैं इसलिए अधिकांश समय इन आदेशों की व्याख्या, पुनर्व्याख्या में ही व्यतीत हो जाता है। कहने का आशय यही है कि जब दिया गया आदेश या संचार व्यक्ति समझ लेता है तभी वह उसे स्वीकार करता है और यही सत्ता कहलाता है।
2. संगठन के प्रयोजन से कोई असंगतता न हो :– यदि संगठन में दिया गया आदेश या संचार संगठन के उद्देश्यों से कोई भी असंगतता रखता है तो सदस्य उसे स्वीकार नहीं करते हैं और इस प्रकार वह आदेश या संचार सत्ता नहीं बन पाएगा। यदि आदेश या संचार संगठन के उद्देश्यों से संगतता (Consistency) रखता है तो ही सदस्य उसे स्वीकार करता है और सत्ता की स्थापना होती है।
3. यदि वह व्यक्तिगत हितों के अनुरूप हो : कोई भी व्यक्ति उस आदेश को शायद ही स्वीकार करता है जिससे कि उसके व्यक्तिगत हितों को हानि पहुँचने की सम्भावना हो। अतः वही आदेश व्यक्ति स्वीकार करता है जो उसके हितों के अनुकूल होता है और इस प्रकार सत्ता की स्थापना होती है।
4. यदि वह शारीरिक व मानसिक रूप से आज्ञा मानने में समर्थ हो : यदि व्यक्ति आदेश का पालन करने की क्षमता ही नहीं रखता तो उस आदेश की सामान्यतया अवज्ञा हो जाती है। इसलिए बरनार्ड सुझाते हैं कि आदेश व्यक्ति की शारीरिक और मानसिक क्षमता/योग्यता से परे नहीं होना चाहिए। संक्षेप में, इन शर्तों को इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है।

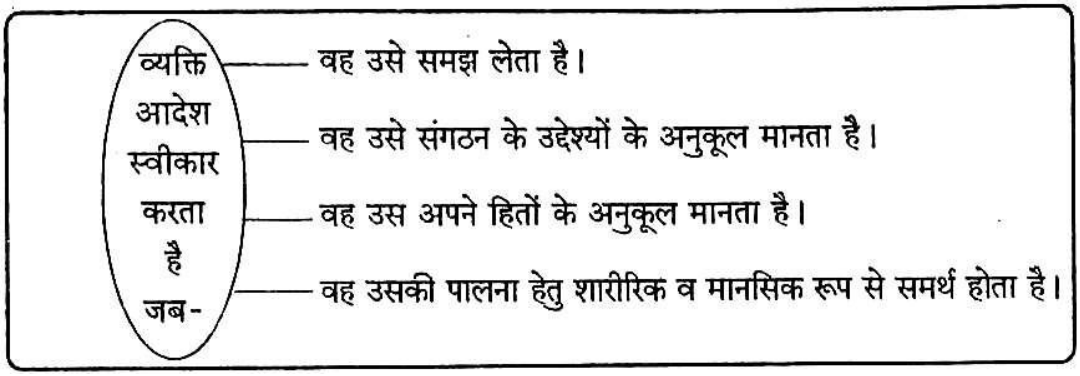

चित्र–2 : बरनार्ड : 'व्यक्ति आदेश को कब स्वीकार करता है?

बरनार्ड कहते हैं कि सत्ता का निर्धारण अधीनस्थों में निहित होता है न कि उच्चाधिकारियों में। ऐसा इस कारण होता है क्योंकि व्यक्ति निम्न तीन स्थितियों के अधीन निर्णय करते हैं–

1. जो आदेश संगठन में जारी किए जाते हैं वे ऊपर वर्णित चारों शर्तों को पूरा करते हैं।
2. जो आदेश 'उदासीनता के क्षेत्र' (Zone of Indifference) में से होकर गुजरते हैं।
3. जब समूह व्यक्ति को प्रभावित करता है और इससे 'उदासीनता के क्षेत्र' में स्थिरता आती है।

इन तीनों शर्तों में से 'उदासीनता के क्षेत्र' की शर्त का बरनार्ड विशेष रूप से उल्लेख करते हैं। सत्ता की स्वीकृति के सन्दर्भ में 'उदासीनता के क्षेत्र' की अवधारणा बरनार्ड का मौलिक विचार है। बरनार्ड कहते हैं– ''यदि कार्य के लिए आदेशों को उनकी स्वीकृति के हिसाब से व्यवस्थित किया जाए तो एक समूह ऐसा होगा जिनको स्पष्टतया कभी भी स्वीकार नहीं किया जाता अर्थात् उनकी कभी पालना नहीं होती। दूसरे समूह के आदेश निरपेक्षता की रेखा के आस–पास होते हैं और इनको शायद ही स्वीकार या अस्वीकार किया जाता है और आदेशों के तीसरे समूह को बिना किसी सवाल के स्वीकार कर लिया जाता है। यह अन्तिम समूह ही उदासीनता के क्षेत्र से सम्बन्धित होता है।'' बरनार्ड के मत में वही आदेश स्वीकार किए जाते हैं जो उदासीनता के क्षेत्र से सम्बन्धित होते हैं। व्यक्ति इस क्षेत्र से गुजरने वाले आदेशों के प्रति उदासीन होते हैं और यह जानने का प्रयास नहीं करते कि आदेश क्या है। वे उन्हें सहज रूप से स्वीकार कर लेते हैं। 'उदासीनता का क्षेत्र' व्यापक भी हो सकता है और संकुचित भी। यह उस मात्रा पर निर्भर करता है जबकि व्यक्ति द्वारा किए गए 'बलिदान' तथा 'बोझ' से संगठन द्वारा उसे प्रदान किए गए प्रलोभनों की मात्रा अधिक होती है। जब प्रलोभन या प्रोत्साहन अधिक होते हैं तो उन आदेशों की संख्या बढ़ जाती है जिन्हें कि व्यक्ति स्वीकार करता है और इस प्रकार 'उदासीनता का क्षेत्र' व्यापक हो जाता है। संगठन में वे ही आदेश जारी किए जाने चाहिए जो इसी क्षेत्र में आते हों। संगठन में वह उच्चाधिकारी अधिक खुशी की स्थिति में होता है जिसके अधीनस्थों का यह क्षेत्र व्यापक होता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि संगठन की दक्षता इस बात से प्रभावित होती है कि किस हद तक उसके व्यक्ति आदेशों से सहमति रखते हैं। इस तरह सत्ता की प्रभावकारिता अधीनस्थों पर आधारित होती है न कि उच्चाधिकारियों पर। फिर भी, सत्ता की इस 'कल्पना' (Fiction) को कि सत्ता ऊपर से नीचे की ओर प्रवाहित होती है, बनाए रखा जाता है। सत्ता की कल्पना व्यक्तियों के बीच इस मान्यता को स्थापित करती है कि वे अपने उच्चाधिकारियों के आदेशों को इसलिए स्वीकार करते हैं क्योंकि इन आदेशों का कोई मुद्दा नहीं बनाना चाहते हैं। बरनार्ड के मत में यदि काई व्यक्ति जान बूझकर अपने कर्तव्य नहीं निभाता है तो वह शत्रुतापूर्ण कार्य होता है और कोई भी संगठन इसकी इजाजत नहीं दे सकता तथा समुचित दण्ड देकर प्रतिक्रिया करता है। संगठन को लड़खड़ाता हुआ छोड़ा जाना कभी भी सहन नहीं किया जा सकता।

नेतृत्व (Leadership)

चेस्टर बरनार्ड के अनुसार, "नेतृत्व का आशय व्यक्ति के व्यवहार के उस गुण से है जिसके द्वारा अन्य लोगों को संगठित प्रयासों से सम्बन्धित कार्य करने में मार्गदर्शन करता है। बरनार्ड का कहना है कि जनसंख्या की तुलना में नेताओं का अनुपात अत्यधिक बढ़ गया है। वे कहते हैं, ''सचमुच मैंने ऐसा कोई नेता कभी नहीं देखा जो सचमुच रीति से या बुद्धिमत्तापूर्वक यह बता सकता हो कि वह नेता बनने योग्य क्यों है और न मुझे उस नेता के अनुयायियों का ही कोई ऐसा कथन मिला है जिसमें उन्होंने यह प्रकट किया हो कि वे नेता का अनुसरण क्यों करते हैं। अर्थात् बरनार्ड नेतृत्व की परिभाषा की कठिनाई को दर्शाने का प्रयास करते हैं। बरनार्ड कहते हैं कि कार्यकारी नेता को चुनते समय तकनीकी दक्षता को अधिक महत्त्व नहीं दिया जाना चाहिए।

वे संकुचित विशेषीकरण को अस्वीकार करते हैं। उनके मत में कार्यकारी नेता द्वारा निम्न चार प्रकार की गलतियों के करने की सम्भावना होती है :

1. संगठन के जीवन की अर्थव्यवस्था का अति सरलीकरण,
2. अनौपचारिक संगठन की वास्तविकता और उसकी आवश्यकता का सम्मान नहीं करना,
3. सत्ता की वस्तुनिष्ठ और व्यक्तिनिष्ठ आयामों पर जोर देने का प्रतिलोम करना, तथा
4. उत्तरदायित्व के साथ नैतिकता की उलझन।

बरनार्ड नेता के निम्न चार कार्यों का उल्लेख करते हैं

1. नेता का प्रथम कार्य संगठन के उद्देश्यों का निर्धारण है। अनुयायी इन्हीं उद्देश्यों का अनुसरण करते हैं।
2. नेता का दूसरा कार्य साधनों की व्यवस्था करना है। कोई भी लक्ष्य बिना साधनों के प्राप्त नहीं किया जा सकता।
3. नेता का तीसरा कार्य क्रिया के उपकरणों पर नियन्त्रण स्थापित करना है।
4. नेता का चौथा कार्य क्रिया में समन्वय की स्थापना करना है।

बरनार्ड नेता के आवश्यक गुणों की सूची बनाते हैं। उनके मत में नेता में निम्न गुण होने चाहिए – जीवन शक्ति और सहनशीलता, निर्णय लेने की क्षमता, प्रोत्साहित करने की क्षमता, उत्तरदायित्व और बौद्धिक क्षमता।

ये गुण महत्त्व के क्रमानुसार हैं। बुद्धि की सीमाओं पर बरनार्ड के विचार मनोरंजक हैं। वे आज की इस प्रवृति को दोषपूर्ण मानते हैं कि सत्ताधारियों का चुनाव करते समय बौद्धिक उपलब्धियों पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। वे कहते हैं :

नेतृत्व के लिए अत्यधिक बुद्धि व्यर्थ होती है यदि वह मामलों में शीघ्र निर्णय नहीं कर पाती। इसीलिए अधिकांश लोग अविवेक के शिकार होते हैं। अतः प्रोत्साहन देते समय यह अवश्य ही ध्यान में रहना चाहिए कि उत्तरदायित्व एक नैतिक भावना प्रधान स्थिति होती है।

बरनार्ड ने निष्पादकों के लिए आवश्यक बातों का मार्मिक विश्लेषण किया है और इन आवश्यकताओं के विकास की निम्न रीतियाँ सुझाई हैं :

1. विस्तृत हितों, व्यापक विचार और समझ की आवश्यकता :– सामान्य शिक्षा की ऐसी पद्धति द्वारा यह क्षमता विकसित की जा सकती है एवं इसमें निष्पादक की आत्म–शिक्षा भी शामिल की जानी चाहिए। बरनार्ड तो यहाँ तक कहते हैं कि निष्पादकों को एक दिन का अवकाश दिया जाना चाहिए ताकि उस दिन वे अपने ज्ञान को झाड़–पोंछकर सामान्य ज्ञान के विस्तृत चरागाह में हरी–ताजी घास का रसास्वादन कर सकें।
2. श्रेष्ठ बौद्धिक क्षमताओं का विकास किया जाना चाहिए। यह सम्भवतः औपचारिक शिक्षा तथा प्रशिक्षण पर आधारित होता है।
3. निष्पादन के लिए इस समझ की आवश्यकता का प्रथम महत्त्व है कि वह मानवीय सम्बन्धों का ज्ञान रखे क्योंकि मानव सम्बन्ध ही प्रबन्धकीय कर्मचारियों और सार्वजनिक तथा राजनीतिक सम्बन्धों का सार है और अधिकांश विज्ञान, प्रौद्योगिकी, कानून या वित्त की अपेक्षा मानव सम्बन्ध ही निष्पादकीय कार्यों के क्षेत्र हैं।
4. मानवीय मामलों में अनुनय का महत्त्व : प्रशासनिक नेतृत्व का सार मुख्यतः अनुनय है न कि समादेश।

बरनार्ड कहते हैं कि, ''नेतृत्व की योग्यता में सामान्य तथा विशिष्ट ज्ञान सम्मिलित है। औपचारिक प्रक्रियाओं के लिए इस बौद्धिक योग्यता में एक विशेष प्रकार की प्रारम्भिक प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।'' बरनार्ड ज्ञान और कौशल में से कौशल को अधिक महत्त्व देते हैं। उनके मत में कौशल वह प्रभावशील व्यवहार है जिसके द्वारा यथार्थ का असीम जटिलताओं के साथ समुचित समायोजन स्थापित किया जाता है और यह समायोजन अनुभव या प्रज्ञा पर अधिकतम निर्भर होता है। बरनार्ड नेतृत्व के नैतिक पहलू पर भी जोर देते हैं और सुझाते हैं कि निम्न स्तरीय नैतिकता से नेतृत्व अधिक समय तक नहीं रह सकता।

निर्णय–निर्माण (Decision-making)

निर्णय निर्माण प्रक्रिया में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान करने वाले विद्वानों में एक नाम चेस्टर बरनार्ड का भी है। निर्णय पर उनके सर्वप्रथम विचार 1936 में दिए गए उनके एक व्याख्यान में देखने को मिलते हैं जो बाद में 'दि फन्क्शन्स ऑफ दि एक्जीक्यूटिव' पुस्तक में विवेचित किए गए। बरनार्ड व्यक्तिगत और संगठनात्मक निर्णयों में भेद करते हैं। निर्णय न लेना भी बरनार्ड निर्णय ही मानते हैं। उनके मत में निर्णय लेने के समय 'अवसरवादिता' के सिद्धान्त को ध्यान में रखना चाहिए। बरनार्ड कहते हैं : व्यक्तियों के कार्यों को कुछ प्रनियमों में विभेदित किया जा सकता है जैसे वे जो कि सचेतना, जोड़–बाकी (परिगणना) तथा सोच–विचार के परिणाम होते हैं और जो अर्द्ध सचेतना, स्वचालित, उत्तरदायित्व के परिणाम होते हैं। इस प्रकार कोई भी यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि निर्णय निर्माण तार्किक और गैर तार्किक सोच का मिश्रण है। निर्णयन के क्षेत्र में बरनार्ड साइमन के अग्रणी रहे।

प्रोत्साहन (Incentives)

बरनार्ड अपने योगदान–सन्तुष्टि मॉडल में दर्शाते हैं कि व्यक्ति संगठन को योगदान देता है तथा बदले में संगठन व्यक्ति को सन्तुष्टि सहित अन्य प्रोत्साहन उपलब्ध कराता है। व्यक्ति तभी योगदान करता है जब कि संगठन उसके लिए पर्याप्त प्रोत्साहनों (Incentives) की व्यवस्था करता है। वे भौतिक प्रोत्साहनों के सामर्थ्य से सहमत नहीं हैं। वे कहते हैं :

कार्मिकों को प्रेरित करने के लिए जीवित रहने के लिए आवश्यक न्यूनतम भौतिक पुरस्कारों से ऊपर गैर–भौतिक प्रकृति के प्रोत्साहनों की अधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। सहकारी प्रयास के लिए यह आवश्यक है। वाणिज्यिक संगठनों के विकास में भौतिक पुरस्कारों की तुलना में अधिक महत्त्वपूर्ण निम्न बातें हैं– विभेद का अवसर, प्रतिष्ठा, व्यक्तिगत शक्ति, प्रभुत्व वाली पद स्थिति की प्राप्ति।

कहने का आशय यह है कि बरनार्ड भौतिक प्रोत्साहनों से अधिक महत्त्वपूर्ण गैर भौतिक प्रोत्साहनों को मानते हैं। वे अपनी अभिप्रेरणा की विचारधारा का विकास निम्न चार आधारभूत तत्त्वों के अनुसार करते हैं :

- प्रथम तत्त्व है सहयोग करने की इच्छा। यह संगठन के लिए आधारभूत आवश्यकता है।
- दूसरा तत्त्व है कि व्यक्ति को अपनी व्यक्तिगत वरीयताओं (Preferences) का समर्पण कर देना चाहिए।
- दिया गया आदेश कर्मचारी के 'उदासीनता के क्षेत्र' के भीतर होना चाहिए।
- प्रोत्साहन और प्रेरणा ही यह निर्धारित करते हैं कि उदासीनता का क्षेत्र कितना विस्तृत होगा। सहयोग करने की इच्छा भौतिक और गैर–भौतिक (अभौतिक) प्रोत्साहनों पर निर्भर करती है।

बरनार्ड ने निम्न प्रोत्साहनों की पहचान की :

1. भौतिक प्रोत्साहन जैसे – धन।
2. 2 अभौतिक प्रोत्साहन :– विभेद का अवसर, प्रतिष्ठा, व्यक्तिगत शक्ति, प्रभुत्व वाला पद आदि।
3. 3 वांछनीय कार्य की भौतिक दशाएँ।
4. 4 आदर्श परिलाभ।

मूल्यांकन (Evaluation) : प्रशासनिक विचारधारा के विकास में बरनार्ड का योगदान काफी विशिष्टता रखता है। उनके विचारों की गम्भीरता और मौलिकता के कारण उनकी गणना श्रेष्ठ प्रशासनिक विचारकों में की जाती है। 'दि फन्क्शन्स ऑफ दि एक्जीक्यूटिव' उनकी सर्वश्रेष्ठ कृति है जिसका प्रशासनिक साहित्य में उच्च स्थान है।

बरनार्ड के विचारों की भी काफी आलोचानाएँ हुई हैं। कैनथ एन्ड्रयूज जिन्होंने बरनार्ड की पुस्तक की 'प्रस्तावना' लिखी थी, भी बरनार्ड की पुस्तक की निम्न कमियाँ बताते हैं प्रस्तुतीकरण की अमूर्तता, उदाहरणों की कमी और उनकी नीरसता तथा कठिन शैली। बरनार्ड की सहकारी व्यवस्था के रूप में संगठन की विचारधारा की आलोचना यह कहकर की जाती है कि संगठन में हर समय और हर स्थिति में 'सहकारी व्यवस्था' नहीं रह सकती। नेतृत्व के लिए बौद्धिक गुणों को कम करके आंकना भी बरनार्ड की कमजोरी रही। 'उदासीनता का क्षेत्र' इतनी आसानी से निर्धारित नहीं किया जा सकता जैसा प्रयास बरनार्ड ने किया है। नाइल्स के मत में बरनार्ड के विचार केवल पश्चिमी दृश्य में ही ठीक से लागू हो सकते हैं।

इन आलोचनाओं के बावजूद बरनार्ड का योगदान सदैव मार्गदर्शन करता रहेगा। उनके मौलिक विचारों ने संगठन को एक नवीन दिशा प्रदान की है।

अध्याय – 3

हरबर्ट ए. साइमर्न
(HERBERT A. SIMON)

''अपनी पुस्तक (एडमिनिस्ट्रेटिव बिहेवियर) में प्रोफेसर साइमन औपचारिक संगठन और प्रशासन के सामाजिक विज्ञान को महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। उनका उद्देश्य.....उपकरणों का एक सेट– अवधारणाओं और शब्दावली का सेट– बनाना है जो कि किसी संगठन का वर्णन करने के लिए उपयुक्त हो और उस रास्ते का वर्णन करना है जिसके द्वारा एक प्रशासनिक संगठन कार्य करता है। उनका कार्य हर प्रकार के संगठनों के प्रशासनिक व्यवहार का वर्णन करने के लिए उपयोगी है।'' –चेस्टर बरनार्ड

हरबर्ट साइमन का जन्म सन् 1916 में विन्सकोसिन संयुक्त राज्य अमेरिका में हुआ। 1936 में ग्रेजुएशन करने के बाद साइमन को 1943 में डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त हुई। 1965 में साइमन पिट्सबर्ग की कार्नेजी–मेलन यूनिवर्सिटी में कम्प्यूटर विज्ञान और मनोविज्ञान के प्रोफेसर बने। येल विश्वविद्यालय ने साइमन को डी.एससी. की मानद उपाधि प्रदान की। साइमन को 1978 का अर्थशास्त्र का नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ। 2001 में साइमन का निधन हो गया। साइमन ने अनेक पुस्तकें लिखीं और कई लेख प्रकाशित करवाए। प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं – Administrative Behaviour (1947), Public Administration (Co-author) (1950), Models of Man : Social and Rational (1954), Organizations (1958) (Co-authorship), The Shape of Automation (1960), The New Science of Management Decisions (1960), Sciences of Artificial (1969), Human Problems Solving (1972), Models of Discovery (1977), Models of Thought (1979 and 1989), Models of Bounded Rationality (1982), Reasons in Human Affairs (1983)

इन पुस्तकों में महत्त्वपूर्ण व प्रसिद्ध पुस्तक 1947 में प्रकाशित 'एडमिनिस्ट्रेटिव बिहेवियर' (Administrative Behaviour) है। यह पुस्तक इतनी महत्त्वपूर्ण बन गई कि लगभग बारह अलग–अलग भाषाओं में इसका अनुवाद किया जा चुका है। 1947 के बाद से लगातार पुस्तक प्रकाशित होती रही है। इस पुस्तक का तीसरा संस्करण 1976 में प्रकाशित हुआ जिसका शीर्षक था, 'एडमिनिस्ट्रेटिव बिहेवियर' : ए स्टडी ऑफ डिसिजन–मैकिंग प्रोसेसेज इन 'एडमिनिस्ट्रेटिव ऑर्गेनाइजेशन'। पुस्तक की अन्तर्वस्तु इस प्रकार है :

अध्याय	शीर्षक
पहला	निर्णय–निर्माण और प्रशासनिक संगठन
दूसरा	प्रशासनिक सिद्धान्त की कुछ समस्याएँ
तीसरा	निर्णय–निर्माण में तथ्य और मूल्य
चौथा	प्रशासनिक व्यवहार में तार्किकता
पाँचवाँ	प्रशासनिक निर्णयों का मनोविज्ञान
छठा	संगठन का साम्य
सातवाँ	प्राधिकार की भूमिका
आठवाँ	संचार
नवाँ	दक्षता की कसौटी

दसवाँ	निष्ठाएँ और संगठनात्मक पहचान
ग्यारहवाँ	संगठन की एनॉटामी
परिशिष्ट : भाग 1 का	प्रशासनिक विज्ञान क्या है?
बारहवाँ	संगठनात्मक लक्ष्य की अवधारणा पर
तेरहवाँ	सूचना प्रसंस्करण प्रौद्योगिकी का भविष्य
चौदहवाँ	संगठनात्मक डिजाइन पर सूचना–प्रौद्योगिकी को लागू करना
पन्द्रहवाँ	चयनित विचार : कार्यपालिकाओं की पहचान (डीरबार्न के साथ)
सोलहवाँ	एक संगठन का जन्म
सत्रहवाँ	व्यापार स्कूल : संगठन डिजाइन में एक समस्या

निर्णय–निर्माण प्रक्रिया : निर्णयन में तार्किकता तथा निर्णय–निर्माण मॉडल (Decision-making Process : Rationality in Decision-making and Model of Decision-making)

हरबर्ट साइमन का सबसे श्रेष्ठ योगदान प्रशासनिक संगठन में निर्णय–निर्माण प्रक्रिया का विशद् विश्लेषण है। साइमन ने अपनी विभिन्न रचनाओं में निर्णय–निर्माण प्रक्रिया पर अपने विचार प्रकट किए हैं। वे निर्णय–निर्माण प्रक्रिया के विविध चरणों, निर्णयन में तथ्य और मूल्य, निर्णयन में तार्किकता, निर्णय–निर्माण मॉडल, प्रशासनिक मानव (सैटिसफिसिंग मानव), निर्णयन की तकनीकें आदि विविध पहलुओं पर ध्यान देते हैं। साइमन निर्णय–प्रक्रिया को प्रबन्ध का पर्यायवाची मानते हैं। उनके मत में ''निर्णयन निर्माण प्रशासन का हृदय है।'' साइमन कहते हैं : यह उल्लेखनीय है कि प्रशासनिक प्रक्रियाएँ निर्णयात्मक प्रक्रियाएँ होती हैं।

साइमन कहते हैं कि संगठन व्यक्तियों से उनकी कुछ निर्णयात्मक स्वायत्तता ले लेता है और इसके बदले में संगठनात्मक निर्णय–निर्माण प्रक्रिया प्रतिस्थापित कर दी जाती है। जो निर्णय संगठन व्यक्तियों के लिए लेता है उनका सम्बन्ध सामान्यतया निम्न बातों से होता है :

1. उसके कार्यों को स्पष्ट करना अर्थात् उसके कर्तव्यों के सामान्य क्षेत्र और प्रकृति का निर्धारण करना।
2. सत्ता आवंटित करना अर्थात् यह निर्धारित करना कि संगठन में वे कौन होंगे जो आगे के निर्णयों के लिए शक्ति रखेंगे।
3. अन्य सीमाएँ तय करना।

साइमन कहते हैं कि :

.....हर निर्णय में दो प्रकार के तत्त्व निहित होते हैं, जिनको क्रमशः 'तथ्यात्मक' और 'मूल्य' तत्त्व कहा जाता है।

वे कहते है कि 'तथ्यात्मक' और 'मूल्य' तत्त्वों में अन्तर समझना प्रशासन के लिए एक आधारभूत आवश्यकता है। यह हमें सबसे पहले इस बात को समझने की ओर ले जाता है कि आखिर 'सही' प्रशासनिक निर्णय से क्या आशय है। दूसरे यह उस अन्तर को स्पष्ट करता है जो सामान्यतया प्रशासन के साहित्य में नीति प्रश्नों और प्रशासनिक प्रश्नों के बीच किया जाता है। तथ्यात्मक कथन (Propositions) साइमन के अनुसार अवलोकनीय विश्व के बारे में कथन (Statements) होते हैं। तथ्यात्मक कथन का परीक्षण किया जा सकता है कि क्या वे सही हैं या गलत। निर्णय तथ्यात्मक कथनों से कुछ अधिक होते हैं। संक्षेप में, वे नैतिक (एथिकल) और तथ्यात्मक सामग्री युक्त होते हैं। तथ्य जहाँ 'क्या है' को स्पष्ट करते हैं वहीं 'मूल्य' वरीयता दर्शाते हैं और 'अच्छा', 'बुरा' आदि नैतिक बातों से जुड़ जाते हैं। साइमन निर्णय को इन तथ्यात्मक और मूल्य तत्त्वों का ही योग मानते हैं।

निर्णय–निर्माण प्रक्रिया के चरणों का उल्लेख करते हुए साइमन इसे तीन चरणों में बाँटते हैंः –आसूचना क्रिया (Intelligence Activity), डिजाइन क्रिया (Design Activity), चयन क्रिया (Choice Activity),

आसूचना क्रिया निर्णय प्रक्रिया का प्रथम चरण है और इस चरण में निर्णय के अवसरों की तलाश की जाती है। निर्णय कब लिया जाए और कहाँ लिया जाए आदि का निर्धारण भी इसी चरण में किया जाता है। समस्या के बारे में समुचित समझ का विकास इसी चरण में किया जाता है। निर्णय के उचित वातावरण की तलाश भी इसी चरण में की जाती है। निर्णय प्रक्रिया का दूसरा चरण डिजाइन क्रिया कहलाता है। इस चरण में कार्य की सम्भावित क्रियाविधियों को खोजा जाता है तथा उनका विकास किया जाता है। डिजाइन क्रिया निर्णय प्रक्रिया का मध्यवर्ती चरण है अतः इस स्तर तक पहुँचते–पहुँचते व्यक्ति सम्भावित विकल्पों की भी थोड़ी जानकारी प्राप्त कर लेता है। तीसरा चरण जिसे साइमन चयन क्रिया कहता है, में कार्य की विभिन्न क्रिया विधियों के विकल्पों में से किसी एक को चुन लिया जाता है। साइमन इन तीनों चरणों के पश्चात् निर्णय के क्रियान्वयन को भी महत्त्वपूर्ण क्रिया मानते हैं । निर्णयन की आसूचना क्रिया, डिजाइन क्रिया की ओर बढ़ती है और डिजाइन क्रिया, चयन क्रिया की ओर। ये तीनों क्रियाएँ परस्पर जुड़ी होती हैं तथा जटिल होती हैं। ये तीनों चरण किसी समस्या समाधान की प्रक्रिया जैसे ही हैं –

समस्या क्या है? – आसूचना क्रिया

समस्या के विकल्प क्या है? – डिजाइन क्रिया

सर्वश्रेष्ठ विकल्प कौन–सा है? – चयन क्रिया

साइमन दो प्रकार के निर्णय बताते हैं। कार्यक्रमित निर्णय (Programmed) तथा अकार्यक्रमित निर्णय (Non-programmed)। साइमन कार्यक्रमित और अकार्यक्रमित निर्णयों को पैमाने के एक–एक छोर पर रखते हैं। एक छोर पर कार्यक्रमित निर्णय होते है तथा दूसरे छोर पर अकार्यक्रमित। शेष निर्णय इस स्पैक्ट्रम के बीच में होते हैं। वे निर्णय कार्यक्रमित होते हैं जो नैत्यिक प्रकृति के होते हैं तथा संगठन में जिनकी पुनरावृत्ति होती रहती है। इस प्रकार के निर्णय लेने की प्रक्रिया पूर्व निर्धारित होती है। इसके विपरीत वे निर्णय अकार्यक्रमित होते हैं जो नवीन, असंरचित तथा आकस्मिक प्रकृति के होते हैं। इन निर्णयों को लेने के लिए कोई पूर्व निर्धारित प्रक्रिया नहीं हो सकती। साइमन कहते हैं कि कार्यक्रमित और अकार्यक्रमित निर्णयों में समस्याओं के समाधान के लिए अलग–अलग तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। निर्णयन की तकनीकों में साइमन ने निम्न तकनीकों को शामिल किया है :

निर्णयों के प्रकार	निर्णयन तकनीकें	
	परम्परागत	आधुनिक
➢ कार्यक्रमित निर्णय	1. आदत 2. क्लैरिकल रूटीन, मानक परिचालन विधियाँ 3. संगठनात्मक संरचना, सामान्य अपेक्षाएँ, उप–लक्ष्यों की प्रणाली सुपरिभाषित संचार चैनल	1. ऑपरेशन रिसर्च, गणितीय विश्लेषण मॉडल, कम्प्यूटर सिमुलेशन 2. इलैक्ट्रोनिक डैटा प्रोसैसिंग
➢ अकार्यक्रमित निर्णय	1. फैसला (जजमेंट), अन्तप्रज्ञा, तथा सृजनात्मकता। 2. अंगूठे का नियम 3. कार्यकारी काा चुनाव व प्रशिक्षण	समस्या, समाधान की तकनीकें– 1. मानव निर्णय निर्माणकर्त्ताओं को प्रशिक्षण 2. ह्यूरिस्टिक कम्प्यूटर कार्यक्रमों का निर्माण

साइमन निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में तार्किकता या विवेकशीलता (Rationality) की विस्तार से विवेचना करते हैं। साइमन निर्णय–निर्माण में तार्किकता की वकालत करते हैं। एक निर्णय इस स्थिति में तार्किक कहा जाता है जबकि वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उपयुक्त साधनों का चयन किया जाए। साइमन कहते हैं : तथ्य और मूल्य, जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है साधनों और साध्यों (Means and Ends) से जुड़े होते हैं। निर्णय प्रक्रिया में उन विकल्पों को चुना जाता है जो कि वांछित/साध्यों की प्राप्ति के लिए उपयुक्त साधन माने जाते हैं। ...तार्किकता का सम्बन्ध इसी प्रकार की साधन–साध्य श्रृंखला (चेन) के निर्माण से है।

साइमन के अनुसार साधन–साध्य विश्लेषण करते समय निम्न बातों पर अवश्य ध्यान दिया जाए :

1. विशिष्ट व्यवहार विकल्पों के चयन से जो साध्य प्राप्त किए जाते हैं वे प्रायः अपूर्ण और असत्य वर्णित होते हैं।
2. वास्तविक स्थिति में साधनों को साध्यों से अलग किया जाना असम्भव है।
3. साधन–साध्य तकनीक के कारण निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में समय तत्त्व की भूमिका धुंधली हो गई है।

साइमन निर्णय प्रक्रिया में तार्किकता के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख करते हैं :

वैषयिक तार्किकता (Objective Rationality) : एक निर्णय वैषयिक रूप से तार्किक हो सकता है यदि यह एक निर्धारित स्थिति में निश्चित मूल्यों को अधिकतम करने का सही व्यवहार होता है।

व्यक्तिनिष्ठ तार्किकता (Subjective Rationality) : एक निर्णय व्यक्तिनिष्ठ हो सकता है यदि व्यक्ति के ज्ञान के अनुसार उपलब्धि बढ़े।

सचेत तार्किकता (Conscious Rationality) : एक निर्णय सचेतक तार्किक हो सकता है जबकि साधन व साध्य का समायोजन एक सचेतन (Conscious) प्रक्रिया हो।

जान–बूझकर स्थापित तार्किकता (Delibcrate Rationality) : एक निर्णय उस समय तक जान–बूझकर स्थापित तार्किक हो सकता है जबकि साधन और साध्यों के बीच सामंजस्य की स्थापना जान–बूझकर (Deliberately) की जाए।

संगठनात्मक तार्किकता (Organisational Rationality) : एक निर्णय उस समय संगठनात्मक रूप से तार्किक हो सकता है जब कि यह संगठन के लक्ष्यों की ओर अभिमुख हो।

व्यक्तिगत तार्किकता (Personal Rationality) : एक निर्णय उस समय व्यक्तिक्त रूप से तार्किक होता है जबकि यह व्यक्तिगत लक्ष्यों की ओर अभिमुखिता रखता हो।

साइमन का विचार था कि कोई भी निर्णय पूर्णतः तार्किक नहीं हो सकता। वे पूर्ण तार्किकता के विचार का खण्डन करते हैं और उसके स्थान पर 'मर्यादित तार्किकता' या 'सीमित तार्किकता' (Bounded Rationality) के विचार का प्रतिपादन करते हैं। उनके मत में न तो कोई मानवीय व्यवहार पूर्णतः तार्किक हो सकता है और न ही वह पूर्णतः अतार्किक होता है। साइमन के मत में व्यक्ति की तार्किकता 'मर्यादित' होती है। साइमन पूर्ण तार्किकता के स्थान पर 'Satisficing' विचार रखते हैं जो 'Satisfiction' व 'Sufficing' से मिलकर बना होता है जिनके क्रमशः अर्थ 'सन्तोष' और 'पर्याप्त' होते हैं। तार्किकता की सीमाओं का उल्लेख करते हुए साइमन निम्न सीमाएँ बताते हैं :

ज्ञान की अपूर्णता : साइमन के अनुसार तार्किकता के लिए प्रत्येक विकल्प के परिणामों के पूर्ण ज्ञान की आवश्यकता होती है। एक व्यक्ति अपने चारों ओर की स्थितियों के बारे में खण्डित ज्ञान ही रखता है। इस प्रकार ज्ञान के अभाव में पूर्ण तार्किकता सम्भव नहीं है।

पूर्वानुमान की कठिनाई : पूर्वानुमान की कठिनाई पूर्ण तार्किकता की दूसरी सीमा है। साइमन के मत में यह सम्भव नहीं है कि व्यक्ति प्रत्येक विकल्प के परिणाम का सही सही पूर्वानुमान कर ले। इसकी अनुपस्थिति में कोई भी निर्णय पूर्ण रूप से तार्किक नहीं हो सकता।

जैविकीय कठिनाइयाँ : चूँकि प्रत्येक विकल्प के भिन्न–भिन्न परिणाम होते हैं और प्रत्येक परिणाम का मूल्यांकन व्यक्ति के लिए सम्भव नहीं है । ये जैविकीय समस्याएँ निर्णय की पूर्ण तार्किकता को सीमित कर देती है।

इस प्रकार साइमन के मत में पूर्ण तार्किकता की अपनी सीमाएँ होती हैं। उनके मत में संगठन में व्यक्ति सदैव 'अनुकूलतम' समाधानों को खोजने का प्रयास करते हैं परन्तु 'मर्यादित तार्किकता' के कारण उनको पर्याप्त रूप से ठीक–ठाक समाधान से ही सन्तुष्ट होना पड़ता है। बहुत–सी बाधाओं के कारण ही ऐसा होता है।

साइमन निर्णय–प्रक्रिया के 'प्रशासनिक–मानव मॉडल' या 'मर्यादित–तार्किकता मॉडल' की विवेचना करते हैं साइमन का 'प्रशासनिक–मानव मॉडल' 'सैटिसफिसिंग मॉडल' भी कहलाता है। इस मॉडल के अनुसार संगठन में व्यक्ति निर्णय लेते समय पूर्ण रूप से तार्किक नहीं हो सकता। यद्यपि व्यक्ति सर्वश्रेष्ठ विकल्प की खोज करना चाहता है आर्थिक मनुष्य से विपरीत प्रशासनिक मानव मर्यादित तार्किकता के कारण ठीक–ठाक निर्णय से ही सन्तुष्ट हो जाता है।

साइमन 'प्रशासनिक व्यक्ति' के व्यवहार की निम्न विशेषताएँ बताते हैं:

1. विकल्पों का चयन करते समय प्रशासनिक व्यक्ति पर्याप्त रूप से ठीक–ठाक या सन्तोषजनक से ही सन्तुष्ट हो जाता है।
2. वह मानता है कि जिस संसार को वह देख रहा है वह वास्तविक संसार का भयानक रूप से सरलीकृत मॉडल है। वह इस सरलता से सन्तुष्ट भी हो जाता है।
3. चूँकि वह उच्चतम करने के बजाय ही सन्तुष्ट हो जाता है इसलिए वह सभी सम्भावित व्यवहारीय विकल्पों को निर्धारित किए ही अपना चयन कर लेता है।
4. चूँकि वह संसार को एक खाली संसार मानता है इसलिए वह 'अंगूठे के नियम' या 'व्यापार की अटकलों' या 'आदतों के बलों' के आधार पर ही निर्णय लेने के योग्य होता है।

साइमन कहते हैं : आर्थिक मानव सभी उपलब्ध विकल्पों में से सर्वश्रेष्ठ का चयन करके 'उच्चतम' प्राप्त करता है, उसका चचेरा भाई, प्रशासनिक मानव पर्याप्त रूप से ठीक–ठाक से ही सन्तुष्ट हो जाता है। ....आर्थिक मानव 'वास्तविक संसार' से सम्बन्ध रखता है। प्रशासनिक मानव मानता है कि संसार, जो वह देखता है, वह भयानक मॉडल है जो कि सर चकरा देने वाले व परेशान करने वाली विशेषताओं का मॉडल होता है जो कि वास्तविक संसार का निर्माण करता है। साइमन के 'प्रशासनिक–मानव मॉडल' के निम्न चरण हैं :

1. लक्ष्य निर्धारित करना या जिस समस्या का समाधान करना है उसको स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाता है। सुपरिभाषित समस्या का समाधान अधिक ठीक ढंग से किया जाना सम्भव है।
2. दूसरे चरण में निर्णयकर्ता अभिलाषा के स्तर का निर्धारण करता है।
3. 'ह्यूरिस्टिक' विधि का प्रयोग करते हुए एक आशाजनक विकल्प की खोज का प्रयास तीसरा चरण है।
4. यदि कोई व्यावहारिक विकल्प नहीं मिलता हो तो अभिलाषा के स्तर का समायोजन किया जाता है और नए विकल्पों की खोज की जाती है।
5. व्यावहारिक विकल्प की खोज करने के पश्चात् इसकी स्वीकार्यता या अस्वीकार्यता का मूल्यांकन किया जाता है।
6. यदि खोजा गया विकल्प अस्वीकार्य हो तो फिर नए सिरे से नए विकल्प की खोज की जाती है।
7. यदि खोजा गया विकल्प स्वीकार्य हो तो समाधान को क्रियान्वित किया जाता है।

8. भविष्य में इससे मिलते–जुलते मामलों में इसके क्रियान्वयन के अनुभव के आधार पर अभिलाषा के स्तर को उच्च या निम्न करने की आवश्यकता होती है।

रेखाचित्र के रूप में साइमन के इस 'प्रशासनिक–मानव' मॉडल को इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है :

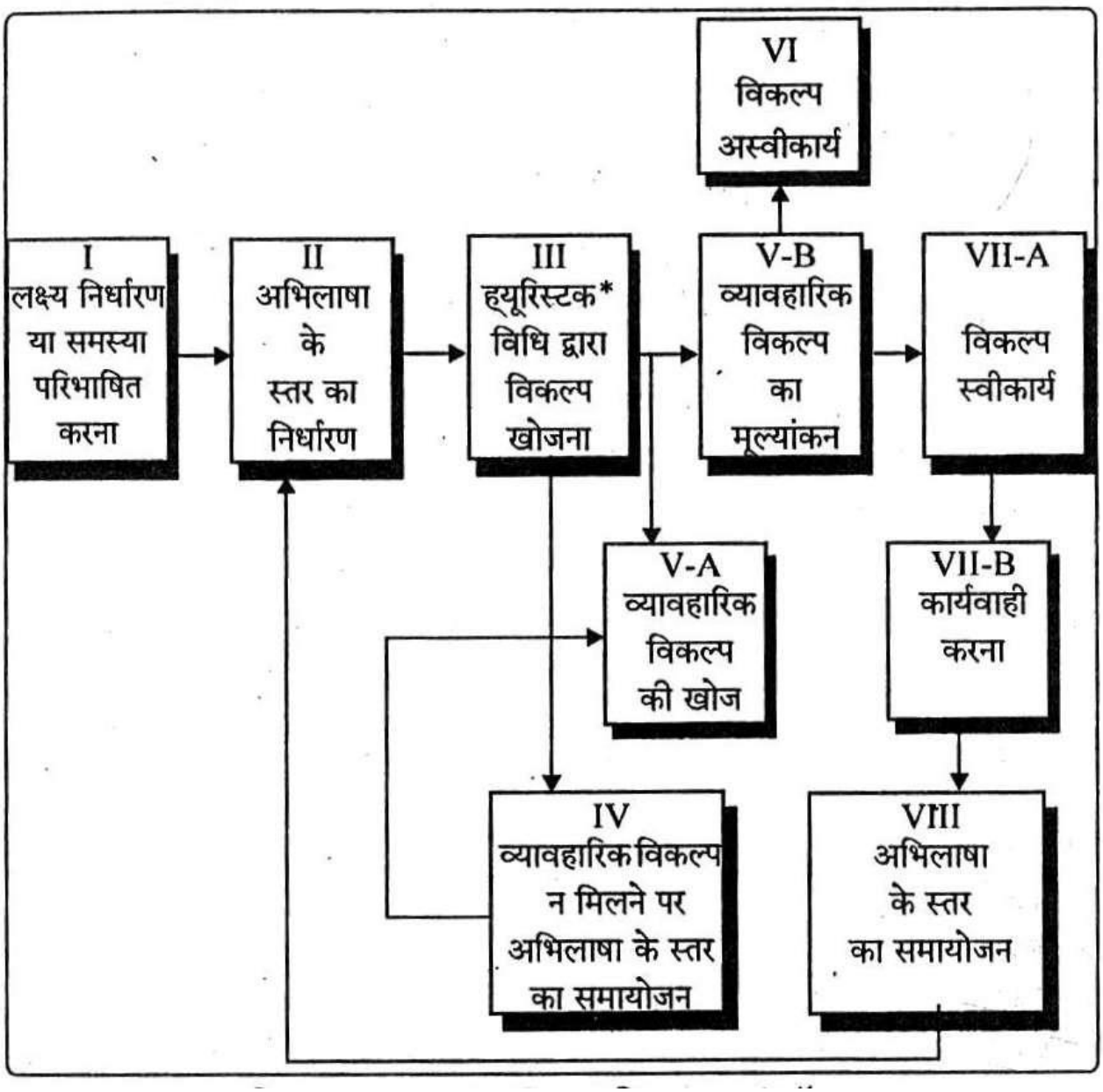

चित्र–1 : साइमन का 'प्रशासनिक–मानव' मॉडल

ह्यूरिस्टिक विधि : ह्यूरिस्टिक विधि साइमन के निर्णय प्रक्रिया मॉडल के लिए आवश्यक है। यह वह नियम है जो सन्तोषजनक वैकल्पिक साधनों को उत्पन्न करने की उच्च सम्भावना वाले क्षेत्रों की खोज का मार्गदर्शन करता है। इस विधि में अतीत का अनुभव काम आता है। इसे 'निर्णयात्मक–छोटे–रास्ते' (Judgmental Short-cuts) भी कहा जा सकता है।

इस प्रकार साइमन प्रशासनिक संगठन में निर्णय प्रक्रिया का गहन विश्लेषण करते हैं। उनके इस क्षेत्र में मार्गदर्शक योगदान के लिए उनको 1978 का अर्थशास्त्र का नोबल पुरस्कार दिया गया। यह हम सभी के लिए गर्व का विषय है।

प्रशासनिक सिद्धान्त : कुछ समस्याएँ (Administrative Theory : Some Problems)

हरबर्ट साइमन लोक–प्रशासन के सिद्धान्तों के कटु आलोचक थे। वे प्रशासन के प्रनियमों (Principles) की आलोचना अपनी पुस्तक 'प्रशासनिक व्यवहार' के दूसरे अध्याय में करते हैं जिसका शीर्षक है 'प्रशासनिक सिद्धान्त' (Theory) की कुछ समस्याएँ।

P.A.R. (पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन रिव्यू) में प्रकाशित अपने लेख 'दी प्रोवर्ब्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' में इन प्रनियमों की आलोचना करते हैं। साइमन कहते हैं :

आज के प्रशासन के प्रनियमों की यह घातक कमजोरी है कि वे कहावतों (प्रोवर्ब्स) की भाँति युग्मों में पाए जाते हैं। हर एक प्रनियम के विरोधाभास वाला समान रूप से सत्य और स्वीकार्य प्रनियम हम पा सकते हैं।

साइमन प्रशासन के साहित्य में सामान्य रूप से स्वीकार किए गए निम्न सिद्धान्तों का उल्लेख करते हैं :

1. समूह के बीच कार्य–लक्ष्य का विशेषीकरण प्रशासनिक दक्षता में वृद्धि करता है।
2. सत्ता के निर्धारित पदसोपान में समूह के सदस्यों को व्यवस्थित कर देने से प्रशासनिक दक्षता में वृद्धि होती है।
3. थोड़ी संख्या वाले पदसोपान में किसी भी बिन्दु पर नियन्त्रण के विस्तार (या क्षेत्र) को सीमित करके प्रशासनिक दक्षता बढ़ाई जा सकती है।
4. प्रशासनिक दक्षता बढ़ जाती है जब नियन्त्रण के प्रयोजन से कर्मचारियों का समूही करण निम्न आधारों पर किया जाए– (1) प्रयोजन, (2) प्रक्रिया, (3) व्यक्ति, तथा (4) स्थान ।

साइमन इन सभी सिद्धान्तों का बारी–बारी से परीक्षण करते हैं और इनमें अन्तर्निहित कमियों, इनकी अस्पष्टता तथा बहुअर्थ प्रकृति का उल्लेख करते हैं। साइमन सबसे पहले 'विशेषीकरण' के प्रनियम या सिद्धान्त को लेते हैं। वे मानते है कि ऐसा माना जाता है कि विशेषीकरण में वृद्धि से प्रशासनिक दक्षता (Administrative Efficiency) बढ़ती है। पर क्या उसका अर्थ यह है कि विशेषीकरण में की गई कोई भी वृद्धि दक्षता बढ़ाती है? वे उदाहरण देकर समझाते हैं कि विशेषीकरण का सिद्धान्त यह नहीं बताता कि ये 'स्थान' के आधार पर किया जाए या फिर 'कार्य' के आधार पर। विशेषीकरण दो विकल्पों में से किसी एक को चुनने में हमारी मदद नहीं करता है।

साइमन फिर लिखते हैं : ऐसा लगता है कि विशेषीकरण के सिद्धान्त की सादगी धोखे से भरी हुई सादगी (Deceptive Simplicity) है– ऐसी सादगी जो आधारभूत अस्पष्टता को छिपा लेती है।

विशेषीकरण के पश्चात् साइमन 'आदेश की एकता' के सिद्धान्त का परीक्षण करते हैं। साइमन इसका परीक्षण करने से पूर्व सत्ता की अवधारणा को स्पष्ट करना उचित समझते हैं। वे कहते हैं कि एक अधीनस्थ ने सत्ता स्वीकार कर ली तो इसका अर्थ है कि उसने अपने व्यवहार को किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा लिए गए निर्णय के अनुसार निर्देशित करना प्रारम्भ कर दिया है। वे कहते हैं कि एक अर्थ में विशेषीकरण के सिद्धान्त की भाँति आदेश की एकता के सिद्धान्त को भी छोड़ा नहीं जा सकता क्योंकि यह किसी भी व्यक्ति के लिए शारीरिक रूप से असम्भव होता है कि वह दो विरोधाभासी आदेशों का पालन करे। साइमन कहते हैं :

इस सिद्धान्त की वास्तविक कमजोरी यह है कि यह विशेषीकरण के सिद्धान्त के विपरीत है या उससे असंगत है। साइमन लूथर गुलिक द्वारा इस सिद्धान्त की आवश्यकता पर दिए गए बल को नकारते हैं और इसकी संकुचितता को स्पष्ट करते हैं।

प्रशासनिक दक्षता बढ़ जाती है यदि संगठनात्मक स्तरों की संख्या को सीमित रखा जाए।

इसका अर्थ यह हुआ कि यदि 'नियन्त्रण के क्षेत्र' के सिद्धान्त को सीमित रखा जाए तो इसका अर्थ होगा संगठन के स्तरों में वृद्धि क्योंकि एक उच्चाधिकारी के अधीन अधीनस्थों की संख्या कम होगी। इसके विपरीत दूसरी ओर यह कहा जाता है कि यदि प्रशासन में संगठनात्मक स्तर कम हो जाए तो दक्षता बढ़ जाती है। इस प्रकार ये दोनों सिद्धान्त विरोधाभासी है। इसे इस चित्र द्वारा प्रदर्शित किया गया है

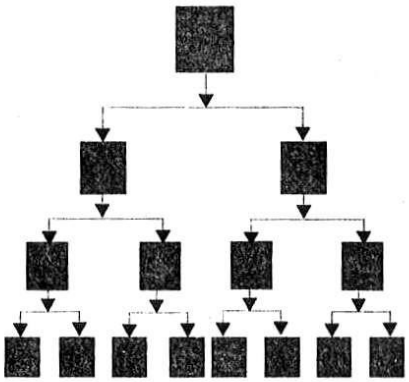

चित्र :सीमित नियंत्रण का क्षेत्र
अधिक संगठनात्मक स्तर

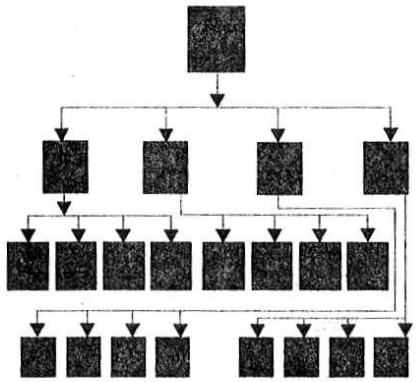

चित्र : विस्तृत नियंत्रण का क्षेत्र
सीमित संगठनात्मक स्तर

सीमित नियन्त्रण के क्षेत्र से लालफीताशाही में बढ़ोतरी हो जाती है। लोग यह तो बता सकते हैं कि अधीनस्थों की संख्या तीन हो या पाँच या ग्यारह या कोई अन्य निश्चित संख्या पर वे इसके कारण की व्याख्या नहीं कर पाते हैं जिसके आधार पर उन्होंने वह निश्चित संख्या ही चुनी है।

साइमन अन्त में कर्मचारियों के प्रयोजन, प्रक्रिया, व्यक्ति तथा स्थान के आधार पर समूहीकरण के सिद्धान्त का परीक्षण करते हैं। साइमन कहते हैं : .....इस सिद्धान्त (प्रनियम) में आन्तरिक असंगति पाई जाती है क्योंकि प्रयोजन, प्रक्रिया, व्यक्ति और स्थान संगठन के प्रतिस्पर्धी आधार हैं। और विभाजन के किसी भी बिन्दु पर तीन आधारों के फायदों का हमें बलिदान करना होगा यदि हम चौथे आधार का फायदा लेना चाहते है।

साइमन इसका उदाहरण देते हुए कहते हैं कि यदि किसी शहर के मुख्य विभागों को प्रयोजन या परपज के आधार पर संगठित किया जाता है तो इसका अर्थ यह होगा कि सभी फिजीशियन, सभी वकील, सभी इंजीनियर और सभी सांख्यिकी शास्त्री किसी एक विभाग के अधीन नहीं रह पाएँगे और विभिन्न विभागों में वितरित हो जाएंगे। इस प्रकार प्रयोजन के आधार पर संगठन के फायदों को हम आंशिक रूप से खो देंगे। साइमन स्वास्थ्य विभाग का उदाहरण देते हुए प्रयोजन और व्यक्तियों के आधारों के बीच के संघर्ष का उल्लेख करते हैं।

साइमन स्वयं कहते हैं कि दक्षता के 'सिद्धान्तों' को सिद्धान्त मानने के बजाय उन्हें परिभाषा ही माना जाना चाहिए। इसका अर्थ है कि यह इस बात की परिभाषा है कि 'अच्छा' या 'सही' प्रशासनिक व्यवहार क्या है। ये इस बात के बारे में कुछ नहीं बताते कि 'प्राप्तियों' या 'उपलब्धियों' को किस प्रकार 'उच्चतम' किया जाए बल्कि सिर्फ इतना बताते हैं कि 'उच्चतम' करना प्रशासनिक क्रिया का लक्ष्य है।

इसके पश्चात् साइमन उन कारकों का परीक्षण करते हैं जो कि उस दक्षता के स्तर को निर्धारित करते हैं जिसे कि कोई प्रशासनिक संगठन प्राप्त करना चाहता है । इसके लिए वे कहते हैं कि यदि प्रशासनिक संगठन के किसी सदस्य से यह पूछा जाए कि उसके उत्पादन की मात्रा और किस्म की क्या सीमाएँ हैं? तो इसमें निम्न सीमाएँ होंगी :

1. निष्पादन करने की उसकी सीमा
2. सही निर्णय लेने की उसकी क्षमता की सीमा

यदि इन सीमाओं को हटा दिया जाए तो संगठन उच्च स्तर की दक्षता प्राप्त कर सकता

संगठनात्मक साम्य (Orgnizational Equilibrium)

'एडमिनिस्ट्रेटिव बिहेवियर' पुस्तक के छठे अध्याय में साइमन 'संगठन में साम्य' की विस्तृत विवेचना करते हैं। इस अध्याय में साइमन निम्न बातों का उल्लेख करते हैं : प्रलोभन, संगठन सहभागियों के प्रकार, संगठनात्मक लक्ष्य प्रलोभन के रूप में, कर्मचारियों की भागीदारी के लिए प्रोत्साहन, संगठन के आकार व वृद्धि से निकाले गए मूल्य, संगठन साम्य और दक्षता,

निष्कर्ष

साइमन का संगठनात्मक साम्य का विचार चेस्टर बरनार्ड के विचारों से प्रभावित है। सर्वप्रथम बरनार्ड ने ही 'साम्य मॉडल' का प्रयोग किया था। साइमन कहते हैं कि व्यक्ति संगठन की सदस्यता लेने को इच्छुक होते हैं क्योंकि वे अपने व्यक्तिगत लक्ष्यों को प्राप्त करना चाहते हैं। इन व्यक्तियों की क्रियाएँ संगठन को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से योगदान करती है। यह योगदान प्रत्यक्ष उस स्थिति में होता है जब संगठन के लक्ष्य व्यक्ति के व्यक्तिगत लक्ष्य होते हैं। चर्च की सदस्यता इसका स्पष्ट उदाहरण है। योगदान उस समय अप्रत्यक्ष होता है जब संगठन उन व्यक्तियों को पुरस्कृत करता है जो अपनी गतिविधियों से संगठन को योगदान करने की इच्छा रखते हैं। किसी व्यवसाय में रोजगार प्राप्त करना इसका उदाहरण है। साइमन कहते हैं कि कभी–कभी ये व्यक्तिगत पुरस्कार संगठन के आकार और वृद्धि से प्रत्यक्षतः सम्बन्धित हो जाते हैं जैसे कि व्यापार के स्टॉकहोल्डर्स के मामले में।

साइमन संगठन में सहभागिता करने वाले व्यक्तियों को उनके योगदानों के आधार पर 3 वर्गों में बाँटते हैं–

1. विशिष्ट सेवाएँ प्रदान करने वाले ; अर्थात् सामग्री की आपूर्ति करने वाले,
2. ग्राहक, तथा 3. समय और प्रयास करने वाले अर्थात् कर्मचारी।

साइमन कहते है कि व्यापारिक संगठन में यह सवाल उठाया जाता है कि उसका उद्देश्य 'सेवा करना' होता है या 'लाभ कमाना'। निश्चित रूप से ग्राहक संगठन को इसलिए योगदान करता है क्योंकि संगठन उसको सेवाएं प्रदान करता है, दूसरी तरफ उद्यमकर्ता इसलिए योगदान करता है क्योंकि इससे उसको लाभ की प्राप्ति होती है। साइमन कहते हैं कि व्यापारिक संगठन का संगठनात्मक लक्ष्य अर्थात् उत्पादन व्यक्तियों के लिए व्यक्तिगत लक्ष्य बन जाता है। इससे भिन्न सरकारी एजेन्सी के मामले में संगठनात्मक लक्ष्य संगठन की अन्तिम नियन्त्रणकारी संस्था अर्थात् विधानमण्डल तथा नागरिकों के लिए व्यक्तिगत लक्ष्य बन जाता है। स्वयंसेवी संगठनों में संगठनात्मक उद्देश्य वह प्रत्यक्ष प्रलोभन ही होता है जो कि संगठन के सदस्यों से सेवाएँ प्राप्त करता है। साइमन संगठनात्मक लक्ष्य की अस्थिर प्रकृति की भी विवेचना करते हैं।

साइमन उन प्रोत्साहनों (Incentives) की भी चर्चा करते हैं जो कि व्यक्ति को संगठन में भागीदारी करने और अपना योगदान करने के लिए प्रेरित करते हैं। साइमन कहते हैं :

एक गैर–स्वयंसेवी संगठन (Non-volunteer) के कर्मचारी के लिए सबसे स्पष्ट प्रोत्साहन

वह वेतन या मजदूरी होती है जो कि संगठन उसे प्रदान करता है।

इसके अलावा साइमन प्रोत्साहनों के रूप में उस प्रस्थिति और प्रतिष्ठा को भी शामिल करते हैं जो कि संगठन व्यक्ति को प्रदान करता है। पदोन्नति का अवसर भी व्यक्ति को सहभागिता के लिए प्रोत्साहित करता है ।

पदोन्नति, साइमन के मत में आर्थिक और प्रतिष्ठासूचक प्रोत्साहन है। इसी प्रकार कतिपय अन्य भौतिक और अभौतिक प्रोत्साहन हो सकते हैं। साइमन कहते हैं :

तीसरे प्रकार का प्रोत्साहन जो कि व्यक्तियों को संगठन में सहभागिता के लिए प्रोत्साहित करता है वह संगठन के आकार और संवृद्धि से होता है। इन्हें 'संरक्षणवादी' मूल्य कह सकते हैं।

इस प्रकार वेतन, मजदूरी, प्रतिष्ठा, प्रस्थिति, पदोन्नति, 'संरक्षणवादी' मूल्य तथा अन्य भौतिक और अभौतिक प्रलोभनों को साइमन संगठन में व्यक्तिगत सहभागिता के रूप में गिनाते हैं। व्यक्ति संगठन को योगदान देता है और बदले में संगठन व्यक्ति को उपयुक्त प्रोत्साहन या लाभ प्रदान करता है। इस प्रकार एक संगठन और व्यक्ति के बीच साम्य बन जाता है और यह संगठनात्मक साम्य ही संगठन का अस्तित्व बनाए रखता है।

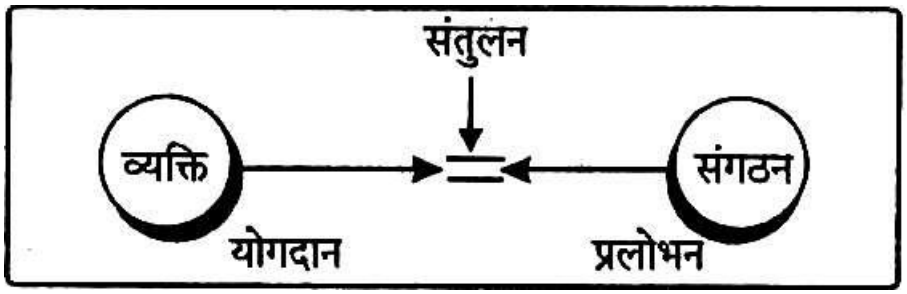

चित्र : संगठनात्मक साम्य

साइमन कहते हैं कि संगठन में साम्य बनाए रखने (अर्थात् संधारण) का कार्य नियन्त्रण समूह द्वारा किया जाता है। व्यापारिक संगठनों में नियन्त्रण समूह लाभ तथा संरक्षण की ओर अभिमुखी होता है। वे कई तरीकों से आने वाले योगदानों और जाने वाले प्रलोभनों के बीच सन्तुलन बनाए रखता है। सरकारी एजेन्सियों में नियन्त्रक–समूह विधानमण्डल होता है। यह समूह संगठन के लिए योगदान कर सकता है चाहे इसमें कितना ही कोष क्यों न लगे।

प्राधिकार की भूमिका (The Role of Authority)

साइमन प्राधिकार या सत्ता के विविध आयामों का उल्लेख अपनी पुस्तक के अध्याय सात में करते हैं। साइमन सत्ता की परिभाषा इस प्रकार करते हैं : सत्ता को निर्णय करने की शक्ति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो कि अन्यों की क्रियाओं को निर्देशित करती है। यह दो व्यक्तियों के बीच का सम्बन्ध है जिनमें एक 'उच्चाधिकारी' और एक 'अधीनस्थ' होता है।

साइमन कहते हैं कि उच्चाधिकारी निर्णय लेता है और अधीनस्थों को प्रसारित करता है और आशा करता है कि उन निर्णयों को अधीनस्थ स्वीकार करेंगे। अधीनस्थ ऐसे निर्णयों की अपेक्षा करता है और उसका आचार–व्यवहार उन्हीं द्वारा निर्धारित होता है। साइमन कहते हैं कि सत्ता के सम्बन्ध को वैषयिक और व्यवहारवादी पदों में परिभाषित किया जा सकता है। इसमें उच्चाधिकारियों और अधीनस्थों के व्यवहार शामिल होते हैं। जब ये व्यवहार घटित नहीं होते तब तक वहाँ किसी प्रकार की सत्ता नहीं होती। साइमन सत्ता और प्रभाव में भेद करते हैं। वे कहते हैं कि :

इन पदों में उलझन (कनफ्यूजन) का कारण यह तथ्य है कि फुसलाना, सुझाव देना तथा आदेश देना, ये तीन प्रघटनाएँ किसी एक स्थिति में लगातार उपस्थिति होती हैं।

साइमन सत्ता को शास्तियों या दण्डों (सैंकशन) से जोड़ते हैं। वे कहते हैं कि संगठन में सत्ता का पालन हो इसके लिए बहुत से कारक होते हैं। व्यापक अर्थ में उनको 'शास्तियाँ' कहा जा सकता है। यद्यपि साइमन के मत में यह शब्द दण्ड के समान हो जाता है। साइमन निम्न कारकों का उल्लेख करते हैं –

1. सामाजिक शास्तियों का सर्वप्रथम उल्लेख किया जाना चाहिए क्योंकि ये सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण होती हैं। समाज व्यक्तियों से आज्ञापालन की अपेक्षा करता है तथा जो अपनी भूमिका नहीं निभा पाते हैं वे अन्यों द्वारा निन्दा के शिकार होते हैं।
2. मनोवैज्ञानिक विभेद जो विभिन्न व्यक्तियों के बीच पाए जाते हैं,
3. संगठन का प्रयोजन या उद्देश्य भी प्रशासन के विद्यार्थी के लिए प्रमुख शास्ति हो सकती है।
4. हमारे समाज में अधिक औपचारिक शास्तियाँ 'कार्य' (Job) और आर्थिक सुरक्षा व प्रस्थिति के बीच के सम्बन्धों पर आधारित होती हैं।
5. उत्तरदायित्व से बचने की इच्छा तथा उदासीनता के कारण भी लोग प्राधिकार को स्वीकार कर लेते हैं।

साइमन सत्ता की सीमाओं का उल्लेख करते हुए 'स्वीकृति के क्षेत्र' (Zone of Acceptance) की अवधारणा का प्रतिपादन करते हैं जो चेस्टर बरनार्ड की 'उदासीनता के क्षेत्र' (Zone of Indefference) से ली गई है।

साइमन कहते हैं कि यदि सत्ता उनके द्वारा बताए गए 'स्वीकृति के क्षेत्र' से बाहर होती है तो अधीनस्थ उसे अस्वीकार कर देता है अर्थात् सत्ता का आज्ञापालन नहीं होता। साइमन कहते हैं – किसी भी क्षण यदि सत्ता को एक निश्चित बिन्दु की परिधि (जिसे मैं 'स्वीकृति का क्षेत्र' कहता हूँ) से बाहर होकर लागू की जाती है तो आज्ञापालन नहीं होगा। 'स्वीकृति के क्षेत्र' का परिमाण उन शास्तियों (Sanctions) पर निर्भर करता है जिसको कि सत्ता लगाती है।साइमन संगठन में सत्ता के प्रकार्यों अथवा उपयोगों का विस्तार से उल्लेख करते हैं। वे सत्ता के निम्न 3 कार्य प्रमुखतः बताते हैं :

1. सत्ता उन व्यक्तियों को उत्तरदायित्व सौंपती है जो कि संगठन में सत्ता का उपभोग करते हैं।
2. सत्ता निर्णय–निर्माण की प्रक्रिया में विशिष्टता लाती है और निर्णय लेने के लिए विशिष्ट कौशल (Expertise) प्राप्त करती है।
3. साइमन सत्ता का तीसरा कार्य समन्वय स्थापित करने में योगदान के रूप में बताते हैं। साइमन इसे विशिष्ट कौशल से अलग करके देखते हैं।

साइमन सत्ता के संघर्षों के समाधान की 4 विधियों का भी उल्लेख करते हैं – परम्परागत अर्थ में आदेश की एकता, संकुचित अर्थ में आदेश की एकता (जब एक अधीनस्थ कुछ उच्चाधिकारियों से आदेश प्राप्त करे।), सत्ता का विभाजन, पदों की प्रणाली।

साइमन औपचारिक संगठनों में सत्ता की प्रकृति की विवेचना भी करते हैं।

संचार (Communication)

साइमन निर्णय प्रक्रिया में संचार के महत्त्व को स्वीकार करते हैं। संचार को परिभाषित करते हए साइमन कहते हैं– ''संचार को औपचारिक रूप से उस प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसके द्वारा निर्णय सम्बन्धी आधार वाक्यों (डिसिजनल प्रेमाइसेज) को संगठन के एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को प्रसारित (ट्रांसमिट) किया जाता है।'' साइमन कहते हैं :

यह स्पष्ट है कि बिना संचार के कोई भी संगठन नहीं हो सकता क्योंकि तब व्यक्तियों के व्यवहार को प्रभावित करने की समूह की शक्ति की कोई सम्भावना नहीं होगी। परन्तु संचार की किसी विशिष्ट तकनीक की

उपलब्धता उस तरीके को निर्धारित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएगी जिसमें निर्णय–निर्माण कार्यों को सम्पूर्ण संगठन में वितरित किया जा सकता है या किया जाना चाहिए।

साइमन कहते हैं कि संगठन में संचार द्विमार्गी प्रक्रिया है तथा यह संगठन में उर्ध्वगामी तथा अधोगामी हो सकती है। उनका कहना है कि किसी संगठन में औपचारिक संचार की व्यवस्था का अर्थ है संचार के वे चैनल और मीडिया जिनकी स्थापना सचेतन व जान–बूझकर की जाती है। साथ ही साइमन संगठन के भीतर सामाजिक सम्बन्धों पर आधारित अनौपचारिक संचार नेटवर्क को भी महत्त्वपूर्ण बताते हैं। उनके मत में संचार के सामान्य व स्पष्ट माध्यमों (मीडिया) में कहे गए शब्द और ज्ञापन तथा संगठन में एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति को सम्बोधित करके लिखे गए पत्र हैं। रिकॉर्ड और रिपोर्ट की व्यवस्था सभी प्रकार के संगठनों में कार्यरत लोगों के सामाजिक सम्बन्धों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होता है। साइमन के मत में अनौपचारिक संचार व्यवस्था का प्रयोग संगठन के सदस्य अपने व्यक्तिगत लक्ष्यों को बढ़ाने के लिए करते हैं। इसी के 'क्लीक' अर्थात् मण्डली बनाने की प्रघटना का उदय होता है। इन मण्डलियों में प्रतिस्पर्धा के कारण सामाजिक सम्बन्धों में कटुता आती है और अनौपचारिक संचार प्रणाली के उद्देश्यों को हानि होती है। औपचारिक संगठन संरचना मण्डलियों के निर्माण को प्रोत्साहित करती है या बाधा पहुँचाती है या उन तकनीकों जिनको कि कार्यपालिका इन मण्डलियों से निपटने तथा उनकी हानियों को कम करने की कोशिश करती है, व्यवस्थित विश्लेषण का साइमन आग्रह करते हैं। साइमन के मत में 'ग्रेपवाइन' अर्थात् अनौपचारिक संचार संगठनों में रचनात्मक भूमिका निभाता है फिर भी इनकी निम्न कमियाँ हैं –

- यह स्पष्टवादिता को हतोत्साहित करता है।
- जो सूचना 'ग्रेपवाइन' प्रसारित करता है वह प्रायः अशुद्ध होती है।

साइमन कहते हैं कि आज के अधिकांश संगठन संचार प्रकार्यों के लिए विशिष्टीकृत इकाइयों का विकास करते हैं। इनमें शामिल हैं– स्टाफ सहायक इकाइयाँ, फाइल, रिकॉर्ड, पुस्तकालय व्यवस्था, अन्वेषण इकाई आदि।

संगठनात्मक–प्रभाव के तरीके/विधियाँ (Modes of Organizational Influence)

साइमन इन तरीकों को मोटे तौर पर दो श्रेणियों में बाँटते हैं– (1) प्रथम श्रेणी में किसी कार्यरत कर्मचारी में ही अभिवृत्तियों, आदतों तथा एक ऐसी मन–स्थिति का निर्माण किया जाता है जो कि उसे संगठन के लाभ के लिए निर्णय लेने की ओर ले जाते हैं। (2) संगठन के निर्णय कार्यरत कर्मचारियों पर थोपना या आरोपित करना। साइमन के मत में प्रथम श्रेणी के प्रभाव, कर्मचारी में संगठनात्मक निष्ठा की भावना विकसित करके और दक्षता के प्रति फिक्र पैदा करके और अधिक सामान्य रूप से उसे प्रशिक्षित करके पैदा किए जा सकते हैं। दूसरी श्रेणी के प्रभाव मूलतः सत्ता तथा परामर्शदात्री व संचारात्मक सेवाओं पर निर्भर करता है। साइमन इनमें से सत्ता, संगठनात्मक निष्ठा, दक्षता, सलाह और सूचना तथा प्रशिक्षण का विस्तार से उल्लेख करते हैं। .

1. सत्ता : यह दो व्यक्तियों के बीच का सम्बन्ध है जिसमें एक उच्चाधिकारी होता है और अधीनस्थ होता है। सत्ता संगठन में कर्मचारियों के व्यवहार को प्रभावित करने की शक्ति होती है और व्यक्तियों के व्यवहार को निर्देशित करती है। साइमन कहते हैं कि सत्ता संगठन में केवल 'अधोगामी' (Downward) ही नहीं होती अपितु उर्ध्वगामी (Upwards) तथा समस्तरीय (Sidewise) भी होती है।
2. संगठनात्मक निष्ठाएँ : (Organizational Loyalties) साइमन कहते हैं कि यह मानवीय व्यवहार का सुस्थापित लक्षण है कि एक संगठित समूह के सदस्य उस समूह के साथ पहचान बनाने की प्रवृत्ति रखते हैं जिसके कि वे सदस्य होते हैं। व्यक्ति निर्णय लेते समय अपनी संगठनात्मक निष्ठा को ध्यान में रखते हैं और यह निष्ठा उनको ऐसे विकल्प चुनने को प्रेरित करती है जिनके परिणामों का प्रभाव संगठन पर सकारात्मक हो।

3. दक्षता का मापदण्ड : अपने व्यापकतम सन्दर्भ में दक्ष बनने से सीधा–सा अर्थ सबसे छोटे रास्ते को अपनाना तथा वांछित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सबसे सस्ते साधनों को अपनाया। यह आदेश कि 'दक्ष बनो' (Be Efficient) किसी भी प्रशासनिक एजेन्सी के सदस्यों के निर्णयों पर सबसे बड़ा संगठनात्मक प्रभाव होता है।
4. परामर्श और सूचना : परामर्श लेना (Advice) तथा सूचना भी संगठनात्मक प्रभाव की रीतियाँ हैं। साइमन कहते हैं कि ये प्रभाव सर्वाधिक यर्थाथवादी हैं। सूचना तथा परामर्श संगठन में केवल ऊपर से नीचे की ओर ही नहीं चलते अपितु पूरे संगठन में सभी दिशाओं में बहते हैं।
5. प्रशिक्षण : संगठनात्मक निष्ठाओं और दक्षता के मापदण्ड की तरह और संगठन प्रभाव के अन्य तरीकों (सत्ता तथा परामर्श और सूचना) से भिन्न प्रशिक्षण निर्णयों को 'अन्दर से बाहर की ओर' (From the Inside Out) प्रभावित करता है। साइमन के मत में प्रशिक्षण संगठन के सदस्य को सन्तोषजनक निर्णय तक पहुँचने के लिए तैयार करता है।

इस प्रश्न का जवाब देते हुए कि कर्मचारी इन संगठनात्मक प्रभावों को क्यों स्वीकार करता है, साइमन संगठनात्मक साम्य के विचार का प्रतिपादन करते हैं।

दक्षता का मापदण्ड (The Criterion of Efficiency)

अपने व्यापकतम सन्दर्भ में दक्ष बनने का सीधा–सा अर्थ है सबसे छोटे रास्ते को अपनाना तथा वांछित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सबसे सस्ता साधन चुनना।

साइनम कहते हैं कि दक्षता का मापदण्ड प्रत्येक तार्किक गतिविधि में पाया जाता है। दक्षता का मापदण्ड वाणिज्यिक संगठनों पर आसानी से लागू किया जा सकता है जो कि लाभ के लक्ष्यों से ज्यादातर मार्गदर्शित होते हैं। इस प्रकार के संगठनों के लिए दक्षता के मापदण्ड का सीधा–सा सम्बन्ध इस बात से होता है कि उपलब्ध समस्त विकल्पों में से उस विकल्प को चुना जाए जो कि संगठन के लिए सर्वाधिक प्राप्ति (धन) करे। इन संगठनों में लागत को कम करने और आमदनी को बढ़ाने के प्रयास साथ–साथ किए जाते हैं।

साइमन दक्षता के मापदण्ड को और सरल तरीके से समझाते हुए कहते हैं : दक्षता का मापदण्ड इस बात की माँग करता है कि यदि समान लागत के दो विकल्प हों, तो उस विकल्प को चुनना चाहिए जो संगठन के उद्देश्यों की उच्चतर प्राप्ति करता हो। जब दो विकल्पों से समान मात्रा में प्राप्त होती हो तो उस विकल्प को चुनना चाहिए जिसकी लागत कम हो।

साइमन दक्षता और प्रभावकारिता (Effectiveness) में भेद करते हैं और कहते हैं कि 19वीं सदी के अन्त तक दक्षता और प्रभावकारिता को प्रर्यायवाची समझा जाता था।

मानव प्रतिमान (Models of Man)

अपनी रचना 'Models of Man' में साइमन सामाजिक–मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण का उपयोगी विवरण प्रस्तुत करते हैं। साइमन मानव के निम्न तीन मॉडलों की चर्चा करते हैं :

- मनोवैज्ञानिक मानव या फ्रायडवादी मानव
- तार्किक या आर्थिक मानव
- प्रशासनिक मानव

मनोवैज्ञानिक मानव मॉडल मनोवैज्ञानिक द्वारा उपयोग में लिया जाता है जिससे व्यक्ति के व्यवहार का पूर्वानुमान किया जा सके। इसके बाद साइमन आर्थिक या तार्किक मानव मॉडल बताते हैं जो अर्थशास्त्रियों द्वारा उपयोग में लाया जाता है। आर्थिक मानव तार्किकता के साथ निर्णय लेता है और इस विकल्प को चुनता है जिससे कि उसको

सर्वाधिक लाभ हो सके। साइमन तीसरा मानव प्रशासनिक मानव मानते हैं। साइमन इसे मनोवैज्ञानिक और आर्थिक मानव के बीच स्थापित करते हैं।

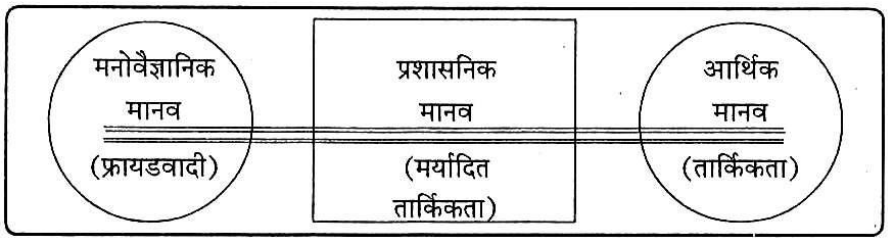

चित्र : साइमन का प्रशासनिक मानव

निर्णय प्रक्रिया और कम्प्यूटर (Decision Making Process and Computers)

साइमन अपनी पुस्तक 'एडमिनिस्ट्रेटिव बिहेवियर' के तृतीय संस्करण की प्रस्तावना और 'द न्यू साइन्स ऑफ मैनेजमेन्ट डिसिजन' पुस्तक में निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में कम्प्यूटरों के उपयोग तथा सूचना प्रसंस्करण के विविध आयामों की चर्चा करते हैं। साइमन कहते हैं : हम कम्प्यूटरों का प्रयोग कार्यों को तीव्रता और सस्ते ढंग से सम्पादित करने के लिए करते हैं। यही काम हम पहले मशीन और टाइपराइटरों द्वारा करते थे। .....कम्प्यूटरों ने कार्यकारी निर्णय–निर्माण प्रक्रिया को बदल दिया है।

साइमन स्वयं को प्रौद्योगिकीय आमूल–चूलवादी तथा आर्थिक–संरक्षणवादी मानते हैं। वे कम्प्यूटर के आगमन से काफी आकर्षित होते हैं और निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में कम्प्यूटरों के प्रभावों का मूल्यांकन करते हैं। साइमन कम्प्यूटर को दो रूपों में देखते हैं : स्मृति के रूप में कम्प्यूटर, प्रोसेसर के रूप में कम्प्यूटर

साइमन इस बात का उल्लेख करते हैं कि परिचालन, अनुसन्धान, व्यवस्था–विश्लेषण, मात्रात्मक समंक प्रोसेसिंग, सिमुलेशन, क्रीड़ा सिद्धान्त आदि नई तकनीकें कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी से काफी प्रभावित हुई है। कम्प्यूटरों ने इस बात में सहायता की है कि निर्णय कैसे लिए जाएँ। कम्प्यूटरों की सहायता से आज संगठन में निर्णयकर्ता अधिकाधिक सूचनाएँ शीघ्रता से प्राप्त कर लेता है। अपनी रचना 'दी न्यू साइन्स ऑफ मैनेजमेन्ट डिसिजन' में कम्प्यूटरों के निर्णय निर्माण प्रक्रिया पर पड़ने वाले प्रभावों का विस्तार से उल्लेख किया है। उनके प्रमुख निष्कर्ष इस प्रकार हैं :

- साइमन का मत है कि कम्प्यूटरों तथा नई निर्णय–निर्माण तकनीकों के उपयोग से प्रशासन में पुनर्केन्द्रीयकरण होगा। अर्थात् केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति फिर जोर पकड़ेगी
- कम्प्यूटरों और सिमुलेशन तकनीकों के उपयोग से निर्णय अधिकाधिक कार्यक्रमित प्रकृति के होते जा रहे हैं और निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में तार्किकता बढ़ रही है। साइमन निर्णय प्रक्रिया में तार्किकता बढ़ाने के लिए अधिकाधिक कम्प्यूटरीकरण का सुझाव देते हैं।
- स्मृति के रूप में कम्प्यूटर और प्रोसेसर के रूप में कम्प्यूटरों ने प्रशासन में निर्णय निर्माण प्रक्रिया में तार्किकता को बढ़ावा देकर इसे अधिक सुविधाजनक व त्वरित करने में मदद की है।
- साइमन आगाह करते हैं कि कम्प्यूटरों द्वारा हमें प्रदान की गई नई क्षमताओं के साथ आश्चर्य करने के साथ–साथ हमें इस बात की सावधानी रखनी चाहिए कि हम इस तथ्य को न भूलें कि मानवीय निर्णयकर्ताओं के पास भी खूब उल्लेखनीय गुण हैं।

आलोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Evaluation)

साइमन निर्णय–निर्माण प्रक्रिया के विभिन्न चरण बताते हैं और निर्णयन में तार्किकता के विचार का परीक्षण करते हैं। परन्तु साइमन ने जिस तरह निर्णय–निर्माण प्रक्रिया के चरण बताए हैं, ऐसा लगता है कि वे निर्णयन की प्रक्रिया का अतिसरलीकरण कर रहे हैं। साइमन निर्णयकर्ता के मनोविज्ञान की अनदेखी करते हैं और सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक आदि कारकों को पीछे छोड़ देते हैं जो कि निर्णयकर्ता के व्यवहार को प्रभावित करते हैं। क्यों प्रशासनिक मानव पर्याप्त रूप से ठीक–ठाक विकल्प को चुनकर ही सन्तुष्ट हो जाता है और श्रेष्ठतम विकल्प को चुनने का प्रयास ही नहीं करता? मर्यादित तार्किकता की अवधारणा इस जटिल प्रघटना का सन्तोषजनक जवाब नहीं दे सकती। साइमन तथ्यों पर आधारित प्रशासन की वकालत अधिक करते हैं और प्रशासनिक मूल्यों को नजर अन्दाज करते हैं। फिर प्रशासनिक व्यवहार में सिर्फ निर्णयन पर ही सारा ध्यान केन्द्रित करना भी उचित नहीं कहा जा सकता। प्रशासन सिर्फ निर्णयों से ही तो चल नहीं सकता। इसके कई अन्य ओर समान रूप से महत्त्वपूर्ण आयाम हैं। फिर लोक–प्रशासन को मूल्य–मुक्त विज्ञान बनाने की उसकी वकालत की भी आलोचना की जाती है। वी. सुब्रमण्यम साइमन के दृष्टिकोण पर निम्न आरोप लगाते हैं :

1. यह राजनीति–प्रशासन द्वैतभाव को पुनर्जीवित करता है।
2. निर्णयकर्ताओं पर हानिकारक प्रभाव डालता है।
3. साइमन के मुख्य विचार से अप्रासंगिकता रखता है।

साइमन प्रशासन के सिद्धान्तों (प्रनियमों) को 'कहावतें' बताकर उनकी कटु आलोचना करते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि साइमन लोक–प्रशासन के प्रति किसी पूर्वाग्रह से ग्रसित थे। स्वयं साइमन अपनी पुस्तकों में बाद में इन्हीं सिद्धान्तों का जिक्र करते हैं जिनकी कि कभी वे आलोचना करते थे।

'दक्षता के मापदण्ड' पर साइमन के विचारों की काफी आलोचना की जाती है। 'दक्षता' प्रशासन का एकमात्र उद्देश्य न तो हो सकती है और न ही होनी चाहिए। साइमन अपने शुरुआती लेखन में 'दक्षता' पर सर्वाधिक जोर देते हैं, जबकि बाद में वे इसे कम महत्त्वपूर्ण मानने लगते हैं। 'तार्किकता' की साइमन की अवधारणा की भी आलोचना की जाती है। साइमन के मत में निर्णयन में तार्किकता उस समय आती है जब साध्यों की प्राप्ति के लिए उपयुक्त साधनों का प्रयोग किया जाए। यह स्पष्ट अवधारणा है और स्वयं साइमन 'साधन–साध्य' विचारधारा की सीमाओं से परिचित थे। वे तार्किकता के चक्कर में व्यक्ति की निर्णय लेते समय भावनाओं, विश्वासों, परम्पराओं तथा अन्तःप्रज्ञा की अनदेखी करते हैं।

कुछ विद्वान् साइमन की यह कहकर आलोचना करते हैं कि साइमन ने कुछ भी नया प्रतिपादित नहीं किया बल्कि अपने पूर्ववर्ती विचारकों के विचारों को ही नए सिरे से प्रस्तुत कर दिया। यह बात बरनार्ड के सन्दर्भ में तो और भी अधिक सही साबित होती है। प्राधिकार, स्वीकृति का क्षेत्र, दक्षता, प्रभावकारिता, योगदान–सन्तुष्टि आदि सम्बन्धी विचार साइमन ने बरनार्ड से ही ग्रहण किए हैं। अर्गीरिस साइमन के तार्किक मानव विचारधारा के पक्के आलोचक हैं, जो संगठन में यथास्थिति का समर्थन करती है।

उपर्युक्त आलोचनाओं के बावजूद साइमन का प्रशासनिक विचारधारा के विकास में योगदान सदैव मार्गदर्शक रहेगा। अन्त में चेस्टर बरनार्ड के शब्दों में :

प्रोफेसर साइमन की व्याख्या, जो उन्होंने सामान्य पाठक और क्रियाशील व्यक्तियों के लिए की है, का मुख्य गुण उनकी संगठन की विवेचना की स्पष्टता, व्यापकता और सामान्यता में निहित हैं। प्रशासनिक प्रक्रिया, निर्णय की प्रकृति तथा निर्णयों में मूल्यों व तथ्यों के मिश्रण के तत्त्व की विवेचना की स्पष्टता व्यापकता व सामान्यता में निहित है। इस सन्दर्भ में उनकी सफलता उत्कृष्ट है।

फ्रेंक शेरवुड साइमन की 'एडमिनिस्ट्रेटिव बिहेवियर' पुस्तक को प्रशासन को प्रभावित करने वाली सर्वश्रेष्ठ पुस्तक मानते हैं। वे काफी हद तक सही भी हैं। अंत में एडवर्ड फीजेनबॉम के शब्दों में कहा जा सकता है कि साइमन बीसवीं सदी के महानतम् व्यवहारवादी वैज्ञानिक थे।

अध्याय – 4

अब्राहम एच. मैस्लो

(ABRAHAM H. MASLOW)

''मानव सम्बन्धवादियों की अभिप्रेरणा और कार्य–सन्तुष्टि पर शोध का लोक–प्रशासन पर काफी प्रभाव है। इनमें से अधिकांश शोध अब्राहम एच. मैस्लो द्वारा विकसित मानव आवश्यकताओं का पदसोपान के इर्द–गिर्द ही केन्द्रित है।'' –निकोलस हेनरी

अब्राहम मैस्लो का जन्म 1 अप्रैल, 1908 में संयुक्त राज्य अमेरिका में हुआ। वे मूलतः एक मनोवैज्ञानिक थे। मैस्लो ने मैक्स वर्थेमेर तथा कुर्ट कोफका के अधीन अपना अध्ययन कार्य किया। मैस्लो ने अपना अधिक ध्यान 'व्यक्तित्व' के अध्ययन पर लगाया। उनका मत था कि मनोविज्ञान ने अब तक अपना अधिक ध्यान मानवीय कमजोरियों पर लगाया है और मानवीय शक्तियों (स्ट्रेन्थ) को नजरअन्दाज किया है। उनका मत था कि मानवीय प्रकृति स्वभावतः अच्छी होती है। जैसे–जैसे व्यक्ति परिपक्व होता जाता है उसकी रचनात्मक क्षमताएँ स्पष्ट होती जाती हैं। उनका स्पष्ट मत था कि मानवीय व्यवहार विध्वंसात्मक या हिंसात्मक नहीं होता। मैस्लो ने मानवीय मनोविज्ञान पर आधारित अपनी अभिप्रेरणा की विचारधारा का विकास किया। ''वे अब्राहम मैस्लो ही थे जिन्होंने 1943 में इस क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण सफलता प्राप्त की, जब जुलाई, 1943 के "साइकॉलोजिकल रिव्यू'' में 'ए थ्योरी ऑफ ह्यूमन मोटिवेशन' शीर्षक से उनका लेख छपा। इस लेख में मैस्लो ने मानवीय आवश्यकताओं की क्रमिकता (हायरार्की) के विचार का प्रतिपादन किया। मानव आनन्द चाहने वाला प्राणी होता है और उनकी आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करके उनको अभिप्रेरित किया जा सकता है।

मैस्लो की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पुस्तक 'मोटीवेशन एण्ड पर्सनलिटी' है जो 1954 में प्रकाशित हुई थी। इसके अलावा उन्होंने कुछ और पुस्तकें तथा लेख लिखे। 'दी साइकॉलोजी ऑफ बियींग', 'दी साइकॉलोजी ऑफ साइन्स' आदि उनकी अन्य महत्त्वपूर्ण पुस्तकें हैं। यद्यपि मैस्लो ने अपनी पुस्तकों में कई महत्त्वपूर्ण अवधारणाओं और विचारों का उल्लेख किया है तथापि वर्तमान प्रयोजन की दृष्टि से अभिप्रेरणा के क्षेत्र में दिया गया उनका योगदान ही उल्लेखनीय है। 'मोटीवेशन एण्ड पर्सनलिटी' पुस्तक के तीसरे संस्करण का भारतीय पुनर्मुद्रण वर्ष 2000 में हुआ। यह उल्लेखनीय है कि इस पुस्तक को संशोधित करने का कार्य रोबर्ट फ्रेगर, जैम्स फैडीमैन, सिंथिया मैक्रेनल्डस तथा रूथ कोक्स ने किया है।

मेस्लो की अभिप्रेरणा विचारधारा : आवश्यकता–क्रमिकता विचारधारा

(Motivation Theory of Maslow : Need-Hierarchy Theory)

अब्राहम मैस्लो का अभिप्रेरणा का सिद्धान्त 'आवश्यकताओं की क्रमिकता/सोपानिकता' सिद्धान्त कहलाता है। मैस्लो ने अपने अध्ययन द्वारा मानवीय आवश्यकताओं की पहचान की और उनको एक पैमाने पर क्रमबद्ध रूप से व्यवस्थित किया। पैमाने के निचले सिरे पर उन्होंने निम्न स्तरीय आवश्यकताओं को रखा जिन्हें वे शारीरिक आवश्यकताएँ कहते हैं। पैमाने के शिखर पर उच्च स्तरीय आवश्यकता को रखा जिन्हें वह 'आत्म–विश्लेषण/प्रबोधन' (Self actualization) की आवश्यकता कहते हैं। इन दोनों सिरों के बीच वे क्रमशः ऊपर की ओर बढ़ती हुई सुरक्षा आवश्यकताओं, सामाजिक आवश्यकताओं और सम्मान आवश्यकताओं की पहचान करते हैं। आवश्यकताएँ निम्न स्तरीय तथा उच्च स्तरीय दोनों प्रकार की हैं। निम्न स्तरीय आवश्यकताओं का सम्बन्ध

अस्तित्व (Survival) से है तथा उच्च स्तरीय आवश्यकताएँ मनोवैज्ञानिक सन्तुष्टि से जुड़ी हैं। मैस्लो की इन आवश्यकताओं की क्रमिकता/सोपान को इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है :

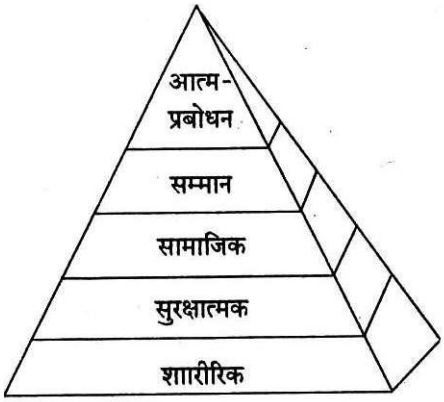

चित्र–1 : 'मैस्लो की आवश्यकताओं' की क्रमिकता (सोपान)

मैस्लो आवश्यकताओं की क्रमिकता/सोपानिकता की अपनी इस अवधारणा के पीछे 3 प्रज्ञप्तियाँ पहचानते हैं :

1. मनुष्य एक चाहने वाला प्राणी है। वह कार्य करने के लिए सदैव कुछ आवश्यकताओं को रखता है।
2. आवश्यकताओं की एक क्रमिकता होती है। इनको प्राथमिकता के साथ व्यवस्थित किया जाता है सबसे आधारभूत आवश्यकता को सबसे पहले सन्तुष्ट किया जाना चाहिए।
3. एक सन्तुष्ट हो चुकी आवश्यकता उसे कभी भी अभिप्रेरित नहीं करती है।

मैस्लो द्वारा आवश्यकताओं की क्रमिकता/सोपान का नीचे से क्रम इस प्रकार है :

शारीरिक आवश्यकताएँ (Physiological Needs) : मैस्लो व्यक्तियों की सर्वप्रथम और आधारभूत आवश्यकता के रूप में शारीरिक आवश्यकताओं की पहचान करते हैं। शारीरिक आवश्यकताएँ व्यक्ति की जैविकीय आवश्यकताएं होती है । ये मनुष्य की आधारभूत जरुरतें होती हैं और जब तक इन्हें पूरा नहीं किया जाता अन्य आवश्यकताओं का कोई महत्त्व नहीं रह जाता है। जब तक व्यक्ति का पेट ही खाली रहेगा तो वह सम्मान और अन्य आवश्यकताओं के बारे में कैसे सोच सकता है। अतः सर्वप्रमुख आवश्यकताओं के रूप में पहले व्यक्ति की भोजन, वस्त्र, आवास, शारीरिक सुख आदि की आवश्यकताओं की पूर्ति आवश्यक है। जब इन आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है तभी व्यक्ति आगे की आवश्यकताओं के बारे में सोचना प्रारम्भ करता है । जब शारीरिक आवश्यकताएँ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होती हैं तो आवश्यकताओं की क्रमिकता इस प्रकार रहती है

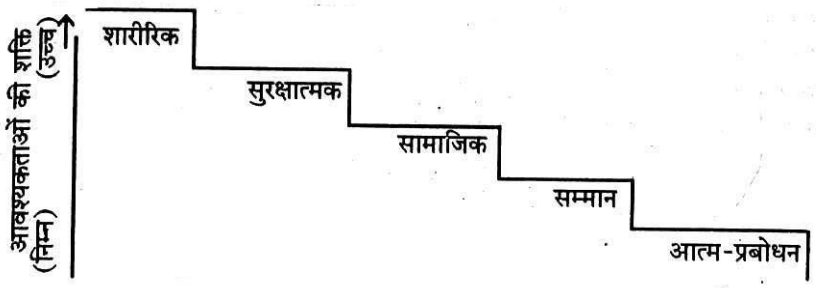

चित्र–2 : शारीरिक आवश्यकताएँ प्रभावी रहती हैं।

सुरक्षात्मक आवश्यकताएँ (Safety/Security Needs) : शारीरिक आवश्यकताओं के पश्चात् सुरक्षात्मक आवश्यकताएँ आती हैं। मनुष्य सदैव प्राकृतिक विपदाओं, खतरों और वंचनों से सुरक्षा चाहता है। निःसन्देह मनुष्य एक सुरक्षा चाहने वाला प्राणी है। जब व्यक्ति की शारीरिक आवश्यकताएँ पूरी हो जाती हैं तो अब वह अपनी सुरक्षात्मक आवश्यकताओं के बारे में सोचना प्रारम्भ करता है। सुरक्षात्मक आवश्यकताओं को बच्चों में अधिक अच्छी तरह से देखा जा सकता है। व्यस्कों में भी सुरक्षा की आवश्यकता काफी महत्त्व रखती है। जब तक व्यक्ति अपने आपको सुरक्षित महसूस नहीं करता तब तक वह अपना कार्य प्रभावी ढंग से नहीं कर पाता और उसका सारा ध्यान अपनी सुरक्षा आवश्यकताओं पर रहता है। जिन समाजों में सुरक्षा की समुचित व्यवस्था सरकार द्वारा ही कर दी जाती है उनमें सुरक्षा की आवश्यकता अधिक अभिप्रेरणात्मक आवश्यकता नहीं रहती। निःसन्देह हर व्यक्ति सुरक्षा चाहता है। आज हर व्यक्ति ऐसी नौकरी में जाने की चाह रखता है जो वेतन, कार्यकाल आदि की दृष्टि से सुरक्षित हो। जब व्यक्ति की सुरक्षात्मक आवश्यकताएँ आवश्यकता–क्रमिकता में प्रभुत्व रखती है तो यह क्रमिकता निम्न स्वरूप में रहती है :

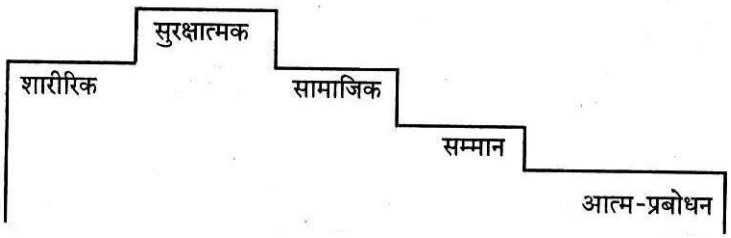

चित्र–3 : आवश्यकता क्रमिकता में सुरक्षा आवश्यकताएँ प्रभुत्व रखती हैं।

सामाजिक आवश्यकताएँ (Social Needs) जब व्यक्ति की शारीरिक और सुरक्षात्मक आवश्यकताएँ सन्तुष्ट हो जाती हैं तो सामाजिक या लगाव (Affiliation) की आवश्यकताएँ महत्त्वपूर्ण बन जाती हैं। चूँकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है अतः अधिकांश व्यक्ति समाज के अन्य व्यक्तियों के साथ अन्तःक्रिया करना चाहते हैं और चाहते हैं कि समाज उनको स्वीकार करे। यद्यपि यह एक सामान्य आवश्यकता है तथापि किसी–किसी के लिए और किन्हीं परिस्थितियों में यह अन्यों की तुलना में अधिक महत्त्वपूर्ण बन जाती हैं। अपनत्व, कार्य समूह द्वारा स्वीकार किया जाना, मित्रता, स्नेह प्राप्त करना आदि मनुष्य की सामाजिक आवश्यकताएं हैं। जिन बच्चों का सम्बन्ध टूटे परिवारों से होता है या जिन बच्चों को उनके परिजनों का स्नेह नहीं मिला हो वे स्नेह और अपनत्व की ज्यादा आवश्यकता महसूस करते हैं। ये आवश्यकताएँ उनको अभिप्रेरित करने में सहायक होती हैं। जब आवश्यकता–क्रमिकता संरचना में सामाजिक आवश्यकताएं प्रभुत्व में होती हैं तो इसकी संरचना निम्न प्रकार की होती हैं :

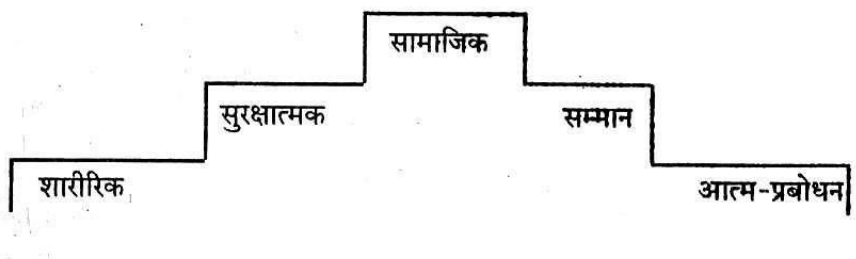

चित्र–4 : जब सामाजिक आवश्यकताएँ प्रभुत्व में होती हैं।

सम्मान आवश्यकताएँ (Esteem Needs) : सामाजिक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि हो जाने पर व्यक्ति की सम्मान की आवश्यकताएँ महत्त्वपूर्ण हो जाती हैं। सम्मान और पहचान की आकांक्षा हर व्यक्ति करता है। लोग सामान्यतया अपने आपका मूल्यांकन काफी बढ़ा–चढ़ा कर करने की प्रवृत्ति रखते हैं। वे अन्यों से सम्मान और पहचान की अपेक्षा रखते हैं। व्यक्ति की सम्मान की आवश्यकताओं की सन्तुष्टि से वह आत्म–विश्वास, प्रतिष्ठा, शक्ति और नियन्त्रण की भावना महसूस करता है। लोग यह सोचने लगते हैं कि वे समाज के लिए उपयोगी हैं और पर्यावरण पर उनका कुछ प्रभाव है। जब व्यक्ति की सम्मान की आवश्यकताएँ अपूरित रहती हैं तो वह अपने आपको कमजोर, असहाय और अधीनस्थ समझने लगता है। अतः सम्मान की आवश्यकता व्यक्ति को अभिप्रेरित करने वाली प्रमुख शक्ति है। जब आवश्यकता–क्रमिकता संरचना में 'सम्मान आवश्यकताएँ' प्रभुत्व में होती हैं तो संरचना का स्वरूप इस प्रकार का होता है।

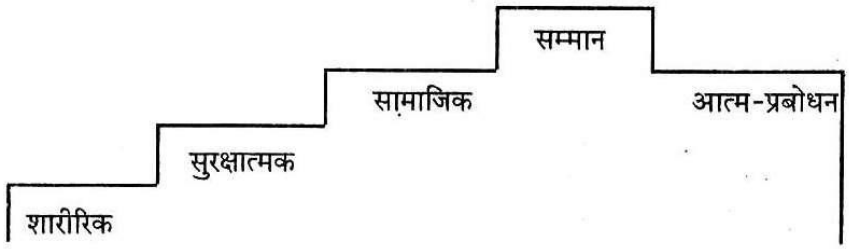

चित्र–5 : जब 'सम्मान आवश्यकताएँ' प्रभुत्व में होती हैं।

आत्म–प्रबोधन की आवश्यकताएँ (Self-actualization) : मैस्लो ने अपनी आवश्यकता क्रमिकता विचारधारा में सबसे अन्तिम आवश्यकता के रूप में आत्म–विश्लेषण/प्रबोधन की आवश्यकताओं की पहचान की है। जब व्यक्ति की सम्मान आवश्यकताएँ सन्तुष्ट हो जाती हैं तो व्यक्ति की आत्म–विश्लेषण की आवश्यकताएँ प्रभुत्व में आ जाती हैं। 'आत्म–विश्लेषण' पद का सर्वप्रथम प्रयोग गोल्डस्टीन ने किया था। आत्म–विश्लेषण व्यक्ति की अपनी क्षमताओं (Potentials) को अधिकतम करने की आवश्यकता है। ''एक संगीतकार को अवश्य संगीत बजाना चाहिए, एक कवि को अवश्य लिखना चाहिए, एक जनरल को अवश्य लड़ाइयाँ जीतनी चाहिए, एक प्रोफेसर को अवश्य पढ़ाना चाहिए।'' जैसे की मैस्लो कहते हैं– "एक मनुष्य क्या हो सकता है, उसे अवश्य होना चाहिए (What a man can be, he must be.)। इस प्रकार आत्म–विश्लेषण वह बनने की इच्छा है जो वह बनने की क्षमता रखता है। ''व्यक्ति इस आवश्यकता की सन्तुष्टि कई तरीकों से कर सकता है। किसी में यह एक आदर्श माँ बनने की इच्छा के रूप में अभिव्क्त हो सकती है, किसी अन्य में यह किसी संगठन के प्रबन्ध के रूप में अभिव्यक्त हो सकती है.....।'' मैस्लो स्वयं लिखते हैं कि आत्म–प्रबोधन ''व्यक्ति की आत्म–पूर्ति (Self-fulfillment) की इच्छा से सम्बन्ध रखता है,.....इस प्रवृक्ति को व्यक्ति जो वह है को और अधिक बनने की इच्छा के रूप में परिभाषित कर सकते हैं, क्षमता के अनुसार से अधिक सब कुछ बनना। आत्म–प्रबोधित व्यक्ति की विशषताओं का उल्लेख करते हुए मैस्लो ने अध्ययन किए और बताया कि एक आत्म–प्रबोधित (Self-actualizated) व्यक्ति निम्न विशेषताएँ रखता है– मिथ्या, नकली और बेइमानों को पहचानने की असाधारण क्षमता रखता है और लोगों का अधिक सही और प्रभावशाली तरीके से मूल्यांकन कर सकता है। उनमें अपराध भावना, शर्म और चिन्ता का अभाव होता है, व्यवहार में स्वतः प्रवृति होती है, वे समस्या पर केन्द्रित होते हैं न कि 'अहम्' पर, उनके जीवन का प्रयोजन और मिशन होता है, वे एकाकीपन और निजत्व पसन्द करते हैं, साथ ही वे अगरिमामयी परिस्थितियों में भी गरिमा बनाए रखते हैं, वे जीवन के अनुभव से आनन्द, प्रेरणा और शक्ति प्राप्त करते हैं, वे व्यक्तियों को पहचानने की गहरी भावना रखते हैं, वे लोकतान्त्रिक होते हैं और साधनों और साध्यों, अच्छे व बुरे में भेद करना जानते हैं, उनमें मजाकिया भावना होती है तथा वे

रचनात्मकता और मौलिकता रखते हैं। ऐसे लोगों के बारे में मैस्लो कहते हैं कि– ''वे काम करते हैं, वे प्रयास करते हैं और वे असामान्य अर्थ में भी महत्त्वाकांक्षी होते हैं। उनके लिए अभिप्रेरणा सिर्फ चरित्र वृद्धि है। चरित्र अभिव्यक्ति है, अभिप्रेरणा और विकास, केवल एक शब्द है आत्म–विश्लेषण जब आत्म–विश्लेषण की आवश्यकताएँ प्रभुत्व में होती हैं तो आवश्यकता क्रमिकता–संरचना इस प्रकार होगी :

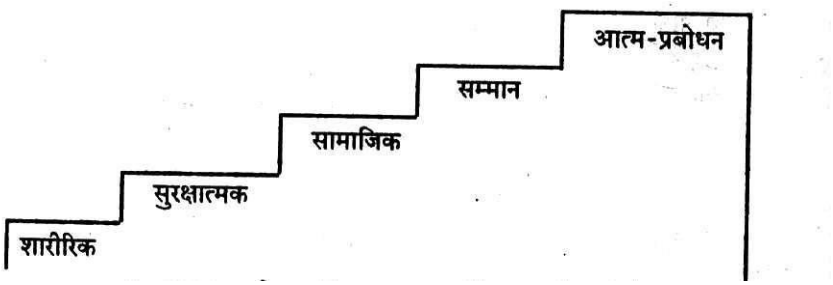

चित्र–6 : आत्म–प्रबोधन की आवश्यकताएँ प्रभुत्व में होती हैं।

मैस्लो की आवश्यकताओं की व्यवस्था को दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है। आधारभूत आवश्यकताओं की श्रेणी को 'अभाव आवश्यकताएँ' (डेफिसिएन्सी नीड्स) कहते हैं। इन अभाव आवश्यकताओं को सन्तुष्ट किया जाना आवश्यक होता है। मैस्लो की विचारधारा में प्रथम चार आवश्यकताएँ अभाव 'आवश्यकताएँ' या 'डी' आवश्यकताएँ हैं। जब व्यक्ति की 'डी' आवश्यकताएँ पूरी हो जाती हैं तो व्यक्ति जीवन की उच्च स्तरीय आवश्यकताओं की ओर देखता है। इस समय 'आत्म–प्रबोधन' की आवश्यकता का उदय होता है। मैस्लो इसे 'बी' मूल्य (B-values) आवश्यकता कहते हैं। उन्होंने 'बी' मूल्यों को दो भागों में बाँटा है :

1. जानने की आवश्यकता।
2. सौन्दर्यात्मक प्रशंसा सम्बन्धी आवश्यकताएँ।

मैस्लो जानने तथा समझने की आवश्यकता तथा सौन्दर्यात्मक आवश्यकताओं का विस्तार से उल्लेख करते हैं। 'मोटीवेशन एण्ड पर्सनलिटी' पुस्तक के तीसरे संस्करण के दूसरे अध्याय में इनकी विस्तार से चर्चा की गई है। 'डी' आवश्यकताओं और 'बी' मूल्यों को इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है :

जानने व समझने की आवश्यकताएँ

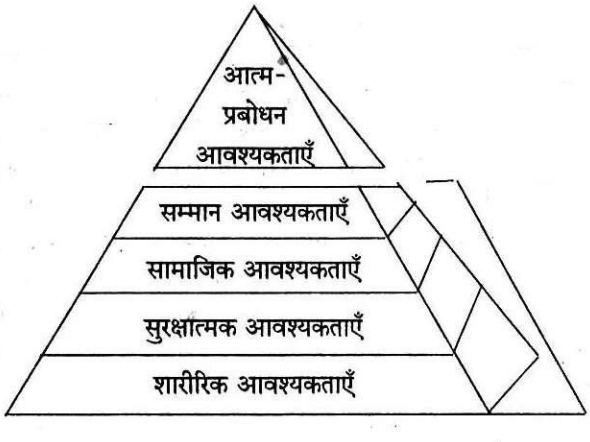

चित्र–7 :

परन्तु मैस्लो की यह विचारधारा अत्यन्त कठोर नहीं है। स्वयं मैस्लो के शब्दों में :

हम इस बात पर बहुत बोल चुके हैं कि यह क्रमिकता एक निश्चित क्रम (Fixed Order) में थीं, परन्तु वास्तव में यह इतनी दृढ़ (Rigid) नहीं है जितनी कि हमने इसे लागू किया है। यह सत्य है कि बहुत–से लोग जिनके साथ हमने काम किया उनमें ये आधारभूत आवश्यकताएँ उसी क्रम में थीं जिसमें इन्हें दर्शाया गया था। फिर भी इसके बहुत–से अपवाद होते हैं।''

निष्कर्ष :– इस प्रकार आवश्यकताओं की क्रमिकता का उल्लेख करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि व्यक्ति को अभिप्रेरित करने के लिए सर्वप्रथम उसकी आवश्यकताओं का अनुमान लगाना आवश्यक है। जिस समय व्यक्ति की जो आवश्यकता है उसे पहचान कर उसकी सन्तुष्टि करके व्यक्ति को अभिप्रेरित किया जा सकता है। वह प्रबन्धक अपने कर्मचारियों को बेहतर तरीके से अभिप्रेरित कर सकता है जो उनकी आवश्यकताओं को पहचानने की क्षमता रखता है और उनकी पूर्ति करता है। मैस्लो स्वयं यह मानते हैं कि उनका यह सिद्धान्त अधिक कठोर (Rigid) नहीं है। इसमें विचलन भी पाए जाते हैं। वे यह भी जानते हैं कि मनुष्य की आधारभूत आवश्यकताएं और इच्छाएँ जिस समाज और संस्कृति में रहते हैं उसके निरपेक्ष होती है।

आलोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Evaluation)

अब्राहम मैस्लो का 'आवश्यकता–क्रमिकता सिद्धान्त' प्रबन्ध जगत् में काफी लोकप्रिय है। मैस्लो का यह सिद्धान्त अनेक आलोचनाओं का शिकार भी हुआ। वस्तुतः यह मानवीय व्यवहार की अति–सरलीकृत व्याख्या है। आलोचकों का मत है कि मैस्लो का यह सिद्धान्त शोध पर आधारित न होकर केवल मनोविज्ञान तथ्यों का एकत्रिकरण है। एम. ए. वाबा तथा एल.जी. ब्रिडवेल (M-A- Wahba and L-G- Bridwell) ने मैस्लो के सिद्धान्त का समर्थन नहीं किया है। मैस्लो का यह मानना कि असन्तुष्ट आवश्यकता अभिप्रेरित करती है या एक सन्तुष्ट आवश्यकता एक नए आवश्यकता स्तर को सक्रिय करती है, सही नहीं है।

ए.के. कोरमेन, जे.एच. ग्रीनहाँस तथा आई.जे. बाडिन (A-K- Korman, J-H-Greenhaus and I-J- Badin) मैस्लो के सिद्धान्त की समीक्षा करते हैं तथा निष्कर्ष निकालते हैं कि यद्यपि आवश्यकता पदसोपान सिद्धान्त को समाज में काफी लोकप्रियता प्राप्त है लेकिन एक सिद्धान्त के रूप में इसको बहुत ही न्यून आनुभविक (प्रयोगसिद्ध) समर्थन प्राप्त हुआ है। वे यह भी मानते हैं कि विद्यमान शोध मैस्लो के पदसोपान सिद्धान्त के प्रभाव को बिना शर्त के स्वीकार करने का विरोध करती है। मैस्लो का सिद्धान्त अपनी अस्पष्ट, दार्शनिक और अति–सरल व्याख्या के कारण भी आलोचनाओं का शिकार हुआ। सिद्धान्त में आनुभाविक के स्थान पर दार्शनिक व्याख्याओं का प्रयोग किया गया है फलतः ये सिद्धान्त अस्पष्टताओं से परिपूर्ण है। 'आत्म–प्रबोधन' आवश्यकताओं की मैस्लो की व्याख्या काफी अस्पष्ट तथा अति सामान्य है। सी.एन. कॉफर तथा एम.एच. एपली (C-N- Cofer and M-H- Appley) इसका परीक्षण करते हैं और पाते हैं कि 'आत्म–प्रबोधन' सम्बन्धी व्याख्या अवधारणागत रूप से अस्पष्ट (Vague), अपनी भाषा की दृष्टि से ढ़ीली तथा अपने मुख्य विचारों से सम्बन्धित प्रमाणों की अपर्याप्तता से पीड़ित है। रैंडल डुनहम (Randall Dunham) भी मानते हैं कि अनेक पद्धतिशास्त्रीय कारणों से मैस्लो की आवश्यकता–क्रमिकता विचारधारा की पर्याप्त जाँच नहीं की जा सकी है। वस्तुतः मैस्लो ने अपने सिद्धान्त को अनुसन्धानात्मक आधार प्रदान नहीं किया। आवश्यक नहीं हैं कि आवश्यकताओं का जो सोपान मैस्लो ने प्रस्तुत किया वह हमेशा इसी रूप में रहे। वस्तुतः यह सोपान बदलता रहता है । स्वयं मैस्लो इस बात से परिचित थे। इसी प्रकार यह भी कहा जा सकता है कि विभिन्न संस्कृतियों में कार्यरत व्यक्तियों की आवश्यकताओं का क्रम भी भिन्न–भिन्न होता है। व्यक्ति की किस समय कौन–सी आवश्यकता सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होती है इसकी पहचान करना काफी कठिन है। मैस्लो ने आवश्यकताओं का जो सोपान प्रस्तुत किया है उसमें आवश्यकताएँ एक के बाद दूसरी आती है। परन्तु व्यवहार में एक साथ एक से अधिक आवश्यकताएँ भी पाई जाती है। उपर्युक्त सीमाओं के कारण ही मैस्लो का सिद्धान्त कमजोर माना जाता है। बरनार्ड बास तथा गेराल्ड बैरेट तो यह मानते हैं कि मैस्लो का सिद्धान्त रुचिकर और लोकप्रिय तो है पर सत्य नहीं। माइकल नैश भी इसी प्रकार के विचार रखते हैं और मानते हैं कि मैस्लो का

सिद्धान्त रुचिकर है पर वैद्य (Valid) नहीं। नैश, हर्जबर्ग और मैस्लो के सिद्धान्तों को सर्वाधिक गलत सिद्धान्त (Major Wrong Theories) मानते हैं।

उपर्युक्त आलोचनाओं के बावजूद मैस्लो का अभिप्रेरणा का सिद्धान्त इस क्षेत्र में सदैव मार्गदर्शक बना रहेगा। उनकी आवश्यकता क्रमिकता की विचारधारा आधुनिक प्रबन्ध के अभिप्रेरणात्मक दृष्टिकोण पर गजब का प्रभाव रखता है। रोबर्ट फ्रेगर मैस्लो की पुस्तक 'मोटीवेशन एण्ड पर्सनलिटी' के तीसरे संस्करण के प्राक्कथन में लिखते हैं– वह एक अग्रणी, एक दृष्टि रखने वाले, विज्ञान के एक दार्शनिक और एक आशावादी व्यक्ति माने जाते हैं। वह 'मानवतावादी' या 'वृतीय बल' मनोविज्ञानों के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रवक्ताओं में से एक थे और मूल रूप से 1954 में प्रकाशित 'मोटीवेशन एण्ड इमोशन' में उनकी मानवीय मनोविज्ञान के प्रारम्भिक खोजें व महत्त्वपूर्ण प्रश्न शामिल हैं। 'मोटीवेशन एण्ड पर्सनलिटी' में वर्णित उनके विचारों ने मैस्लो के जीवन–कार्य की आधारशिला रखी। इस पुस्तक का मानवीय प्रवृत्ति का सकारात्मक व समग्र दृष्टिकोण की रचना पर जबरदस्त प्रभाव है। यह एक अद्वितीय प्रभाव पैदा करने वाली और प्रभावशाली संसाधन के रूप में आज भी मानी जाती है।

अध्याय – 5

डगलस मैक्ग्रेगर
(DOUGLAS MCGREGOR)

''मुझे यह स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है कि प्रबन्धकों को बनाने में, प्रबन्ध विकास में प्रबन्धकों के औपचारिक प्रयासों के काफी कम भाग का परिणाम होता है। यह बहुत बड़े अंश में प्रबन्धकों की उनके कार्य–लक्ष्यों की प्रकृति की संकल्पना का तथा इस संकल्पना को लागू करने के लिए जो नीतियाँ और व्यवहार बनाए जाते हैं उनका परिणाम होता है।''

–डगलस मैक्ग्रेगर

प्रो. डगलस मैक्ग्रेगर का प्रबन्धकीय चिन्तकों में महत्त्वपूर्ण स्थान है। उनके विचारों ने प्रबन्ध की कला और विज्ञान को काफी हद तक प्रभावित किया है। प्रबन्ध का हर विद्यार्थी 'थ्योरी–X' और 'थ्योरी–Y' से परिचित है। इन सिद्धान्तों के प्रतिपादक डगलस मैक्ग्रेगर ही थे। 'थ्योरी–X' और 'थ्योरी–Y' मैक्ग्रेगर का प्रबन्ध जगत् को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान है।

मैक्ग्रेगर का जन्म 1906 में डेट्रोइट, संयुक्त अमेरिका में हुआ। मैक्ग्रेगर प्रतिष्ठित 'मेसाच्युसेट्स इन्स्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी' (M-I-T) में औद्योगिक प्रबन्ध के प्रोफेसर थे। मैक्ग्रेगर अपने कार्यों में काफी निपुण थे तथा मानवीय प्रकृति और मनोविज्ञान को समझने में उनकी बड़ी रुची थी। 58 वर्ष की आयु में असमय ही मैक्ग्रेगर का निधन हो गया और प्रबन्ध जगत् को एक अपूरणीय क्षति हुई। मैक्ग्रेगर ने कुछ पुस्तकें लिखीं और कई लेख प्रकाशित करवाए। सन् 1960 में मैक्ग्रेगर की पुस्तक 'द ह्यूमन साइड ऑफ एन्टरप्राइज' (The Human Side of Enterprize) प्रकाशित हुई। यह पुस्तकं प्रबन्ध साहित्य की अमूल्य धरोहर है। इसी पुस्तक में मैक्ग्रेगर ने मानव प्रकृ ति से सम्बन्धित अपने जाने–माने 'सिद्धान्त–एक्स' और 'सिद्धान्त–वाई' का प्रतिपादन किया । मैक्ग्रेगरं की अन्तिम पुस्तक 'द प्रोफेशनल मैनेजर' (The Professional Manager, 1967) थी। इस पुस्तक में मैक्ग्रेगर ने प्रबन्ध की परम्परागत अवधारणा को चुनौती दी और यह दर्शाया कि किस प्रकार प्रबन्धकीय हस्तक्षेप और समझ से उद्यम में मानवीय पक्ष का विकास किया जा सकता है। इन पुस्तकों के अलावा भी मैक्ग्रेगर ने अनेक लेख लिखे। मैक्ग्रेगर का प्रबन्ध को योगदान अनेक क्षेत्रों में है। मुख्यतः उनका योगदान निम्न क्षेत्रों में है– 'सिद्धान्त–एक्स' तथा 'सिद्धान्त–वाई', मतभेदों का प्रबन्ध, स्केनलॉन प्लान, व्यावहारिक विश्लेषण आदि। परन्तु अभिप्रेरणा का उनका सिद्धान्त ही सर्वाधिक लोकप्रिय है। मैक्ग्रेगर के अभिप्रेरणा के इसी सिद्धान्त की विस्तृत चर्चा इस अध्याय में की जाएगी।

थ्योरी– X तथा थ्योरी–Y (Theory-X and Theory-Y)

अभिप्रेरणा को प्रबन्ध का हृदय कहा गया है। किसी भी संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि उसके सदस्यों को इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए अभिप्रेरित किया जाए। प्रश्न यह उठता है कि प्रबन्ध अपने कर्मचारियों को किस प्रकार अभिप्रेरित कर सकता है? अथवा प्रबन्धक क्या करना चाहिए? इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर अनेक विचारक अपने–अपने सिद्धान्तों (विचारधाराओं) के जरिए देने का प्रयास करते हैं। इन्हीं विचारधाराओं में एक विचारधारा है– 'थ्योरी–X तथा थ्योरी–Y' जिनका प्रतिपादन प्रो. डगलस मैक्ग्रेगर ने किया। मैक्ग्रेगर अपने

सिद्धान्त के प्रतिपादन में अब्राहम मास्लो से काफी प्रभावित थे। मैक्ग्रेगर अपने समय के प्रबन्ध पर आरोप लगाते हुए कहते हैं :

निर्देशन तथा नियन्त्रण द्वारा प्रबन्ध.....संगठनात्मक उद्देश्यों के लिए प्रभावशाली अभिप्रेरणा को, आज की स्थितियों में, प्रोत्साहित करने में विफल होता है। यह विफल इसलिए होता है क्योंकि निर्देशन और नियन्त्रण उन लोगों को अभिप्रेरित करने का बेकार तरीका है जिनकी शारीरिक और सुरक्षात्मक आवश्यकताएँ सन्तुष्ट होती हैं तथा सामाजिक, अहमवादी और आत्म–पूर्ति की आवश्यकताएँ प्रभुत्व में होती हैं।

मैक्ग्रेगर ने अपनी पुस्तक 'दी ह्यूमन साइड ऑफ एन्टरप्राइज' में थ्योरी–X और थ्योरी–Y का प्रतिपादन किया। इससे पूर्व मेयों के हॉथोर्न प्रयोग किए जा चुके थे। मेयो के कार्यों और विशेषकर 'भीड़ : परिकल्पना' (रेबल हायपोथेसिस) में मैक्ग्रेगर के सिद्धान्त–X तथा सिद्धान्त–Y के लिए रास्ता तैयार किया। मैक्ग्रेगर लिखते हैं : मानवीय व्यवहार का पूर्वानुमान लगाया जा सकता है.....हम अपनी नियन्त्रण करने की क्षमता को सुधार सकते हैं यदि यह पहचान कर लें कि नियन्त्रण मानवीय प्रकृति के चयनित अनुकूलन से बना है बजाय इसके कि मानवीय प्रकृति को हम अपनी इच्छाओं के समान बनाने का प्रयास करें। यदि हमारे नियन्त्रण के प्रयास असफल रहते हैं तो इसका सामान्य कारण अनुपयुक्त साधनों के चयन में निहित है।

मैक्ग्रेगर का मत है कि केन्द्रीयकृत निर्णयन, पदसोपानात्मक पिरामिड और कार्य के बाह्य नियन्त्रण वाले परम्परागत संगठन मानवीय प्रकृति और मानवीय व्यवहार की कतिपय मान्यताओं पर आधारित होते हैं। इन मान्यताओं को मैक्ग्रेगर 'थ्योरी–X' कहकर पुकारते हैं। ये मान्यताएँ काफी कुछ मेयो द्वारा रैबल परिकल्पना से सम्बन्धित मान्यताओं से मेल खाती हैं। इसके विपरीत मैक्ग्रैगर मानवीय प्रकृति की सकारात्मक प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुए 'थ्योरी–Y' का प्रतिपादन करते हैं।

मैक्ग्रेगर की 'थ्योरी–X' की मुख्य मान्यताओं को निम्न बिन्दुओं से दर्शाया गया है :

1. कार्य की अरुचि : 'थ्योरी–X' यह मानकर चलती है कि अधिकांश लोगों में कार्य के प्रति अरुचि पाई जाती है। यह लोगों के प्रति नकारात्मक सोच पर आधारित है कि व्यक्ति कार्य नहीं करना चाहता। कार्य के प्रति अन्तर्निहित अरुचि के कारण जहाँ तक हो सकता है व्यक्ति काम से बचने की कोशिश करता है। इसलिए व्यक्ति से काम लेने के लिए उसे दण्डित किया जाना चाहिए तथा धमकियों का सहारा लेना चाहिए।
2. कम महत्त्वाकांक्षा, उत्तरदायित्व लेने की अरुचि और निर्देशन को वरीयता : अधिकांश व्यक्ति महत्त्वाकांक्षी नहीं होते हैं तथा वे अपनी वर्तमान स्थिति से ही सन्तुष्ट होते हैं। उनमें उत्तरदायित्व ग्रहण करने की काफी कम इच्छा पाई जाती है तथा वे निर्देशित होना अधिक पसन्द करते हैं।
3. संगठनात्मक समस्याओं को सुलझाने में रचनात्मक क्षमता की कमी : संगठन की समस्याओं का समाधान सहयोगी क्रिया द्वारा ही सम्भव है पर इस विचारधारा के अनुसार संगठन के अधिकांश व्यक्तियों में समस्या समाधान की सृजनात्मक क्षमता की कमी पाई जाती है।
4. शारीरिक और सुरक्षात्मक आवश्यकता स्तर पर ही अभिप्रेरणा : मानव की आवश्यकताओं में सबसे निम्न स्तरीय आवश्यकताएँ शारीरिक और सुरक्षात्मक होती है। 'थ्योरी–X' की मान्यता है कि अभिप्रेरणा केवल शारीरिक और सुरक्षात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति करके ही उत्पन्न की जा सकती है। व्यक्ति को धन, फ्रिज परिलाभों तथा सुरक्षा प्रदान करके ही अभिप्रेरित किया जा सकता है।
5. कठोर नियन्त्रण और दण्ड : चूँकि व्यक्ति संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति में अधिक रुचि नहीं लेता है अतः अधिकांश लोगों को संगठनात्मक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उन पर कठोर नियन्त्रण किया जाना चाहिए तथा उन्हें दण्ड भी दिया जाना चाहिए।

'थ्योरी–X' की विवेचना करने के पश्चात् मैक्ग्रेगर इस बात का परीक्षण करते हैं कि क्या मानवीय प्रकृति के बारे में विचार सही हैं और क्या आज की परिस्थितियों में इस विचारधारा पर आधारित प्रबन्धकीय व्यवहार उपयुक्त हैं? उनका मानना है कि शिक्षा और जीवन स्तर में बढ़ोतरी के कारण क्या व्यक्ति अधिक जिम्मेदाराना व्यवहार करने में सक्षम है? मैक्ग्रेगर ने बाद में यह माना कि मानवीय प्रकृति के बारे में 'थ्योरी–X' की मान्यताएँ सही नहीं हैं और जो संगठन 'थ्योरी–X' मान्यताओं पर आधारित होते हैं वे अपने कर्मचारियों को अभिप्रेरित नहीं कर सकते। उनका मानना है कि निर्देशन और नियन्त्रण द्वारा प्रबन्ध सफल नहीं हो सकता क्योंकि निर्देशन और नियन्त्रण उन लोगों को अभिप्रेरित करने का फालतू तरीका है जिसकी शारीरिक और सुरक्षात्मक आवश्यकताएँ तो सन्तुष्ट हो चुकी होती हैं और सामाजिक, अहमवादी और आत्म–विश्लेषण की आवश्यकताएँ प्रभुत्व में होती हैं। मैक्ग्रेगर ने महसूस किया कि प्रबन्ध की मानवीय प्रकृति और अभिप्रेरणा की अधिक सही समझ रखने वाले व्यवहारों की आवश्यकता है। इसलिए उन्होंने मानवीय व्यवहार की एक वैकल्पिक थ्योरी का विकास किया, जिसे उन्होंने 'थ्योरी–Y' का नाम दिया। यह विचारधारा मानवीय प्रकृति की सकारात्मक और आशावादी विचारधारा है जो यह मानकर चलती है कि प्रकृति से लोग आलसी और अविश्वसनीय नहीं होते हैं। यह सुझाव देती है कि यदि लोगों को ठीक से अभिप्रेरित किया जाए तो वे कार्य करने के लिए अधिक रचनात्मक हो सके हैं। मैक्ग्रेगर की 'थ्योरी–Y' निम्न मान्यताओं पर आधारित है :

1. कार्य उतना ही स्वाभाविक होता है जितना कि खेलना : 'थ्योरी–Y' यह मानकर चलती है कि कार्य करना उतना ही स्वाभाविक है जितना कि खेलना और आराम करना। जिस प्रकार खेलने और आराम करने से व्यक्ति आनन्दित होता है उसी प्रकार यदि व्यक्ति को अनुकल दशाएँ उपलब्ध कराई जाएँ तो वह कार्य करने से भी आनन्द प्राप्त करता है। इस प्रकार 'थ्योरी–Y' सकारात्मक धारणा पर आधारित है कि उपयुक्त कार्य दशाएँ मिलने पर व्यक्ति काम करने की प्रवृति रखते हैं।
2. आत्म–नियन्त्रण : 'थ्योरी–Y' इस मान्यता पर आधारित है कि संगठनात्मक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए आत्म–नियन्त्रण अति–आवश्यक है। आत्म–नियन्त्रण या स्व–नियन्त्रित व्यक्ति संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने में अधिक अभिप्रेरित होता है।
3. समस्या समाधान के लिए उच्च सृजनात्मकता : व्यक्तियों में संगठन की समस्याओं के समाधान की उच्च सृजनात्मकता होती है। यह सृजनात्मकता संकुचित न होकर जनसंख्या में विस्तृत रूप से वितरित होती है। इस प्रकार यह सकारात्मक धारणा है और लोगों की संगठनात्मक समस्याओं के समाधान में रुचि को प्रदर्शित करती है।
4. अभिप्रेरणा सभी आवश्यकताओं पर : 'थ्योरी–Y' की मान्यता है कि इन निम्न स्तरीय आवश्यकताओं के साथ–साथ उच्च स्तरीय सामाजिक, सम्मान और आत्म–विश्लेषण की आवश्यकताओं की पूर्ति करके भी अभिप्रेरित किया जा सकता है। अर्थात् केवल भौतिक परिलाभों द्वारा ही नहीं बल्कि अनौपचारिक साधनों द्वारा भी व्यक्ति को अभिप्ररित किया जा सकता है।
5. स्व–निर्देशन और रचनात्मकता : यदि व्यक्ति को ठीक ढंग से अभिप्रेरित किया जाए तो वह स्व–निर्देशित और अधिक रचनात्मक हो सकता है।
6. उत्तरदायित्व स्वीकार करना : सामान्यतया व्यक्ति को यदि अच्छी दशाएँ उपलब्ध कराई जाएँ तो वह न केवल उत्तरदायित्व को स्वीकार ही करता है अपितु उसकी खोज भी करता है। अर्थात् व्यक्ति उत्तरदायित्वों से बचता नहीं है और उन्हें स्वेच्छा से स्वीकार करता है। मैक्ग्रेगर स्वयं लिखते हैं –

'थ्योरी–X' हमें स्वाभाविक रूप से नियन्त्रण के तरीकों पर जोर देने की ओर ले जाती है। यह उन प्रविधियों और तकनीकों की ओर ले जाती है जो लोगों को बताती हैं कि क्या करना है, यह निर्धारित करना, यदि वे कार्य कर रहे हैं और पुरस्कारों तथा दण्ड के प्रशासन की ओर ले जाती है। इसका कारण यह उल्लेखनीय मान्यता है कि उद्यम

की सफलता के लिए लोगों को क्या करना है। यह बताने के लिए निर्देशन तथा नियन्त्रण की तकनीकों पर सीधा ध्यान देना जरुरी है। इसके विपरीत 'थ्योरी–Y' सम्बन्धों की प्रकृति पर ध्यान देने की ओर ले जाती है। वह ऐसा उस प्रकार का पर्यावरण सृजित करके करती है जो संगठनात्मक उद्देश्यों के प्रति प्रतिबद्धता को प्रोत्साहित करता है और जो उन उद्देश्यों की प्राप्ति में पहल, बुद्धि तथा आत्म निर्देशन के अधिकाधिक व्यवहार में लेने के अवसर प्रदान करता है।''

इस प्रकार 'सिद्धान्त–Y' मानवीय प्रकृति के सकारात्मक पक्ष को महत्त्व देता है। संक्षेप में, मैक्ग्रेगर की 'थ्योरी–X' और 'थ्योरी–Y' को निम्न तालिका द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है –

'थ्योरी–X'	'थ्योरी–Y'
1. कार्य अधिकांश लोगों के लिए अरूचिकर होता है।	1. कार्य उतना ही स्वाभाविक है जितना कि खेलना।
2. अधिकांश लोग महत्वाकांक्षी नहीं होते, उत्तरदायित्व लेने की कम इच्छा होती है तथा निर्देशित होना अधिक पसन्द करते हैं।	2. लोगो को यदि ठीक से अभिप्रेरित किया जाए तो वे स्व–निर्देशित हो सकते हैं और कार्य के लिए अधिक रचनात्मक हो सकते हैं।
3. अधिकांश लोगों में संगठनात्मक समस्याओं के समाधान के लिए रचनात्मक क्षमता की कमी होती है।	3. संगठनात्मक समस्याओं के समाधान की रचनात्मक क्षमता लोगों के व्यापक रूप से वितरित होती है।
4. अभिप्रेरणा केवल शारीरिक और सुरक्षात्मक आवश्यकता स्तरों पर ही होती है।	4. अभिप्रेरणा केवल शारीरिक और सुरक्षात्मक स्तर पर ही नहीं बल्कि सामाजिक, सम्मान व आत्म–विश्लेषण पर भी घटित होती है।
5. संगठनात्मक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अधिकांश लोगों पर कड़ा नियन्त्रण रखा जाता है व दण्डात्मक होना पड़ता है।	5. यदि स्थितियाँ अनुकूल हों तो संगठनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए स्व–नियन्त्रण आवश्यक होता है।

अति–संक्षेप में, मैक्ग्रेगर की 'थ्योरी–X' तथा 'थ्योरी–Y' की विशेषताओं को निकोलस हेनरी के शब्दों में इस प्रकार वर्णित किया जा सकता है :

'थ्योरी–X' बन्द मॉडल विशेषतया नौकरशाही सिद्धान्त पर लागू होती है। इसका मुख्य विश्वास यह मानना है कि अधिकांश लोग कार्य को पसन्द नहीं करते हैं, अधिकांश लोग बन्द और लगातार पर्यवेक्षण को पसन्द करते हैं, अधिकांश लोग संगठनात्मक समस्याओं को सुलझाने में रचनात्मक योगदान नहीं कर सकते, कार्य का अभिप्रेरण एक व्यक्तिगत मामला होता है और अधिकांश लोगों को प्रत्यक्ष धमकी और दण्ड को लागू करके अभिप्रेरित किया जा सकता है। .....थ्योरी–Y, जिसको कि अन्य शीर्षक दिए जा सकते हैं, जैसे प्रणाली 4, आत्म–विश्लेषण, अन्त अभिप्रेरणा और 'यूपशिचियान' प्रबन्ध, अलग विश्वास संरचना वाली होती है। 'थ्योरी–Y, मानती है कि यदि अच्छी दशाएँ प्रदान की जाएँ, तो अधिकांश लोग कार्य को भी खेल के समान मजे से करते हैं, अधिकांश लोग स्व–नियन्त्रण लागू कर सकते हैं और अपना कार्य अपने ही तरीके से करना पसन्द करते हैं, अधिकांश लोग रचनात्मक रूप से संगठनात्मक समस्याओं को सुलझाते हैं, कार्य पर अभिप्रेरणा एक सामूहिक मामला है और अधिकांश लोगों को सामाजिक और अहम् पुरस्कारों द्वारा अभिप्रेरित किया जा सकता है।

इस प्रकार 'थ्योरी–X' और 'थ्योरी–Y' को जानने के बाद भी यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि जो प्रबन्धक मानवीय प्रकृति की 'थ्योरी–X' मान्यताओं को स्वीकार करते हैं वे लोगों को अधिक निर्देशित, नियन्त्रित और पर्यवेक्षित करते हैं। इसके विपरीत 'थ्योरी–Y' के समर्थक प्रबन्धक सहयोगी और उत्प्रेरक होते हैं। परन्तु पाल हर्सी, ब्लेनकार्ड एवं जॉनसन आगाह करते हैं कि यह निष्कर्ष नहीं निकाला जाना चाहिए क्योंकि इसका अर्थ यह होगा कि

'थ्योरी–X' 'बुरी' है और 'थ्योरी–Y' 'अच्छी'। वे कहते हैं कि 'थ्योरी–X' और 'थ्योरी–Y' लोगों की अभिवृत्तियों या रुचियों (Predispositions) को दर्शाती है। इसलिए एक प्रबन्धक के लिए 'थ्योरी–Y' से सम्बन्धित मान्यताएँ अच्छी हो सकती हैं पर हर समय इन्हीं मान्यताओं के आधार पर कार्य करना उपयुक्त नहीं हो सकता।

मानवीय प्रकृति का मैक्ग्रेगरवादी सैद्धान्तिकरण संगठनों के संचालन में काफी उपयोगी साबित होती है। इसने प्रबन्धकों को श्थ्योरी–ल्श्की मान्यताओं के आधार पर कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने का आग्रह किया है। मैक्ग्रेगर द्वारा सुझाई गई रणनीतियाँ जो 'थ्योरी–Y' से सम्बन्धित हैं आज के संगठनों में लाइन–स्टाफ सम्बन्धों के लिए काफी प्रासंगिकता रखती हैं। वे सूत्र प्रबन्धक जो 'थ्योरी–Y' से सम्बन्धित सन्दर्भ में सहयोग खोजते हैं, वे अपने अधिनस्थों, अपने उच्च अधिकारियों तथा अपने सहकर्मियों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने में सफल हो जाते हैं। मैक्ग्रेगर के मत में 'थ्योरी–Y' संगठन के प्रत्येक स्तर पर टीम भावना से कार्य करने पर जोर देती है। यह लाइन–स्टाफ सहयोग बढ़ाने में भी सहायक होती है । ''आज के प्रशासन में 'थ्योरी–Y' की ओर बढ़ने की प्रवृत्ति है तथा भविष्य में ओर अधिक लोकतान्त्रिक प्रशासन होगा।'' मैक्ग्रेगर स्वयं मानते हैं कि 'थ्योरी–X' अब व्यापक रूप से अधिक उपयुक्त नहीं हो सकती। 'थ्योरी–X' मानवीय प्रकृति की नकारात्मक भावनाओं की व्याख्या करती है जबकि 'थ्योरी–Y' सकारात्मक भावनाएँ दर्शाती हैं।

सम्बन्ध : मैक्ग्रेगर की 'थ्योरी–X' तथा 'थ्योरी–Y' की तुलना अन्य विचारकों की विचारधाराओं से की जाती है। मैक्ग्रेगर की इन विचारधाराओं की तुलना रेन्सिस लिकर्ट की प्रणाली–1–4 से की जा सकती है। इस तुलना को निम्न रेखाचित्र में दर्शाया जा रहा

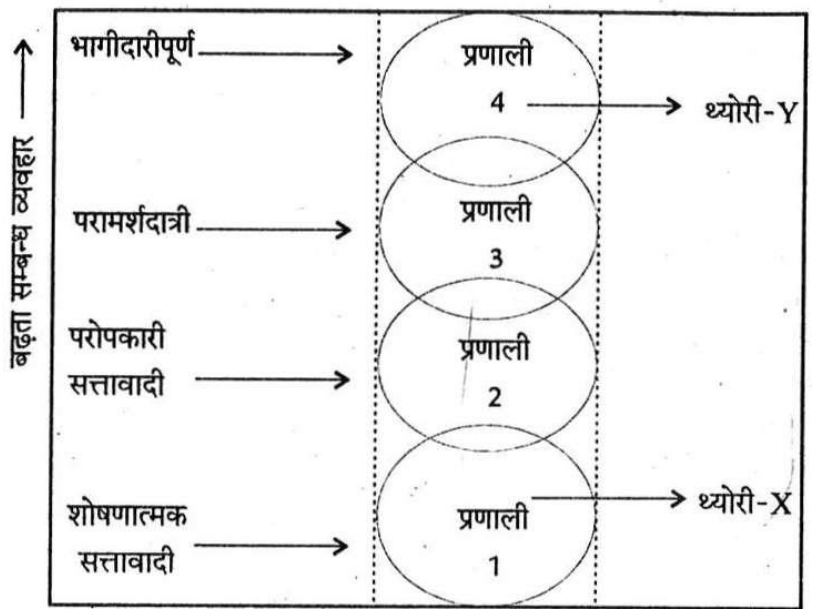

चित्र–1 : मैक्ग्रेगर व लिकर्ट की विचारधाराओं की तुलना

रेन्सिस लिकर्ट की प्रणाली–1 मैक्ग्रेगर की 'थ्योरी–X' की मान्यताओं से सम्बन्धित है। इसके अनुसार अधिकांश लोग निर्देशित होना अधिक पसन्द करते हैं, उत्तरदायित्व लेने में कोई रुचि नहीं रखते और सुरक्षा को ही सर्वोच्च प्राथमिकता देते हैं। इसी प्रकार प्रणाली–4 'थ्योरी–Y' की मान्यताओं से मेल खाती है।

इसी प्रकार मैक्ग्रेगर, हर्जबर्ग तथा मैस्लो की विचारधाराओं में सम्बन्ध इस प्रकार प्रकट किए जा सकते हैं

मैस्लो	हर्जबर्ग	मैक्ग्रेगर
➢ उच्च स्तरीय जरूरतें ✓ आतम–विश्लेषण ✓ सम्मान (कुछ हद तक सामाजिक भी) ➢ निम्नस्तरीय जरूरतें ✓ सामाजिक ✓ सुरक्षात्मक ✓ शारीरिक	➢ अभिप्रेरक ✓ उपलब्धि ✓ प्राप्ति की पहचान ✓ चुनौतिपूर्ण कार्य ✓ बढ़ा हुआ उत्तरदायित्व ✓ संवृद्धि और विकास ➢ आरोग्य घटक ✓ नीतियाँ और प्रशासन ✓ पर्यवेक्षण ✓ कार्य–दशाएँ ✓ अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्ध ✓ धन, प्रस्थिति, सुरक्षा	➢ 'थ्योरी–Y' ✓ स्व–निर्देशिन ✓ स्व–नियन्त्रण ✓ उत्तरदायित्व ✓ अहम् की सन्तुष्टि ➢ 'थ्योरी–X' ✓ कार्य की अनिच्छा ✓ निर्देशन पसन्द ✓ सुरक्षा को प्राथमिकता ✓ दण्ड व धमकी का उपयोग ✓ कम रचनात्मकता।

मूल्यांकन

(Evaluation)

'थ्योरी–X' तथा 'थ्योरी–Y' मैक्ग्रेगर का प्रबन्ध को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान है। यद्यपि उनके विचारों की काफी आलोचना की जाती है तथापि उनकी उपयोगिता मानवीय प्रकृति को समझाने में काफी सहायक है। मैक्ग्रेगर की सर्वप्रथम आलोचना यह की जाती है कि उनका सैद्धान्तीकरण मात्र मान्यताओं पर आधारित है न कि किसी आनुभविक शोध कार्यों पर। मैक्ग्रेगर की 'थ्योरी–X' तथा 'थ्योरी–Y' मानवीय प्रकृति की व्याख्या नहीं कर सकती क्योंकि मानवीय व्यवहार काफी जटिल होता है तथा यह परिस्थितियों के अनुसार बदलता रहता है। सिद्धान्त–X पूर्णतया नकारात्मक और निराशावादी दृष्टिकोण पर आधारित होने के कारण आज के समय में काफी सीमित महत्त्व रखता है। 'यदि कर्मचारी आलसी, तटस्थ, अनिच्छुक, जिम्मेदारी से कतराने वाला, हठी तथा दुराग्रही, अरचनात्मक व असहयोगी प्रकृति वाला है तो 'थ्योरी–Y' के अनुसार इसके कारण संगठन के प्रबन्ध की तकनीक व नियन्त्रण व्यवहारों में खोजे जाने चाहिए। फिर भी ये सिद्धान्त प्रबन्ध पर आश्चर्यजनक प्रभाव छोड़ते हैं।

अध्याय – 6

फ्रेडरिक हर्जबर्ग

(FREDERICK HERZBERG)

''हमने नोट किया है कि जैसे–जैसे लोग विकसित होते जाते हैं वैसे–वैसे सम्मान और आत्म–विश्लेपण की आवश्यकताएँ अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती हैं। इन क्षेत्रों पर अपना ध्यान केन्द्रित करने वाले बहुत से अध्ययनों की श्रृंखला में फ्रेडरिक हर्जबर्ग द्वारा निर्देशित अध्ययन श्रृंखला है। इन अध्ययनों से कार्य अभिप्रेरणा की एक विचारधारा विकसित की गई है जिसका प्रबन्ध पर व्यापक प्रभाव है और मानवीय संसाधनों के प्रभावी उपयोग के लिए उपयोगी है।''

–पॉल ही, ब्लैनकार्ड एवं जॉनसन

अभिप्रेरणा के क्षेत्र में योगदान देने वाले विद्वानों में एक महत्त्वपूर्ण विद्वान् फ्रेडरिक हर्जबर्ग हैं। हर्जबर्ग एक अमरीकी मनोवैज्ञानिक थे जिन्होंने अभिप्रेरणा की 'द्वि–घटकीय विचारधारा का प्रतिपादन किया। इसे मोटीवेशन–हाइजीन थ्योरी भी कहा जाता है। हर्जबर्ग की अभिप्रेरणा की विचारधारा उन कार्य अनुभवों पर आधारित है जो अमेरिका के पिट्सबर्ग की नौ कम्पनियों के अभियन्ताओं और लेखाकारों ने अनुभव किए थे। हर्जबर्ग ने अपने अध्ययन में आलोचनात्मक घटना तकनीक, साक्षात्कार और अन्तर्वस्तु विश्लेषण की तकनीक को अपनाया। उनके अध्ययन के मुख्य उद्देश्य थे– पहला, उन कारकों को पहचानना जो कि कार्य के प्रति व्यक्ति की सकारात्मक या नकारात्मक प्रवृत्तियों को जन्म देते हैं तथा दूसरा, इन प्रवृत्तियों का कार्य–निष्पादन, उत्पादन, मानसिक स्वास्थ्य और विशिष्ट प्रवृत्तियों पर प्रभावों का अध्ययन करना। 1923 में अमेरिका में जन्मे हर्जबर्ग ने कुछ पुस्तकें लिखीं जिनमें से प्रमुख हैं : The Motivation to Work (co-author) (1959), Work and The Nature of Man (1966)

इन पुस्तकों के अलावा हर्जबर्ग ने कई लेख लिखे जो विभिन्न पत्रिकाओं में छपे।फ्रेडरिक हर्जबर्ग का प्रबन्ध को योगदान विशिष्ट श्रेणी का है। अभिप्रेरणा, कार्य समृद्धिकरण आदि के क्षेत्र में उनका मौलिक योगदान है।

अभिप्रेरणा का द्वि–कारकी सिद्धान्त (Two-Factor Theory of Motivation)

फ्रेडरिक हर्जबर्ग का अभिप्रेरणा का सिद्धान्त 'द्वि–कारकी' या 'द्वि–घटकी' सिद्धान्त कहलाता है। हर्जबर्ग ने इन घटकों की पहचान क्रमशः आरोग्य घटक (हाइजीन फैक्टर्स) तथा अभिप्रेरक (मोटीवेटर्स) के रूप में की है। हर्जबर्ग के अध्ययनों से पूर्व प्रबन्धकों का ज्यादा ध्यान संगठन में अरोग्य घटकों को सुधारने में ही लगता था। जब भी कोई गड़बड़ होती, तो वे वेतन बढ़ाकर या कार्य–दशाएँ सुधार कर समस्या को हल करने का प्रयास करते। परन्तु इस प्रकार के उपायों से वे कर्मचारी को अभिप्रेरित नहीं कर पाते थे। हर्जबर्ग के सिद्धान्त ने न केवल अभिप्रेरणा की समस्या की व्याख्या ही की अपितु प्रबन्धकों को यह भी समझाया कि सिर्फ आरोग्य घटकों पर ध्यान देने के बजाय अभिप्रेरणात्मक घटकों पर भी ध्यान दिया जाए। हर्जबर्ग कहते हैं : ''एक व्यक्ति के लिए उन बलों का अध्ययन अधिक खुशी और अधिक आत्म–महसूस की भावना लाता है जो उन्नत मनोबल की ओर ले जाते हैं।''

अपने साथियों के साथ पिट्सबर्ग अध्ययनों में लिए गए साक्षात्कारों में उन्होंने साक्षात्कारदाताओं से पूछा कि किस प्रकार की चीजें उनको कार्य करते समय नाखुश करती हैं या असन्तुष्टि लाती हैं और कौन–सी चीजें उनको खुश करती हैं या सन्तुष्टि देती हैं। अपने साक्षात्कारों से प्राप्त आँकड़ों और सूचनाओं के आधार पर हर्जबर्ग ने

निष्कर्ष निकाला कि लोगों की आवश्यकताओं की दो श्रेणियाँ होती हैं– आरोग्य घटक और अभिप्रेरक। ये दोनों श्रेणियाँ एक–दूसरे से स्वतन्त्र होती हैं और व्यवहार को विभिन्न तरीकों से प्रभावित करती हैं। हर्जबर्ग आवश्यकताओं की प्रथम श्रेणी को आरोग्य घटक या संधारण घटक कहते हैं। आरोग्य इसलिए क्योंकि वे लोगों के. वातावरण की व्याख्या करते हैं और कार्य–असन्तुष्टि को रोकने का प्राथमिक कार्य करते हैं। इनको संधारण घटक इसलिए कहा जाता है क्योंकि ये कभी भी पूर्णतः सन्तुष्ट नहीं होते और उनका सदैव संधारण (Maintinance) किया जाता है। हर्जबर्ग आवश्यकताओं की दूसरी श्रेणी को अभिप्रेरक (Motivators) कहते हैं क्योंकि ये लोगों को उच्च निष्पादन के लिए अभिप्रेरित करते हैं। निम्न तालिका से आरोग्य घटकों और अभिप्रेरको का संक्षिप्त रूप स्पष्ट है :

तालिका – 1 : आरोग्य घटक तथा अभिप्रेरक

आरोग्य घटक (पर्यावरण)	अभिप्रेरक (स्वयं कार्य)
➢ नीतियाँ और प्रशासन (Policies & Administration)	➢ उपलब्धि (Achievement)
➢ पर्यवेक्षण (Supervision)	➢ प्राप्ति की पहचान (Recognition for Accomplishment)
➢ कार्य दशाएँ (Work Conditions)	➢ चुनौतीपूर्ण कार्य (Challenging Work)
➢ अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्ध (Interpersonal Relations)	➢ बढ़ा हुआ उत्तरदायित्व (Increased Responsibility)
➢ घन, प्रस्थिति, सुरक्षा (Money, Status, Security)	➢ संवृद्धि और विकास (Growth and Development)

1. **आरोग्य घटक :** हर्जबर्ग अपने द्वि–घटकी सिद्धान्त के प्रथम घटकों को आरोग्य घटक या हाइजीन घटक कहते हैं। आरोग्य घटक वे हैं जो व्यक्ति को अभिप्रेरित तो नहीं करते लेकिन कार्य की असन्तुष्टि को रोकने का प्राथमिक कार्य करते हैं। ये घटक व्यक्ति के पर्यावरण की व्याख्या करते हैं। हर्जबर्ग ने आरोग्य घटकों में निम्न को शामिल किया है :

- नीतियाँ और प्रशासन : यहाँ कम्पनी की नीतियों और प्रशासन का महत्त्व है। व्यक्ति को कम्पनी की नीतियाँ और प्रशासन प्रभावित करते हैं। यदि कम्पनी की नीतियाँ और प्रशासन अच्छा होता है, तो व्यक्ति अपने कार्य से कम असन्तुष्टि महसूस करता है।
- पर्यवेक्षण : संस्था में प्रत्येक कार्य का पर्यवेक्षण होता है। अच्छा पर्यवेक्षण कम्पनी के कार्मिकों को असन्तुष्ट नहीं होने देता।
- कार्य–दशाएँ : यदि कम्पनी की कार्य–दशाएँ प्रतिकूल हों तो व्यक्ति का असन्तुष्ट होना स्वाभाविक है। अच्छी कार्य–दशाएँ व्यक्ति की असन्तुष्टि को रोकती हैं।
- अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्ध : संस्था की व्यक्तियों के बीच में सम्बन्ध भी व्यक्ति को प्रभावित करते हैं। यदि संस्था में अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्ध अच्छे हों तो व्यक्ति कम असन्तुष्टि महसूस करता है।
- धन, प्रस्थिति, सुरक्षा : व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वेतन के रूप में संस्था से धन प्राप्त करता है। साथ ही व्यक्ति संस्था में अपनी प्रस्थिति से भी प्रभावित होता है। सुरक्षा की आवश्यकता भी इसकी प्राथमिक आवश्यकताओं में है। इनकी कमी में वह अपने कार्य से असन्तुष्टि महसूस करता है।

इस प्रकार उपरलिखित संधारण घटक होते हैं। ये उन दशाओं से जुड़े होते हैं जिनमें कि व्यक्ति कार्य करता है। हर्जबर्ग के अनुसार आरोग्य घटकों का महत्त्व इस प्रकार है :– स्वास्थ्य खतरों को रोकने में कार्य करते हैं.....ये उपचारात्मक नहीं होते बल्कि बचाव करने वाले होते हैं.....इसी प्रकार जब कार्य सन्दर्भ में नुकसानदायक घटक होते हैं तो कमजोर कार्य प्रवृत्तियाँ लाते हैं। इन आरोग्य घटकों में उन्नति लाने से कार्य की सकारात्मक प्रवृत्तियों के मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर किया जा सकता है।

2. **अभिप्रेरक (मोटीवेटर्स) :** आरोग्य घटकों के विपरीत अभिप्रेरक व्यक्ति को उच्च निष्पादन के लिए अभिप्रेरित करते हैं। अभिप्रेरकों में हर्जबर्ग ने निम्न को शामिल किया है :

- उपलब्धि : उपलब्धि व्यक्ति की समस्याओं को सुलझाने, कार्य लक्ष्य को प्राप्त करने तथा अपने प्रयासों के परिणाम प्राप्त करने पर मिलने वाली सन्तुष्टि है। व्यक्ति अपनी उपलब्धियों से अभिप्रेरित होता है।
- प्राप्ति पर पहचान : जब व्यक्ति कोई प्रयास करता है और उसे कुछ प्राप्त होता है (Accomplishment) तो व्यक्ति सन्तुष्ट होता है और वह अधिक कार्य करने को अभिप्रेरित होता है।
- चुनौतीपूर्ण कार्य : कार्य की प्रकृति, उसमें रुचि, उसमें अन्तर्निहित चुनौती भी व्यक्ति को अभिप्रेरित करती है।
- बढ़ी हुई जिम्मेदारियाँ : जब व्यक्ति के दायित्वों में बढ़ोतरी कर दी जाती है तो व्यक्ति स्वयं को कुछ समझने लगता है और वह अभिप्रेरित होता है।
- संवृद्धि और विकास : व्यक्ति को जब अपनी संवृद्धि और विकास की जानकारी हो जाती है तो वह अपने कार्य के लिए अभिप्रेरित किया जा सकता है।

हर्जबर्ग अभिप्रेरकों को 'अभिप्रेरक' इसलिए कहते हैं क्योंकि ये घटक कार्य सन्तुष्टि पर सकारात्मक प्रभाव डालते हैं और इससे सामान्यतया व्यक्ति की उत्पादन क्षमता बढ़ जाती है।

हर्जबर्ग ने अपने लेख, "One More Time : How Do You Motivate Employees" में 'सन्तुष्टि प्रदान करने वाले घटकों (Satisfiers) तथा ''असन्तुष्टि प्रदान करने वाले घटकों'' (Dissatisfiers) का तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत किया है।

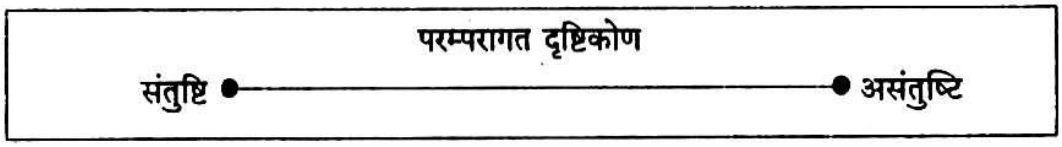

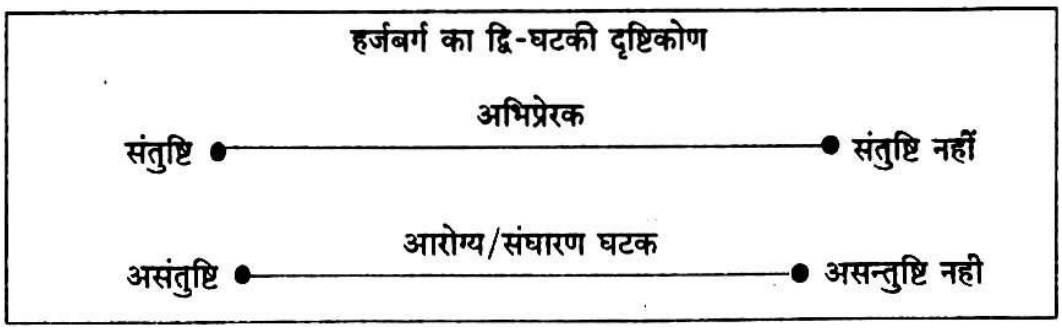

हर्जबर्ग संगठन में कार्यरत व्यक्तियों को दो समूहों में बाँटते हैं, जिन्हें वे 'आरोग्य खोजी' (Hygiene Seeker) तथा 'अभिप्रेरणा खोजी' (Motivation Seeker) कह कर पुकारते हैं। इन दोनों प्रकार के लोगों की विशेषताओं को निम्न सारणी में प्रदर्शित किया गया है :

आरोग्य – खोजी	अभिप्रेरणा – खोजी
1. पर्यावरण की प्रकृति से अभिप्रेरित होते हैं।	1. कार्य–लक्ष्य से अभिप्रेरित होते हैं।
2. कार्य सन्दर्भ के विभिन्न आयामों के साथ कालिक एव तीव्र असन्तोषप्रकट करते हैं जैसे वेतन, पर्यवेक्षण, कार्य–दशाएँ, प्रस्थिति, कार्य–सुरक्षा, कम्पनी नीति और प्रशासन, साथी कार्मिक।	2. कम आरोग्य घटकों पर भी तीव्र सहनशीलता 3. आरोग्य घटकों में उन्नति पर कम प्रतिक्रिया। 4. इसी के समान। 5. जब आरोग्य घटकों में सुधार (उन्नति) आवश्यक हो तो कम असन्तोष।
3. आरोग्य घटकों में उन्नति के बारे में अति–प्रतिक्रियावादिता।	
4. कम अवधि की सन्तुष्टि जब आरोग्य घटक उन्नत कर दिए जाते हैं।	6. उपलब्धियों से उच्च सन्तुष्टि महसूस करते हैं।
5. जब आरोग्य घटकों को उन्नत नहीं किया जाता है तो अति–प्रतिक्रिया।	7. जो काम वह करता है उसका आनन्द लेने की क्षमता दर्शाता है।
6. उपलब्धियों (प्राप्तियों) पर कम सन्तुष्टि महसूस करते हैं।	8. कार्य और जीवन के प्रति सकारात्मक भावनाएँ रखता है।
7. जिस कार्यको वह करता है उसके प्रकार और किस्म पर कम रूचि दिखाता है।	
8. कार्य के सकारात्मक गुणों और जीवन के प्रति कड़वाहट।	9. अनुभव से पेशेवर लाभ लेता है।
9. अनुभव से पेशेवर लाभ नहीं लेता है।	10. विश्वास प्रणालियाँ सच्ची और सुविचारित।
10. 'सांस्कृतिक' शोर–शराबे के लिए	
11. प्रतिभा की वजह से कार्य पर सफल हो सकते हैं।	11. अति–उपलब्धि पाने वाला हो सकता है।

नकारात्मक और सकारात्मक 'किटा' (Negative and Positive 'KITA')

अभिप्रेरणा के सन्दर्भ में हर्जबर्ग ने KITA ने का प्रयोग किया है। शाब्दिक रूप से 'किटा' का अर्थ होता है 'मूर्ख को दण्डित कीजिए' Kick Somebody in the Ass (अमेरिका में प्रचलित कहावत)। हर्जबर्ग कहते हैं कि 'किटा' अनेक प्रकार के होते हैं जिनमें से कुछ स्वरूप निम्न हैं– नकारात्मक–शारीरिक 'किटा', नकारात्मक–मनोवैज्ञानिक 'किटा' तथा सकारात्मक 'किटा'। अपने एक लेख One More Time : How Do You Motivate Employees" में हर्जबर्ग ने इस सम्बन्ध में विचार प्रकट किए हैं :

1. नकारात्मक–शारीरिक किटा (Nagative Physical 'KITA') : हर्जबर्ग कहते हैं कि यह 'पद' (Term) की शाब्दिक प्रयुक्ति है जिसका कि अतीव में काफी प्रयोग होता था। आपने इसकी तीन कमियाँ बताईं हैं– (क) यह तुच्छ (Inelegant) है (ख) यह अधिकांश संगठनों की परोपकारी होने की मूल्यवान 'इमेज' की विरोधाभासी है, तथा (ग) चूँकि यह एक शारीरिक आक्रमण है अतः यह स्वायत्त तंत्रिका तन्त्र को सीधे उत्तेजित करता है और इसके कारण कभी–कभी नकारात्मक 'फीडबैक' भी हो जाता है अर्थात् बदले में कर्मचारी आपकों भी 'लात मार' सकता है। उपर्युक्त कारणों से ही नकारात्मक शारीरिक 'किटा' के प्रति कुछ 'निषेध' (Taboos) पनपे। हर्जबर्ग कहते हैं कि जो लोक नकारात्मक शारीरिक 'किटा' को ओर अधिक काम में नहीं लेना चाहते उनके बचाव के लिए कई मनोवैज्ञानिक सामने आ चुके हैं।

2. नकारात्मक–मनोवैज्ञानिक 'किटा' (Negative Psychological 'KITA) हर्जबर्ग कहते हैं कि नकारात्मक–मनोवैज्ञानिक 'किटा' के पहले वाले 'किटा' से बेहतर लाभ हैं। फायदों के सम्बन्ध में वे कहते हैं: ....क्रूरता दिखती नहीं है आन्तरिक रूप से खून बहता है और देरी से खून बहता है। ..चूँकि यह अपनी प्रतिबन्धित शक्तियों द्वारा मस्तिष्क के बाहरी केन्द्रों को प्रभावित किया जाता है अतः इससे शारीरिक क्षति की सम्भावनाएँ कम हो जाती है.....चूँकि मनुष्य द्वारा अनुभव किए जाने वाले मनोवैज्ञानिक कष्टों की संख्या अनन्त है अतः 'किटा' की दिशा और दृश्य सम्भावनाएँ कई गुना बढ़ जाती है..... लात मारने वाला व्यक्ति व्यवस्था से गन्दा काम भी प्राप्त करवा लेता है.....जो लोग इसे व्यवहार में अपनाते हैं, इससे उनका 'अहम्' भी सन्तुष्ट हो जाता है। अन्त में, यदि कर्मचारी कोई शिकायत करता है तो हमेशा उसी पर आरोप लगाया जाएगा कि उसे 'पैरेनाइड' (व्यक्ति द्वारा यह मानना कि कोई उसे नुकसान पहुँचाना चाहता है) है क्योंकि इसमें किसी वास्तविक आक्रमण का कोई स्पष्ट सबूत नहीं होता है। हर्जबर्ग प्रश्न पूछते हैं कि नकारात्मक 'किटा' से क्या प्राप्त होता है? इसका उत्तर देते हुए वे कहते हैं कि नकारात्मक किटा केवल हलचल (Movement) पैदा करता है न कि अभिप्रेरित।
3. सकारात्मक 'किटा' (Positive 'KITA') : हर्जबर्ग कहते हैं कि यदि वे किसी से कहें कि उनके लिए या कम्पनी के लिए 'अमुक' काम कर दीजिए और इसके बदले में वे आपको पुरस्कार देंगे, एक प्रोत्साहन, उच्च–प्रस्थिति, पदोन्नति और अन्य सभी वस्तुएँ जो एक औद्योगिक संगठन में होती है तो क्या वे उसे अभिप्रेरित कर रहे है? एक राय में यही कहा जाएगा कि हाँ ''यह अभिप्रेरणा है''। हर्जबर्ग लिखते हैं :मेरे पास एक साल का 'शनाउजर' है। जब ये एक छोटा–सा पिल्ला था तो इसे चलाने के लिए मैं इसके पीछे की ओर एक लात मारता था और यह चल जाता। अब जब इसकी आज्ञाकारी ट्रैनिंग पूरी हो गई है तो मैं एक कुत्तों को खिलाया जाने वाला बिस्कुट लेकर शनाउजर को चला सकता हूँ।

हर्जबर्ग पूछते हैं कि इस उदाहरण में कौन अभिप्रेरित हुआ है– 'वे' या 'वह कुत्ता' ''कुत्ता बिस्कुट चाहता है पर वह मैं हूँ जो उसे चलाना चाहता हूँ। दुबारा कहें तो, मैं वह हूँ जो अभिप्रेरित हुआ हैं और कुत्ता वह है जो चला है (Move)। इस उदाहरण में जो कुछ मैंने किया था वह 'किटा' को सामने लागू करना था : मैंने खींचने (Push) का प्रयोग किया न कि 'धक्का देने का' (Puly)' हर्जबर्ग कहते हैं कि जब उद्योग में इस प्रकार के 'सकारात्मक किटाओं' (Positive Kitas) का उपयोग करने की इच्छा की जाती है तो उसके पास कुत्तों के खाने वाले बिस्कुटों की अविश्वसनीय संख्या और वैराइटी है ताकि इन्हें कर्मचारियों के सामने हिलाया जा सके और कर्मचारी कूदें।

नकारात्मक और सकारात्मक 'किटा' के बीच अन्तर बताते हुए हर्जबर्ग कहते हैं :

..... नकारात्मक 'किटा' रैप (Rape) के समान है तथा सकारात्मक 'किटा' 'बहलाकर शारीरिक सम्बन्ध बनाने जैसा' (Seduction) है। .....पहले वाली एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना है जबकि दूसरी वाली में आप स्वयं अपने पतन में भागीदार होते हैं।

वस्तुतः नकारात्मक शकिटाश शारीरिक या मनोवैज्ञानिक रूप से दण्डित करना है जबकि सकारात्मक 'किटा' कर्मचारियों को प्रोत्साहित करता है। नकारात्मक 'किटा' जहाँ बल प्रयोग पर ध्यान देता है वहीं सकारात्मक 'किटा' बहकाने या प्रलोभन से जुड़ा है।

कार्य समृद्धिकरण (Job Enrichment)

हर्जबर्ग के कार्यों से पूर्व अनेक व्यवहारवादियों का ध्यान कार्मिकों की अभिप्रेरणा पर था। कई वर्षों तक 'कार्य वृद्धिकरण' (जोब एनलारजमेण्ट) और 'कार्य रोटेशन' पर काफी जोर दिया गया। मान्यता यह थी कि कर्मचारियों के कार्य में वृद्धि करने से वे अधिक सन्तुष्टि महसूस करेंगे। इस दिशा में हर्जबर्ग ने अपने महत्त्वपूर्ण विचार प्रकट किए। उनका मत था कि अच्छा कार्य करने के लिए कार्य–समृद्धिकरण या जोब एनरिचमैण्ट आवश्यक है। कार्य

समृद्धिकरण का अर्थ है कार्य की जिम्मेदारी, क्षेत्र और चुनौती को जान–बुझकर उच्च करना अर्थात् Vertical Expansion of Jobs.

हर्जबर्ग के अनुसार कार्य समृद्धिकरण वह तकनीक है जो कम्पनी अपने कर्मचारियों को कार्य के लिए अधिकतम अभिप्रेरित करने के लिए काम में लेती है ताकि कार्य सन्तुष्टि बढ़ सके। हर्जबर्ग कहते हैं कि कार्य समृद्धिकरण से उन अनेक समस्याओं का समाधान किया जा सकता है जिनका कि सामना आज प्रबन्धक कर रहे हैं। जैसे कि कर्मचारियों के व्यवहार में तीव्र परिवर्तन, काम छोड़ने की प्रवृत्ति, अनुपस्थितिवाद, ढीलापन, हड़तालें, ऊँचे प्रशिक्षण खर्च, निम्न उत्पादन आदि।

हर्जबर्ग कहते हैं कि अक्सर प्रबन्धक कर्मचारी के व्यक्तिगत योगदान को कम करने में सफल हो जाते हैं पर उसका वर्तमान कार्य में संवृद्धि करने का अवसर प्रदान नहीं कर पाते हैं। हर्जबर्ग इसे 'क्षैतिज कार्य–भार लादना' कहते हैं। इसके विपरीत 'उर्ध्वाधर कार्य–भार लादने' से अभिप्रेरक घटक प्राप्त होते हैं। 'उर्ध्वाधर कार्य–भार लादने' का सिद्धान्त प्रक्रिया–लदान (Process Loading) को एक कार्य बनाना, अतिरिक्त लक्ष्य और उन उत्तरदायित्वों को शामिल करता है जो आरम्भिक कार्य–लक्ष्यों की तुलना में अधिक सन्तोष प्रदान कर सकते हैं। कार्य समृद्धिकरण की प्रक्रिया में फीडबैक प्रक्रिया काफी महत्त्वपूर्ण होती है। यह पहचान अभिप्रेरक को प्रभावित करती है। प्रभावी फीडबैक कर्मचारी और कार्य–लक्ष्यों के बीच व्यवहार के बीच होता है न कि कर्मचारी और पर्यवेक्षक के बीच। प्रभावी फीडबैक के निम्न लक्षण होते हैं :

1. यह कार्य–लक्ष्य निष्पादन से जुड़ा होता है न कि व्यक्तिगत लक्षणों से।
2. यह व्यक्तिगत आधार पर होता है न कि सामूहिक आधार पर।
3. यह अल्प–अन्तराल में घटित होता है।
4. यह कर्मचारी को कार्य–लक्ष्य से दिया जाता है न कि पर्यवेक्षक द्वारा।

जहाँ एक ओर 'जॉब एनलार्जमेण्ट' की प्रक्रिया कार्यों (Jobs) के क्षैतिज विस्तार (Horizontal Expansion) का आग्रह करती है वहीं 'जॉब एनरिचमेण्ट' कार्यों के उर्ध्वाधर विस्तार (Veritical Expansion) की ओर संकेत करता है। विशिष्ट अर्थ में एक 'कार्य' उस समय 'एनरिच्ड' माना जाता है जब उसकी प्रकृति रोमांचक (Exciting), चुनौतीपूर्ण और सृजनात्मक हो। या यू कहें कि एक 'एनरिच्ड' कार्य धारक के पास निर्णय–निर्माण, नियोजन और नियन्त्रण की अधिक शक्तियाँ होती है। प्रश्न यह उठता है कि प्रबन्धक अपने कर्मचारियों के कार्यों को किस प्रकार 'समृद्ध' करें? हर्जबर्ग के अनुसार एक 'एनरिच्ड जॉब' के निम्न 8 लक्षण होते हैं :

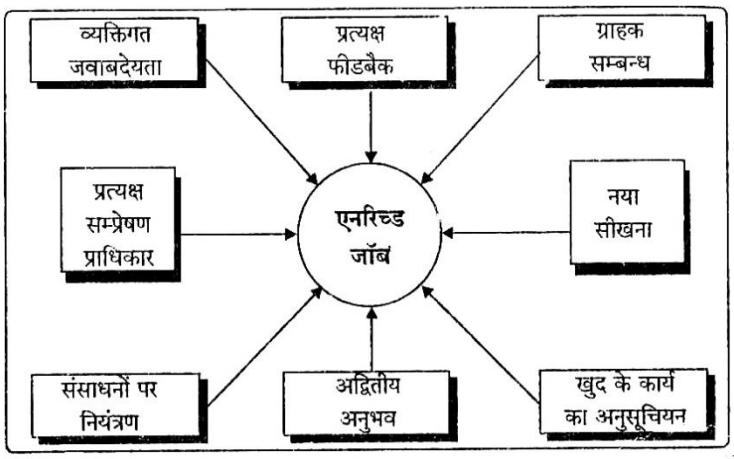

रेखाचित्र : 'एनरिच्ड जॉब' के लक्षण

प्रत्यक्ष फीडबैक (Direct Feedback)

कर्मचारियों को उन परिणामों के बारे में जानकारी प्राप्त होनी चाहिए जिनको कि वे प्राप्त कर रहे हैं। फीडबैक की प्रक्रिया द्वारा कर्मचारियों को इस बात की जानकारी हो जाती है कि वे अपने कार्यों का सम्पादन कितने अच्छे तरीके से कर रहे हैं। इसके अलावा उनको इस बात की भी जानकारी हो जाती है कि उनकी कार्य–निष्पादन की क्षमता सुधर रही है, कम हो रही है अथवा पहले जितनी ही है। फीडबैक की यह प्रक्रिया बिल्कुल प्रत्यक्ष होनी चाहिए न कि प्रबन्धकों द्वारा कभी–कभी ही इस पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

ग्राहक सम्बन्ध (Client Relationship)

जो कर्मचारी ग्राहक या उपभोक्ता की प्रत्यक्ष सेवा करता है उसका कार्य 'समृद्ध' माना जाता है। ग्राहक या क्लाइंट वह व्यक्ति होता है जो कर्मचारियों द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं अथवा उत्पादों का उपभोग करता है। यह ग्राहक फर्म के बाहर का आदमी भी हो सकता है और अन्दर का भी हो सकता है। प्रबन्धकों को चाहिए कि जहाँ तक सम्भव हो सके कर्मचारी और ग्राहकों के बीच प्रत्यक्ष सम्बन्धों की स्थापना का प्रयास करे इसका फायदा यह होगा कि 'कौशल विविधता' (Skill-variety) तथा स्वायत्तता में वृद्धि होगी और कर्मचारियों के सम्बन्ध में 'फीडबैक' भी बढ़ेगा।

नया सीखना (New Learning)

एक 'समृद्ध' कार्य उससे जुड़े पदाधिकारियों में यह भावना लाता है कि वह मानसिक रूप – से परिपक्व हो रहा/रही है। एक सहायक कार्मिक जो अपने 'बॉस' के लिए अखबारों में छपे लेखों में से कुछ प्रासंगिक लेख छांटता (Clips) है वह एक 'समृद्ध' कार्य करा रहा है।

स्वयं के कार्य का अनुसूचियन (Scheduling Own Work)

स्वयं के कार्य की स्वतन्त्रता से अनुसूची बनाने से कार्य–समृद्धिकरण बढ़ता है। यह तय करना कि कौन सा काम (Assignment) कब करना है स्व–अनुसूचीयन कहलाता है। संगठन में जो कार्मिक रचनात्मक कार्य (Work) करते हैं उनके पास उन कार्मिकों, जो दैन्निदिन प्रकृति के कार्य (Jobs) करते हैं कि तुलना में अपने कार्यों का अनुसूचियन करने के अधिक अवसर होते हैं।

अद्वितीय अनुभव (Unique Experience)

एक 'समृद्ध' कार्य के कुछ अद्वितीय लक्षण होते हैं जैसे कि एक 'गुणवत्ता नियन्त्रक' एक आपूर्तिकर्ता के स्थान (Supplier's Place) का भ्रमण करता है।

संसाधनों पर नियन्त्रण (Control Over Resources)

कार्य संमृद्धिकरण का एक आयाम यह है कि इसमें प्रत्येक कर्मचारी को अपने संसाधनों तथा खर्चों पर नियन्त्रण रखना होता है।

प्रत्यक्ष संचार प्राधिकार (Direct Communication Authority)

एक 'संमृद्ध' कार्य में कर्मचारी उन व्यक्तियों से प्रत्यक्ष संचार कर सकता है जो उसके उत्पादों (Outputs) को काम में लेते हैं जैसे कि एक गुणवत्ता आश्वासक प्रबन्ध (Quality Assurance Manager) अपनी कम्पनी के उत्पादों (Products) की गुणवत्ता के सम्बन्ध में उपभोक्ताओं की शिकायते सुने।

व्यक्तिगत जबाबदेयता (Personal Accountability)

''एक 'समृद्ध' कार्य पदाधिकारी को परिणामों के लिए जिम्मेदार बनाता है। अच्छे कार्य के लिए उसकी तारीफ की जाती है और कमजोर काम के लिए उसे दोष भी दिया जाता है। वस्तुतः 'कार्य समृद्धिकरण' अभिप्रेरण की एक महत्त्वपूर्ण प्रविधि है। अनेक अध्ययनों से यह बात स्पष्ट हो चुकी है। कार्य संमृद्धिकरण के सन्दर्भ में कार्य–आयाम और क्रियान्वयन घटकों का विवरण निम्न चार्ट द्वारा प्रदर्शित किया जा रहा है:: :

कार्य–प्रभावकारिता प्रतिमान (Work Effectiveness Model)

निदानात्मक साधन (Diagnostic Tools)

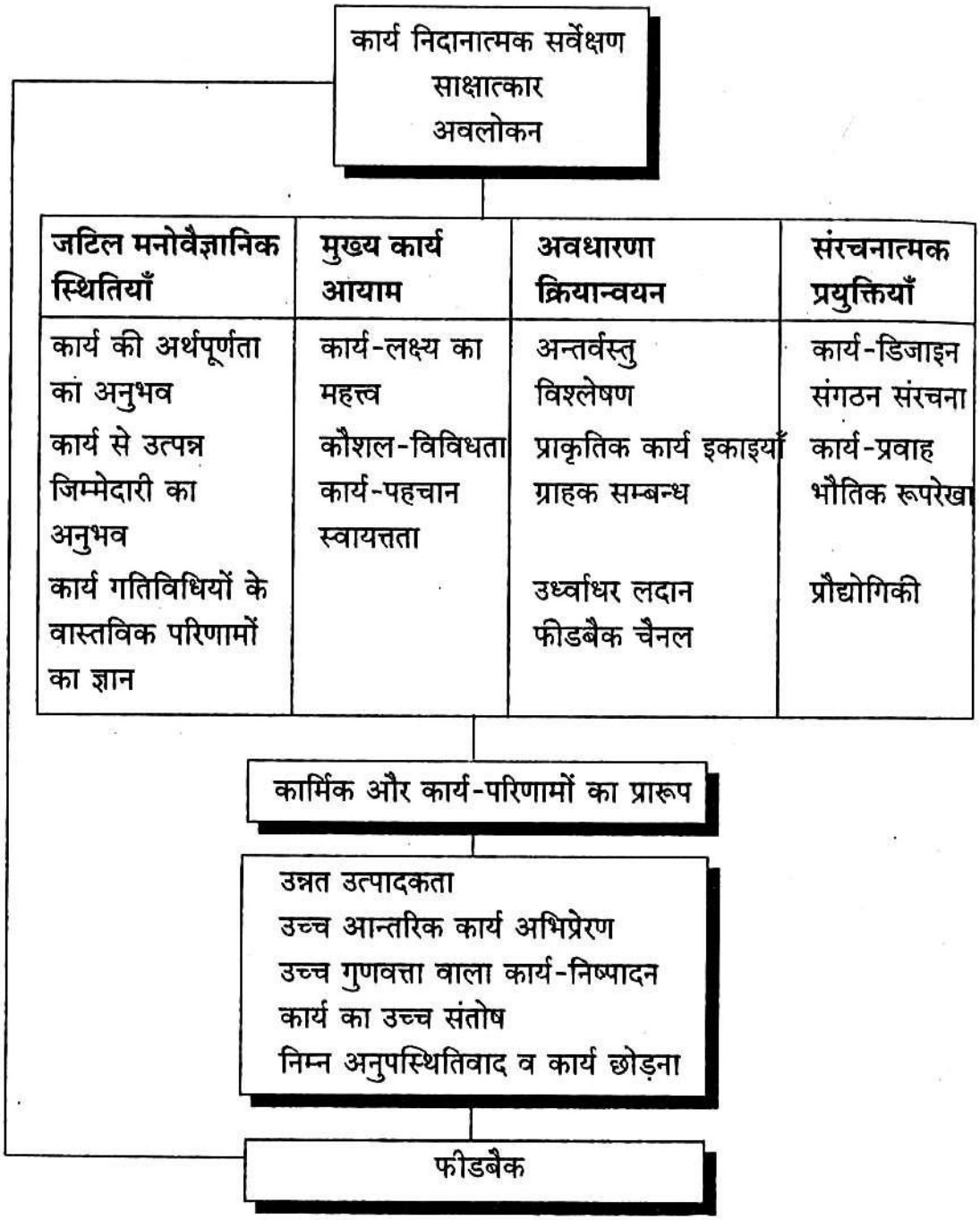

आलोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Evaluation)

अभिप्रेरणा का द्वि–घटकी सिद्धान्त हर्जबर्ग की प्रबन्ध को महत्त्वपूर्ण देन है। फिर भी हर्जबर्ग के सिद्धान्त को औद्योगिक–अभियान्त्रिकी उपागम अपनाने वाला मानकर इसकी आलोचना की जाती है। उनका यह सिद्धान्त संकुचित माना जाता है। आर.जे. हाऊस तथा एल.ए. विगडर ने हर्जबर्ग के सिद्धान्त की निम्न आलोचनाएँ की हैं :

- हर्जबर्ग ने जो पद्धतियाँ काम में ली हैं उनकी पद्धतिशास्त्रीय सीमाएँ हैं। जब सब कुछ अच्छा हो रहा होता है तो लोग सारा श्रेय लेने की प्रवृत्ति रखते हैं, परन्तु जब कुछ भी गड़बड़ होती है तो वे पर्यावरण को दोषी ठहराते हैं।
- हर्जबर्ग की मैथ्डोलॉजी की विश्वसनीयता पर भी प्रश्न उठाया जाता है। मूल्यांकनकर्ताओं (Raters) को व्याख्या करनी थी तथा उन्होंने एक प्रत्युत्तर की व्याख्या एक ढंग से की और उसी प्रकार के अन्य प्रत्युत्तरों की व्याख्या भिन्न तरीके से। इस प्रकार यह सिद्धान्त मूल्यांकनकर्ताओं के पक्षपात पर आधारित है।
- सन्तुष्टि का कोई व्यापक मापन काम में नहीं लिया गया। एक व्यक्ति अपने कार्य (Jobs) को नापसन्द कर सकता है फिर भी सोचता है कि कार्य स्वीकार्य है।

हाऊस तथा विगडर द्वारा बताई गई उपर्युक्त सीमाओं के अलावा भी हर्जबर्ग के सिद्धान्त की आलोचनाएँ की जाती है। द्वि–घटकीय सिद्धान्त में परिस्थितिकीय चरों (Situational Variables) की अनदेखी की गई है । हर्जबर्ग ने सन्तुष्टि और उत्पादकता के बीच सम्बन्ध को स्वीकारा है । पर उन्होंने जो मैथ्डोलॉजी अपनाई उसमें केवल सन्तुष्टि पर ही ध्यान दिया गया है न कि उत्पादकता पर। ऐसी शोध को अधिक प्रासंगिक बनाने के लिए सन्तुष्टि और उत्पादकता के बीच सुदृढ़ सम्बन्ध मानने आवश्यक है। हर्जबर्ग के सिद्धान्त में सन्तुष्टि और अभिप्रेरणा तथा कार्य–सन्तुष्टि और कार्य–असन्तुष्टि के बीच सम्बन्धों की अति–सरलीकृत व्याख्या की है। एक ही घटक किसी व्यक्ति के लिए कार्य–सन्तुष्टि प्रदान करने वाला हो सकता है। साथ ही कोई एक घटक समान व्यक्तियों में कार्य–सन्तुष्टि भी पैदा कर सकता है और असन्तुष्टि भी। संगठन के विभिन्न स्तरों पर विभिन्न कार्यों के सम्बन्ध में अभिप्रेरक और आरोग्य घटक बदल सकते हैं। धन (Money) एक अभिप्रेरक भी होता है। इस सिद्धान्त में व्यक्तियों में भिन्नता को पहचाना नहीं गया है। इसमें यह मान लिया गया है कि सभी व्यक्ति अभिप्रेरकों के प्रति समान व्यवहार करते हैं। पर व्यवहार में ऐसा नहीं होता है। अभिप्रेरकों और आरोग्य घटकों के बीच अन्तर भी उतना निश्चित और कड़ा नहीं होता जितना कि हर्जबर्ग ने किया। हर्जबर्ग के इस सिद्धान्त को संगठन के सभी स्तरों पर समान रूप से लागू नहीं किया जा सकता। यह सिद्धान्त प्रबन्ध के उच्च स्तरों पर ही अधिक लागू होता है। पर्यवेक्षक स्तर और अन्य निम्न स्तरों पर कम लागू होता है। कुछ शोधकर्ताओं ने हर्जबर्ग की मैथ्डोलॉजी को काम में लेते हुए अध्ययन किया पर उन्हें वे परिणाम प्राप्त नहीं हुए जो हर्जबर्ग को प्राप्त हुए।

उपर्युक्त आलोचनाओं के बावजूद हर्जबर्ग के विचारों का प्रबन्ध जगत् में महत्त्वपूर्ण स्थान है।

अध्याय – 7

क्रिस अर्गीरिस
(CHRIS ARGYRIS)

''क्रिस अर्गीरिस इस तर्क को विकसित करने वाले जाने–माने लेखकों में से एक हैं कि यदि संगठन अपने सदस्यों की सम्पूर्ण मानवीय शक्तियों (पोटेनशिएलिटीज) का विकास करने में योग्य होते हैं तो वे अपने आपको उन्नत कर सकते हैं या सुधार कर सकते हैं।''

–पॉल ही, ब्लैनकार्ड एवं जॉनसन

क्रिस अर्गीरिस का जन्म सन् 1923 में हुआ। अर्गीरिस का शैक्षणिक रिकॉर्ड काफी श्रेष्ठ है। मनोविज्ञान तथा अर्थशास्त्र का अध्ययन करने के बाद उन्होंने संगठनात्मक व्यवहार में डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। अर्गीरिस येल यूनिवर्सिटी में प्रशासनिक विज्ञानों के विभागाध्यक्ष भी रहे। फिर वे हावर्ड विश्वविद्यालय में शिक्षा और संगठनात्मक व्यवहार के प्रोफेसर बने। उन्होंने अपना काफी समय परामर्शदाता के रूप में व्यतीत किया तथा सदैव इस बात की खोज करने में रुचि ली कि किस प्रकार संगठनात्मक आवश्यकताओं और व्यक्तियों की आवश्यकताओं के बीच सामंजस्य की स्थापना की जाए।

अर्गीरिस उच्च कोटि की लेखन क्षमता के धनी हैं। उनकी कृति 'पर्सनलिटी एण्ड ऑर्गेनाइजेशन' प्रबन्ध जगत् में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है जो 1957 में प्रकाशित हुई थी। 1964 में उनकी रचना 'इन्टीग्रेटिंग द इन्डीविजुअल' एण्ड 'द ऑर्गेनाइजेशन' प्रकाशित हुई जिसमें उन्होंने व्यक्तियों तथा संगठनात्मक आवश्यकताओं के बीच सामंजस्य की स्थापना की विवेचना की है। 1965 में प्रकाशित 'ऑर्गेनाइजेशन एण्ड इनोवेशन', 1970 में प्रकाशित 'इन्टरवेन्शन थ्योरी एण्ड मैथड', 1971 में प्रकाशित 'मैनेजमेन्ट एण्ड ऑर्गेनाइजेशनल डवलपमेन्ट' तथा 1972 में प्रकाशित 'द एप्लिकेबिलिटी ऑफ ऑर्गेनाइजेशनल सोसियोलॉजी' पुस्तकों का प्रबन्ध साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान है। इन पुस्तकों के अलावा अर्गीरिस के अनेक लेख समय समय पर प्रकाशित होते रहे जिनमें 'डायगनोसिंग ह्यूमन रिलेशन्स इन ऑर्गेनाइजेशन', 'ऑर्गेनाइजेशनल इफेक्टिवनेस अण्डर स्ट्रेस', 'टी–ग्रुप्स फॉर ऑर्गेनाइजेशनल इफेक्टिवनेस' आदि प्रमुख हैं। संक्षेप में, उनकी रचनाएँ इस प्रकार हैं :

Executive Leadership (1953), Personality and Organization (1957), Understanding Organization Behaviour, (1960) Integrating the Individual and the Organization (1964), Organization and Innovation (1965), Intervention Theory and Methods (1970), Management and Organizational Development (1971), The Applicability of Organizational Sociology (1972), Organizational Learning (1978), Action Science (1985) (सह–लेखक)

संगठनात्मक सिद्धान्त : संयोजन मॉडल (Organizational Theory : Fusion Model)

अर्गीरिस संगठन के सम्बन्ध में कई मौलिक विचार प्रस्तुत करते हैं। सन् 1957 में उनकी पुस्तक 'पर्सनलिटी एण्ड ऑर्गेनाइजेशन' प्रकाशित हुई। इस पुस्तक में अर्गीरिस ने संगठन की परम्परागत विचारधारा की आलोचना की। इसी पुस्तक में उन्होंने उस आधारभूत असंगति (इनकोंग्रुएन्सी) की ओर ध्यान दिलाया जो कि एक परिपक्व कर्मचारी की आवश्यकताओं (नीड्स) तथा संगठन की जरुरतों (रिक्वायरमेन्ट्स) के बीच उपस्थित होती है। वे कहते हैं :

औपचारिक संगठनात्मक सिद्धान्त स्वस्थ व्यक्तियों से जिन माँगों को चाहते हैं, वे उन व्यक्तियों की आवश्यकताओं से असंगति रखती हैं। इस आधारभूत असंगति के कारण ही निराशा, संघर्ष, विफलता और अल्पकालीन परिप्रेक्ष्य का जन्म होता है।

अपनी इस आधारभूत असंगति की विचारधारा की पुष्टि के लिए अर्गीरिस अनेक अनुभवात्मक प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। उनका मानना है कि संगठन में कार्यरत व्यक्ति संगठन की औपचारिक संरचना से स्वचालित अनुकूलन नहीं कर सकते। व्यक्ति एक संगठन से अनुकूलन करने के लिए निम्न कार्य कर सकता है। प्रथम है कि वह संगठन को छोड़ दे। वस्तुतः यदि संगठन के साथ व्यक्ति अनुकूलन करने में सफल नहीं होता तो वह उस संगठन को छोड़ कर अनुकूलन की आवश्यकता को ही समाप्त कर सकता है। दूसरा तरीका जो संगठनात्मक अनुकूलन का हो सकता है, वह है कि व्यक्ति संगठन की सीढ़ी से ऊपर चढ़ जाए। यदि वह संगठनात्मक सीढ़ी में कुछ पायदान ऊपर चढ़ जाए तो वह नई जरुरतों से अनुकूलन कर सकता है। यद्यपि हर परिस्थिति में यह सम्भव नहीं हो सकता। संगठनात्मक अनुकूलन का एक तरीका सुरक्षात्मक क्रियाविधि को अपनाना भी हो सकता है। संगठनात्मक अनुकूलन के चौथे तरीके के रूप में व्यक्ति की अरुचि तथा उदासीनता आती है। व्यक्ति अनुकूलन के कार्य में कोई रुचि ही न दिखाए तथा पूर्णतया उदासीन होकर भी इस आवश्यकता को सन्तुष्ट कर सकता है। पर यह पलायनवादी हो सकता है।

यह उल्लेखनीय है कि अर्गीरिस की 'आधारभूत असंगति' की विचारधारा ई.डब्ल्यू. बैक के कार्यों का ही विस्तार है। बैक ने संगठन का विश्लेषण 'संयोजन प्रक्रिया' (फ्यूजन प्रोसेस) के दृष्टिकोण से किया था जिसमें संगठन और व्यक्ति के लक्ष्यों को अलग–अलग करके पहचाना जाता है। इसमें इस बात को स्वीकार किया जाता है कि संगठन एक खुली प्रणाली है, यह गतिशील क्रियाओं युक्त व्यवस्था है और इसमें औपचारिक के साथ–साथ अनौपचारिक व्यवहार भी शामिल हैं। इसमें तीन प्रक्रियाएँ शामिल हैं– प्रथम, समाजीकरण या सोशिलाइजिंग जो उन क्रियाओं की ओर संकेत देती है जो कि संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति में योगदान देती हैं। दूसरी, व्यक्तिकरण या पर्सनलाइजिंग जिसमें वे क्रियाएँ (गतिविधियाँ) शामिल हैं जो व्यक्तिगत विकास (इन्डीविजुअल एक्चूअलाइजेशन) में योगदान देती है और तीसरी, संयोजन या फ्यूजन प्रक्रिया जो समाजीकरण और व्यक्तिकरण के साथ–साथ परिचालन की ओर संकेत करती है।

बैक के साथ मिलकर अर्गीरिस ने संगठन की संयोजन प्रक्रिया विचारधारा का विकास किया। इन दोनों ने साथ मिलकर कई आनुभविक शोध किए। येल विश्वविद्यालय में किए गए इन अध्ययनों का उद्देश्य संगठन के एक नए सैद्धान्तिक ढाँचे का विकास करना था। इन शोधों में सामाजिक–मनोवैज्ञानिक आयामों की ओर विशेष ध्यान दिया गया। मुख्य उद्देश्य उस प्रक्रिया का पता लगाना था जिसके द्वारा संगठन और व्यक्ति एक–दूसरे की आवश्यकताओं से अनुकूलन कर सकें। इसी प्रकार संयोजन की प्रक्रिया समाजीकरण और व्यक्तिकरण के एक साथ पाए जाने से ही होती है।

अर्गीरिस बाद में अपनी विचारधारा का परीक्षण करते हैं। अपने बाद के अध्ययनों के पश्चात् उन्होंने निम्न निष्कर्ष प्रस्तुत किए :

1. व्यक्तित्व और संगठन अलग–अलग संगठित व्यवस्थाएँ हैं।
2. दोनों ही अपना–अपना विकास चाहते हैं।
3. वे गतिविधियाँ जिनकी सहायता से व्यक्तित्व अपना विकास करता है उनको व्यक्तिकरण की प्रक्रिया में शामिल किया जाता है।
4. वे गतिविधियाँ जिनकी सहायता से संगठन अपना विकास करता है उनको समाजीकरण की प्रक्रिया में शामिल किया जाता है।

5. इन प्रक्रियाओं के सम्बन्ध में दो उपकल्पनाएँ परिभाषित की जाती हैं
   1. व्यक्तिकरण की प्रक्रिया की अभिव्यक्ति जितनी ज्यादा होती है उतना ही अधिक व्यक्ति का संयोजन संगठन के साथ होता है।
   2. समाजीकरण की प्रक्रिया की अभिव्यक्ति जितनी ज्यादा होती है, उतना ही अधिक संगठन का संयोजन व्यक्ति के साथ होता है।
6. जिस 'चीज' की अभिव्यक्ति होती है, वह है :
   1. व्यक्तिकरण की प्रक्रिया के मामले में व्यक्ति के एक निश्चित व्यवहार के प्रकार की ओर व्यक्तित्व कारकों का एक समुच्चय (Set)।
   2. समाजीकरण की प्रक्रिया के मामले में किसी संगठन के परिचालन के लिए आवश्यक मानी जाने वाली गतिविधियों (संगठनात्मक कारकों) का एक समुच्चय।
7. व्यक्तिकरण और समाजीकरण की प्रक्रियाओं की अभिव्यक्ति की मात्रा का वर्णन करने के लिए एक क्रमिक–गुण पैमाना बनाया जाता है जिसमें चार इकाइयाँ होती हैं :
   1. कोई अभिव्यक्ति नहीं, 2. न्यूनतम अभिव्यक्ति, 3. पर्याप्त अभिव्यक्ति, 4. अधिकतम अभिव्यक्ति।
8. अभिव्यक्ति की मात्रा के मापन का निर्णय इस प्रकार किया जाता है :
   1. व्यक्तित्व कारकों के मामले में व्यक्तियों के दृष्टिकोण से।
   2. संगठनात्मक कारकों के मामले में संगठन के दृष्टिकोण से।

अर्गीरिस विस्तार से व्यक्तित्व कारकों तथा संगठनात्मक कारकों की पहचान करते हैं। इन कारकों की सहायता से अर्गीरिस संगठनात्मक माँगों और वर्तमान आवश्यकताओं के बीच 'बदलाव' (वेरिएशन्स) देखते हैं। संयोजन जोड़ इसका समर्थन करता है

ये अध्ययन प्रदर्शित करते हैं कि जहाँ परम्परागत संगठनात्मक विचारधारा औपचारिक सम्बन्धों पर केन्द्रित थी वहीं संयोजन मॉडल का सम्बन्ध अनौपचारिक सम्बन्धों से भी है। जब कर्मचारी अपने औपचारिक कार्य प्रवाह से सन्तुष्ट नहीं होते हैं तो वे अनौपचारिक समूह आवश्यकताओं के विकास की ओर बढ़ते हैं। संगठन को सफल होने के लिए अपनी आवश्यकताओं के साथ–साथ संगठन में सेवा कर रहे व्यक्तियों की आवश्यकताओं के लिए भी संघर्ष करना चाहिए। इस प्रकार अर्गारिस का संयोजन मॉडल संगठन की वास्तविक स्थिति का विवरण देता है।

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है कि अर्गीरिस संगठन की परम्परागत विचारधारा की आलोचना करते हैं। वे संगठन के विभिन्न प्रचलित सिद्धान्तों की परीक्षा करते हैं तथा उनमें अन्तर्निहित समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं। उनके मत में विशेषीकरण के सिद्धान्त से व्यक्ति में पहल की भावना समाप्त हो जाती है। इसमें आत्म–विकास में अडचने आती हैं और व्यक्ति में केवल सतही गुणों का ही विकास हो पाता है। आदेश की एकता निर्देश की एकता, नियन्त्रण का क्षेत्र आदि सिद्धान्तों की भी अर्गीरिस आलोचना करते हैं। अर्गीरिस बहुत से औद्योगिक मनोवैज्ञानिकों और संगठनात्मक समाजशास्त्रीयों की विचारधाराओं की आलोचना करते हैं। संगठनात्मक यथार्थता पर उनके विचारों की वे आलोचना करते हैं। संगठनात्मक यथार्थता पर वे लिखते हैं। मैं यथार्थता के उस दृष्टिकोण को वरीयता दूँगा जहाँ समाजशास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक स्तरीय चर एक–दूसरे से अन्तः क्रिया करते हैं तथा एक–दूसरे पर पुनर्बल देते हैं।

हरबर्ट साइमन के प्रमुख आलोचक के रूप में भी अर्गीरिस को जाना जाता है। साइमन के 'तार्किक मानव संगठनात्मक' विचारधारा की आलोचना अर्गीरिस करते हैं। उनके मत में साइमन की यह विचारधारा संगठनात्मक जीवन में 'यथास्थिति' का समर्थन करती है। उनकी विचारधारा अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धों, आत्म–विकास की आवश्यकताओं आदि चरों को कोई स्थान नहीं देती जो कि संगठनात्मक व्यवहार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

साइमन की इस बात की भी वे आलोचना करते हैं कि अभिप्रेरणा का मूल स्रोत प्राधिकार प्रणाली होती है। अर्गीरिस साइमन को एक रुढ़िवादी प्रशासनिक सिद्धान्तकार मानते हैं जो मानव के 'भावनात्मक पक्ष' की अवहेलना करता है।

अपरिपक्वता–परिपक्वता विचारधारा (Immaturity-Maturity Theory)

प्रबन्ध को अर्गारिस का एक अति–महत्त्वपूर्ण योगदान उनकी 'अपरिपक्वता–परिपक्वता विचारधारा' (Immaturity-Maturity Theory) है। अर्गीरिस येल विश्वविद्यालय में कार्य करते समय इस बात का परीक्षण करते हैं कि औद्योगिक संगठनों में प्रबन्ध व्यवहारों का व्यक्तियों के व्यवहार पर क्या प्रभाव पड़ता है। वे मानवीय व्यक्तित्व के विकास के विभिन्न सोपानों के विशिष्ट आयामों की पहचान करते हैं। उनके मत में यदि संगठन के व्यक्ति परिपक्व व्यक्तियों के रूप में विकसित होते हैं तो उनके व्यक्तित्व में सात प्रकार के परिवर्तन आते हैं।

प्रथम परिवर्तन के रूप में व्यक्ति बच्चों की तरह निष्क्रिय अवस्था से व्यस्कों की तरह सक्रिय अवस्था की ओर बढ़ते हैं। कहने का आशय यह है कि यदि व्यक्ति परिपक्व होता है तो वह निष्क्रिय न होकर सक्रिय हो जाता है। दूसरा परिवर्तन यह होता है कि व्यक्ति दूसरों पर निर्भर होने की अवस्था से एक पारस्परिक–स्वतन्त्रता की अवस्था प्राप्त कर लेता है। बच्चों की निर्भरता की स्थिति से वे निकलकर व्यस्कों की सापेक्ष स्वतन्त्रता की स्थिति में आ जाते हैं। तीसरा परिवर्तन यह होता है कि बच्चों की तरह केवल कुछ ही तरीकों से व्यवहार नहीं करता अपितु व्ययस्कों की तरह अनेक तरीकों से व्यवहार करने के योग्य व्यक्ति हो जाता है। चौथा परिवर्तन यह आता है कि व्यक्ति बच्चों की तरह अनियमित, कारणात्मक और सतही हितों के बजाय वह व्यस्कों की तरह गहन तथा शक्तिशाली हितों का विकास कर लेता है। एक परिपक्व व्यक्ति की रुचि अनियमित और सतही कार्यों में नहीं हो सकती। पाँचवाँ परिवर्तन यह आता है कि एक बच्चे की तरह अल्प समय दृष्टिकोण के स्थान पर उनका दृष्टिकोण व्यस्क व्यक्तियों की तरह दीर्घ–दृष्टियुक्त हो जाता है। बच्चे केवल अल्प–दृष्टि से ही सोच सकते हैं। उनकी सोच केवल वर्तमान तक ही सीमित होती है जबकि व्यस्क व्यक्ति वर्तमान के साथ–साथ भूतकाल और भविष्य को भी ध्यान में रखकर व्यवहार करते हैं। छठा परिवर्तन यह आता है कि बच्चों की तरह हर किसी के अधीन रहने की स्थिति से निकलकर वे उस स्थिति में पहुँच जाते हैं जहाँ वे या समान स्थिति में होते हैं या फिर उच्च स्थिति में। सातवाँ परिवर्तन यह आता है कि बच्चों की तरह अपने 'स्व' के प्रति जागरुकता के अभाव की स्थिति से निकलकर वे ऐसी स्थिति में पहुँच जाते हैं जहाँ वे न केवल अपने 'स्व' (Self) के प्रति जागरुक ही होते हैं अपितु उस पर नियन्त्रण करने की स्थिति में भी होते हैं। इस प्रकार अर्गीरिस इस एक सततता (कन्टीनुअम) के रूप में प्रस्तुत करते हैं जिसे इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है :

अपरिपक्वता	*परिपक्वता*
निष्क्रिय	सक्रिय
अधीनता	स्वतन्त्रता
कुछ ही तरीकों से व्यवहार करना	बहुत से तरीकों से व्यवहार करना
अनियमित, सतही रूचियाँ	गहन व शक्तिशाली रूचियाँ
अल्प – समय दृष्टिकोण	दीर्घ – समय दृष्टिकोण
अधीनस्थ स्थिति	समान या उच्च स्थिति
'स्व' के प्रति जागरूकता का अभाव	'स्व' की जागरूकता व नियन्त्रण

अर्गीरिस की इस अवधारणा के आधार पर हम परिपक्व व्यक्तियों की निम्न विशेषताओं को पहचान सकते हैं :

- परिपक्व व्यक्ति सक्रिय होते हैं।, वे स्वाधीनता की भावनायुक्त होते हैं।, वे बहुत से तरीकों से व्यवहार करना जानते हैं।, उनकी रुचियाँ/हित गहरी तथा शक्तिशाली होती हैं।, उनका समय दृष्टिकोण दीर्घकालिन होता है।, वे सम स्थिति से उच्च स्थिति में रहते हैं।, वे अपने 'स्व' को पहचानते हैं तथा नियन्त्रण रखने की क्षमता रखते हैं।

अर्गीरिस अपने 'अपरिपक्वता–परिपक्वता–सातत्य' के बारे में निम्न निष्कर्ष प्रस्तुत करते हैं :

1. सातों आयाम सम्पूर्ण व्यक्तित्व के केवल एक पक्ष का प्रतिनिधित्व करते हैं। वे व्यक्ति की सोच, आत्म–अवधारणा, अनुकूलनशीलता तथा सामंजस्य पर निर्भर करता है।
2. सातों आयाम (विमाएँ) मात्रा में बालक–सिरे (Infant-end) से व्यस्क सिरे तक लगातार बदलते रहते हैं। एक सिरे पर बालक व दूसरे सिरे पर व्यस्क मनोवृत्तियाँ होती हैं।
3. यह मॉडल केवल एक 'निर्मिति' है और विशिष्ट व्यवहार की भविष्यवाणी नहीं कर सकता। फिर भी यह किसी भी व्यक्ति की वृद्धि को मापने तथा वर्णन करने की एक विधि उपलब्ध कराता है।
4. सातों आयाम व्यक्तित्व के गुप्त–चारित्रिक लक्षणों पर आधारित हैं जो कि अवलोकनीय व्यवहार से अलग (भिन्न) हो सकते हैं।

अर्गीरिस का इस मॉडल द्वारा एक महत्त्वपूर्ण योगदान इस बात पर निर्भर करता है कि उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि औपचारिक संगठन परिपक्वता–विरोधी (Antimaturing) होते हैं। परन्तु अर्गीरिस कहते हैं कि एक परिपक्व व्यक्ति की आवश्यकताओं और औपचारिक संगठन की आवश्यकताओं के बीच एक निश्चित असंगति उपस्थित है। अर्गीरिस कहते हैं कि लोग संगठन के दृष्टिकोण के अन्तर्गत परिपक्व होने से रोक लिए जाते हैं क्योंकि इसके दो कारण होते हैं। पहला है प्रबन्ध के प्रति कड़ा दृष्टिकोण तथा दूसरा है उनमें अन्तर्वैयक्तिक सामर्थ्य का अभाव। इस कारण व्यक्तियों की पूर्ण मनोवैज्ञानिक ऊर्जा नहीं उठ पाती। अर्गीरिस अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धों की समस्या का जिक्र करते हुए कहते हैं कि एक व्यक्ति की विश्वसनीयता इस बात से मापी जा सकती है कि वह क्या करता है न कि इस बात से कि वह क्या सोचता है ।

संवेदनशील प्रशिक्षण या टी–ग्रुप (Sensitivity Training or T-Group)

संवेदनशील प्रशिक्षण या टी–ग्रुप को 'लेबोरेटरी ट्रेनिंग' भी कहा जाता है। सर्वप्रथम कुर्ट लेविन के समूह गतिशीलता पर विचारों से इस अवधारणा का उदय हुआ। टी–ग्रुप (अर्थात् Training Group) मूलतः संगठनात्मक विकास (OD) की एक महत्त्वपूर्ण तकनीक है। टी–ग्रुप वस्तुतः एक प्रयोगशाला कार्यक्रम है जिसका निर्माण व्यक्तियों/कर्मचारियों को अपने व्यवहार को प्रकट करने, फीडबैक प्राप्त करने व देने, नए व्यवहार के साथ प्रयोग, जागरुकता को विकसित करने, 'स्व' को स्वीकारने तथा अन्यों के व्यक्तित्वों की संवेदनशीलता को स्वीकार करने के अवसर प्रदान करने के लिए किया जाता है। टी–ग्रुप साथ ही साथ प्रभावी समूह कार्यकरण की प्रकृति को जानने की सम्भावनाएँ भी प्रदान करती है। परन्तु इस अवधारणा के सम्बन्ध में अनेक भ्रान्तियाँ पाई जाती हैं। इसलिए अर्गीरिस यह बात स्पष्ट करते हैं कि टी–ग्रुप क्या नहीं है। वे कहते हैं :

1. संवेदनशील प्रशिक्षण छिपी हुई छल–योजना प्रक्रियाओं का समुच्चय नहीं है जिनकी सहायता से व्यक्तियों का मत–आरोपण किया जा सके।
2. संवेदनशील प्रशिक्षण किसी स्टाफ नेता द्वारा निर्देशित कोई शैक्षणिक प्रक्रिया नहीं है।
3. संवदेनशील प्रशिक्षण का उद्देश्य किसी संघर्ष को दबा देना या प्रत्येक व्यक्ति को इसके लिए तैयार करना नहीं है कि वे एक–दूसरे को चाहें।

4. संवेदनशील प्रशिक्षण इस बात के शिक्षण का प्रयास नहीं करता है कि लोग समाज के प्रति कठोर या असम्मानजनक बनें तथा उन्हें नापसन्द करें जो कम खुला जीवन जीते हैं।
5. यह प्रशिक्षण कोई मनो–विश्लेषण और गहन–समूह चिकित्सा नहीं हैं।
6. यह प्रशिक्षण आवश्यक रूप से खतरनाक नहीं परन्तु भावनाओं पर ध्यान केन्द्रित करता है।
7. संवेदनशील प्रशिक्षण प्राधिकारवादी–नेतृत्व की शिक्षा नहीं है। इसका उद्देश्य तो प्रभावशाली वास्तविकता–केन्द्रित नेतृत्व का विकास करना है।
8. संवेदनशील प्रशिक्षण, प्रशिक्षण–सत्र में उपस्थिति के परिणामस्वरूप परिवर्तन की कोई गारण्टी नहीं देता है।

वस्तुतः टी–ग्रुप संगठन में व्यक्तियों को अपने आवेगों और प्रक्रियाओं के प्रति संवेदनशील बनाती है। अर्गीरिस अनुसार संवेदनशील प्रशिक्षण को अपनाया जाना चाहिए क्योंकि ये संगठन में व्यक्तियों के बीच एक खुले वातावरण का सृजन करती हैं जो कि संगठनात्मक विकास के लिए आवश्यक होता है।

संगठनात्मक परिवर्तन (Organizational Change)

क्रिस अर्गीरिस संगठनात्मक परिवर्तन की चार रणनीतियों (व्यूह रचनाओं) की चर्चा .. करते हैं।

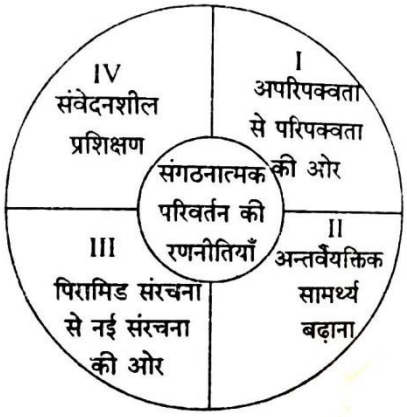

अर्गीरिस संगठनात्मक परिवर्तन की प्रथम रणनीति के रूप में संगठन से आग्रह करते हैं कि वे ऐसा वातावरण उपलब्ध कराए जिसमें व्यक्ति अपरिपक्वता से परिपक्वता की ओर बढ़ सके। इस प्रक्रिया से होने वाले सात परिवर्तनों का उल्लेख पहले किया जा चुका है।

संगठनात्मक परिवर्तन की दूसरी रणनीति के रूप में अर्गीरिस संगठन में अन्तर्वैयक्तिक सामथर्य को विकसित करने का सुझाव देते हैं। यह व्यक्तियों की क्षमता या योग्यता का द्योतक है। इसकी निम्न तीन शर्ते या जरुरतें हैं :

1. आत्म–स्वीकृति (Self-Acceptance) : यह उस मात्रा को प्रदर्शित करती है कि व्यक्ति अपने आपको कितना मूल्य प्रदान करता है।
2. पुष्टिकरण (Confirmation) : पुष्टिकरण से अर्गीरिस का आशय व्यक्ति द्वारा अपनी इमेज का वास्तविक परीक्षण है।
3. तात्विकता (Essentiatity) : इसका अर्थ है व्यक्ति को यह अवसर प्रदान करना कि वह केन्द्रीय क्षमताओं का उपयोग कर सके तथा अपनी केन्द्रीय आवश्यकताओं को अभिव्यक्त कर सके।

अर्गीरिस अन्तर्वैयक्तिक सामर्थ्य व्यवहार के मूर्त प्रमाण प्रस्तुत करते हुए निम्न चार प्रकार के व्यवहारों को पहचान करते हैं :

1. अपने विचारों और भावनाओं के लिए जिम्मेदारी स्वीकारना
2. अन्य लोगों के विचारों और भावनाओं के लिए खुला दिमाग रखना
3. नए विचारों और भावनाओं के साथ प्रयोग करना
4. अन्यों को अपने विचारों और भावनाओं को ग्रहण करने, खुला दिमाग रखने और प्रयोग करने के लिए सहायता करना।

अर्गारिस संगठनात्मक परिवर्तन की तीसरी रणनीति का उल्लेख करते हुए परम्परागत और नई संगठनात्मक संरचना का विचार रखते हैं।

संरचना I : पिरामिडीय संरचना : यह परम्परागत संगठनात्मक संरचना का परिचय कराती है जहाँ दैनिक प्रकृति के कार्य निर्धारित नियमों द्वारा संचालित किए जाते हैं। इसमें संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति तथा कार्य के निष्पादन पर ही जोर दिया जाता है।

संरचना 2 : संशोधित औपचारिक संगठनात्मक संरचना : यह संरचना लिकर्ट की 'लिंकिंग–पिन' अवधारणा के निकट है जहाँ अधीनस्थ को उच्च निर्णयात्मक इकाई का सदस्य बनने तथा निर्णय प्रक्रिया में सहभागिता का अवसर मिलता है। यह संरचना अच्छी होती है।

संरचना 3 : प्रकार्यात्मक योगदान के अनुसार शक्ति : इस संरचना में जैसा व्यक्ति का संगठन को योगदान होता है उसी के अनुसार उसे शक्तियाँ प्राप्त होती हैं।

संरचना 4 : मैट्रिक्स संगठन : अर्गीरिस मैट्रिक्स संगठन की वकालत करते हैं। मैट्रिक्स संगठनात्मक संरचना के अधीन संगठन में कार्यरत प्रत्येक व्यक्ति को बिल्कुल बराबर शक्ति तथा उत्तरदायित्व प्राप्त होते हैं तथा व्यक्ति इनसे छुटकारा नहीं पा सकता अर्थात् इनसे मुँह नहीं मोड़ सकता। संगठन की महत्त्वपूर्ण गतिविधियों को प्रभावित करने के अनेक अवसर उनके पास होते हैं। मैट्रिक्स संगठन का एक और सकारात्मक लक्षण यह है कि इसमें व्यक्ति आत्म अनुशासन का विकास कर लेता है और इस कारण वहाँ अधीनस्थ–उच्चाधिकारी सम्बन्धों के झगड़ों की कोई सम्भावना नहीं रह जाती । यहाँ प्रत्येक व्यक्ति को पर्याप्त आजादी होती है कि वह संगठन की किसी भी गतिविधि को समाप्त कर सकता है और यदि जरुरी समझे तो नई गतिविधियाँ शुरु भी कर सकता है। मैट्रिक्स संगठन में आन्तरिक एकाधिकार की प्रवृत्तियाँ नहीं पाई जाती हैं। इस प्रकार के संगठन शक्ति के चारों ओर नहीं घुमते।

मैट्रिक्स संगठनों में, समस्याओं के समाधान के लिए परियोजना टीमों का गठन किया जाता है। हर परियोजना टीम के सदस्य किसी न किसी प्रबन्धकीय कार्य से जुड़े होते हैं जैसे एक टीम – के सदस्य विनिर्माण कार्यों से सम्बन्धित होते हैं तो कोई ओर टीम विपणन कार्यों से सम्बन्धित होती है। प्रत्येक परियोजना टीम के हर सदस्य के पास समान शक्तियाँ और उत्तरदायित्व होते हैं। सभी सदस्यों से अपेक्षा की जाती है कि वे एक सम्बद्ध–समूह के रूप में अच्छे मानवीय रिश्तों के साथ कार्य करें। ये टीमें कार्य की प्रकृति के अनुसार स्थाई भी हो सकती हैं और अस्थाई भी। मैट्रिक्स संगठन कार्य के वृद्धिकरण (Job Enlargment) के अवसर देता है। 'जोब एनलारजमेण्ट' या कार्य–वृद्धिकरण व्यक्तियों की आध्यात्मिक तथा अन्तर्वैयक्तिक योग्यताओं के उपयोग को बढ़ाता है। इसके अधीन प्रत्येक व्यक्ति अपनी गतिविधियों के दायरे में अधिक नियन्त्रण कर सकता है तथा उनके बारे में निर्णय करने में अपनी भागीदारी कर सकता है।

संगठनात्मक परिवर्तन की अन्तिम रणनीति के रूप में क्रिस अर्गीरिस संवेदनशील प्रशिक्षण या टी–ग्रुप का सुझाव देते हैं, जिसकी विवेचना अध्याय के प्रारम्भिक भाग में की जा चुकी है।

थ्योरी–X तथा थ्योरी–Y में प्रतिमान–A तथा B
(Patterns-A and B in the Theory-X-and Theory-Y)

डगलस मैक्ग्रेगर की थ्योरी–X तथा थ्योरी–Y के सन्दर्भ में क्रिस अर्गीरिस 'मनोवृति' (Attitude) तथा 'व्यवहार' (Behaviour) में अन्तर करते हुए इसमें व्यवहार प्रतिमान–A तथा प्रतिमान–B की विवेचना करते हैं। प्रतिमान–A अन्तर्वैयक्तिक व्यवहार (Interpersonal Behaviour), समूह–गतिकी (Group Dynamics) तथा संगठनात्मक मानदण्डों का प्रतिनिधित्व करता है। अर्गीरिस अपने अनुसन्धान से पाते हैं कि इनका सम्बन्ध थ्योरी–X के साथ जोड़ा जा सकता है। इसी प्रकार प्रतिमान–B उन बातों का प्रतिनिधित्व करता है जो थ्योरी–Y के साथ जोड़ी जा सकती है। प्रतिमान–A वाले व्यक्ति (Pattern-A Individuals) भावनाओं की कोई जिम्मेदारी नहीं लेते, खुले (Open) नहीं होते हैं। प्रयोगों को अस्वीकार करने वाले होते हैं तथा इन व्यवहारों में शामिल होने के लिए दूसरों की कोई मदद नहीं करते हैं। इन लोगों का व्यवहार कड़े (बन्द) पर्यवेक्षण तथा उच्च स्तरीय संरचना पर आधारित होता है। इसके विपरीत प्रतिमान–B वाले व्यक्ति भावनाओं की जिम्मेदारी लेने वाले, खुले, प्रयोगों को महत्त्व देने वाले तथा इन व्यवहारों में शामिल होने वाले अन्य व्यक्तियों की मदद करने वाले होते हैं। उनका व्यवहार समर्थात्मक तथा उत्प्रेरक होता है। परिणामस्वरूप विश्वास, देखभाल (Concern) तथा व्यक्तिवादिता के आदर्श पनपते हैं।

'प्रतिमान–A'	'प्रतिमान–B'
➢ भावनाओं की जिम्मेदारी नहीं लेते	➢ भावनाओं की जिम्मेदारी लेते हैं
➢ खुले नहीं होते	➢ खुले होते हैं
➢ प्रयोगों को अस्वीकार करते हैं	➢ प्रयोगों के महत्त्व को स्वीकार हैं
➢ इन व्यवहारों में शामिल होने के लिए दूसरों की मदद नहीं करते	➢ इन व्यवहारों में शामिल होने के लिए दूसरों की मदद करते हैं।

अर्गीरिस लिखते हैं : यद्यपि दैनिक जीवन में XA तथा YB को एक–दूसरे के साथ जोड़ा जा सकता है, पर हमेशा ऐसा नहीं होता। कतिपय स्थितियों में पैटर्न–A, थ्योरी–Y के साथ तथा पैटर्न–B, थ्योरी–X के साथ पाए जा सकते हैं।

XB प्रबन्धकों की लोगों के प्रति नकारात्मक मान्यताएँ होती है। ये प्रबन्धक मानते हैं कि अधिकांश लोग आलसी और अविश्वसनीय होते हैं। फिर भी ये प्रबन्धक समर्थात्मक और उत्प्रेरक (Supportive and Facilitating) व्यवहार करते हैं क्योंकि या तो उनको कहा जाता है या फिर वे अपने अनुभव से सीख लेते हैं कि ऐसा व्यवहार निश्चित रूप से उत्पादकता बढ़ाएगा। इसके अलावा भी ये प्रबन्धक उन लोगों के लिए काम करते हैं जो एक समर्थात्मक वातावरण बना लेते हैं और यदि उनको अपने कार्यों (Jobs) को बनाए रखना है तो उन्हें भी उनके अनुसार ही व्यवहार करना पड़ेगा। इसके विपरीत YA प्रबन्धक यह मानते हैं कि सामान्यतः लोग स्वतन्त्र और स्व अभिप्रेरित होते हैं। ये प्रबन्धक लोगों पर अत्यधिक नियन्त्रण और पर्यवेक्षण लागू करते हैं क्योंकि वे लोगों पर नियन्त्रण रखने के लिए ही काम करते हैं। साथ ही ये प्रबन्धक यह भी मानते हैं कि कुछ समय के लिए निर्देशक व नियन्त्रक व्यवहार आवश्यक होता है। जब ये प्रबन्धक प्रतिमान–A व्यवहार का उपयोग करते हैं तो ये स्व–निर्देशन के लिए लोगों में कौशल और क्षमताओं का विकास करने का प्रयास भी करते हैं ताकि वे एक ऐसे वातावरण का सृजन कर सके जिसमें वे YB प्रबन्धक के रूप में बदल जाएँ। उल्लेखनीय है कि अर्गीरिस मानते हैं कि अधिकांश संगठनों का परिचालन YB प्रतिमानों के अनुसार नहीं होता अपितु अधिकांश संगठन XA संगठन होते हैं। संगठनात्मक विकास (Organizational Development) के लिए आवश्यक है कि संगठन XA से YB की ओर अग्रसर हों।

अन्य विचार (Miscellaneous Views)

संगठनात्मक सिद्धान्त–फ्यूजन मॉडल, इम्मैचरिटी–मैचुरिटी विचारधारा, सेन्सिटिव ट्रैनिंग, ऑर्गेनाइजेशनल चैन्ज, मैट्रिक्स संगठन, प्रतिमान–A तथा B आदि पर अर्गीरिस के विचार काफी मौलिकता और महत्त्व रखते हैं। इनके अलावा उनके कतिपय अन्य महत्त्वपूर्ण विचारों का अति संक्षेप में निम्न बिन्दुओं में प्रदर्शित कर सकते हैं : संगठन में व्यक्तियों का अध्ययन, अन्तर्वैयक्तिक सामर्थ्य को बढ़ाने पर जोर, बजटीय नियन्त्रण का व्यक्तियों पर प्रभाव का मूल्यांकन, सहभागी प्रबन्ध (Participative Management) विचार का प्रबल समर्थन।

'लर्निंग ऑर्गेनाइजेशन (Learning Organization) की आधुनिक अवधारणा के विकास में अर्गीरिस का महत्त्वपूर्ण योगदान है। एक 'लर्निंग ऑर्गेनाइजेशन' वह संगठन होता है जो अनुकूलन और परिवर्तन की सतत् क्षमता का विकास कर चुका हो। अर्गीरिस और उनके सहयोगियों ने 'सिंगल–लूप लर्निंग' (Single-Loop Learning) में विभेद किया। 'सिंगल लूप लर्निंग' में संगठन के ज्ञात उद्देश्यों को प्राप्त करने की क्षमता को सुधारना शामिल है। ये दैनिक और व्यावहारिक 'सीखने' (Learning) से जुड़ा है। 'सिंगल–लूप' में संगठन अपनी आधारभूत मान्यताओं में बिना कोई बड़ा परिवर्तन किए सीखता है। 'डबल–लूप लर्निंग' में संगठन के उद्देश्यों की प्रकृति तथा उनको घेरे हुए मूल्यों और विश्वासों का पुनर्मूल्यांकन किया जाता है। इस प्रकार के 'सीखने' में संगठन की संस्कृति में परिवर्तन शामिल है। महत्त्वपूर्ण रूप से 'डबल–लूप' में संगठन का वह सीखना शामिल होता है कि किस प्रकार 'सीखा' जाएँ।

मूल्यांकन (Evaluation)

व्यवहारवादी विचारक के रूप में अर्गीरिस का प्रबन्ध जगत को महत्त्वपूर्ण योगदान है। उन्होंने प्रबन्ध साहित्य में अनेक नई अवधारणाओं का विकास किया। वे संगठन के मानवतावादी उपागम का समर्थन करते हैं।

अर्गीरिस की यह कहकर आलोचना की जाती है कि उन्होंने संगठन के जिन सिद्धान्तों की आलोचना की है, दरअसल वह उनकी इन सिद्धान्तों की गलत व्याख्या का परिणाम है। अर्गीरिस के 'अपरिपक्वता–परिपक्वता मॉडल' की भी यह कहकर आलोचना की जाती है कि कोई व्यक्ति किसी समय किस स्थिति में होता है, इसको मापना कठिन कार्य है। व्यक्ति का व्यवहार किन्हीं परिस्थितियों में अत्यधिक परिपक्वता दर्शाता है, वहीं कभी–कभी अपरिपक्वता भी।

जिस तरह अर्गीरिस साइमन की आलोचना करते हैं, साइमन भी अर्गीरिस के विचारों की कटु आलोचना करते हैं। 'संरचना शैतान है' का विचार अर्गीरिस के दिमाग में यह बात कि शक्ति की आवश्यकता है, से प्रभावित लगता है, जैसा कि साइमन कहते हैं :

.....जो भ्रष्ट करती है वह शक्ति नहीं है बल्कि शक्ति की आवश्यकता है और यह शक्तिशाली और शक्तिहीन दोनों को भ्रष्ट करती है।

अर्गीरिस की मान्यताओं की कतिपय पद्धतिशास्त्रीय आलोचनाएँ की जाती है। अगीरिस प्राधिकार के प्रति वैर–भाव (Antipaty) रखते हैं। यह उचित नहीं माना जा सकता। उनका यह मानना कि संगठन में जो लोग कार्य करते हैं वे प्राधिकार (Outhority) का विरोध करते हैं, सही नहीं है। लोग संगठन में सत्ता (प्राधिकार) को अवश्य स्वीकार करते हैं क्योंकि ऐसा करने से व्यक्ति और संगठन दोनों के हितों की पूर्ति होती है। अर्गीरिस का यह मानना भी कुछ सीमा तक गलत है कि आत्म–प्रबोधन का लक्ष्य एक सार्वभौमिक लक्ष्य है। अनेक परिस्थितियों में लोग इस लक्ष्य को कोई महत्त्व नहीं देते हैं। अर्गीरिस द्वारा व्यवस्था और व्यक्ति के बीच के सम्बन्धों का गलत चित्रण किया गया है। वे व्यवस्था और व्यक्ति के बीच संघर्ष की अतिवादी व्याख्या करते हैं।

उपर्युक्त आलोचनाओं के बावजूद प्रबन्ध सदैव अर्गीरिस का ऋणी रहेगा जिन्होंने अपने मौलिक विचारों से प्रबन्ध साहित्य को समृद्ध किया।

अध्याय – 8

रेन्सिस लिकर्ट

(RENSIS LIKERT)

''कार्य–सम्पादन का श्रेष्ठ रिकॉर्ड रखने वाले पर्यवेक्षक अपने कर्मचारियों की समस्याओं के मानवीय पहलुओं पर अपना प्राथमिक ध्यान केन्द्रित करते हैं और साथ ही उच्च निष्पादन लक्ष्यों के साथ प्रभावी कार्य समूहों के निर्माण के प्रयत्नों पर भी।" – रेन्सिस लिकटी

रेन्सिस लिकर्ट उन कुछेक प्रबन्धकीय विचारकों में से एक हैं जिसके मौलिक विचारों ने प्रबन्ध पर काफी प्रभाव डाला है। प्रबन्ध प्रणालियाँ– 1–4 रेन्सिस लिकर्ट का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान माना जाता है। मूलतः लिकर्ट एक सामाजिक मनोवैज्ञानिक थे।

1903 में अमेरिका में रेन्सिस लिकर्ट का जन्म हुआ। विश्वविद्यालयी शिक्षा पूरी करने के पश्चात् 29 वर्ष की आयु में आपने कोलम्बिया विश्वविद्यालय से डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। 1946 में लिकर्ट ने मिशिगन विश्वविद्यालय में सर्वेक्षण अनुसन्धान केन्द्र की स्थापना की। "लिकर्ट और उनके सहयोगियों ने अमेरिकी व्यवसाय और सरकार में प्रबन्ध व्यवहार पर व्यापक एवं गहन शोध किए। लगभग 40 शोधकर्ताओं के समूह द्वारा 25 वर्ष से अधिक समय तक और 15 मिलियन डॉलर के खर्चे पर किए गए ये शोध कार्य प्रसिद्ध हॉथोर्न प्रयोगों के समकक्ष थे। लिकर्ट के इन शोधों के परिणामों ने प्रबन्ध जगत् को काफी प्रभावित किया।

लिकर्ट एक अच्छे लेखक भी थे। लिकर्ट की कुछ महत्त्वपूर्ण पुस्तकें इस प्रकार हैं:–

New Patterns of Management (1961), The Human Organization (1967), New ways of Managing Conflicts (1976),

इसके अलावा लिकर्ट के कई लेख विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। मिशिगन अध्ययनों के परिणामों को उन्होंने 'न्यू पैटनर्स ऑफ मैनेजमेन्ट' में प्रस्तुत किया। 1961 में प्रकाशित 'न्यू पैटनर्स ऑफ मैनेजमेन्ट' उनकी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कृति है। लिकर्ट प्रबन्ध पर अपने विचारों को 'न्यू' (नया) इसलिए कहते हैं कि ये प्रबन्धकों के सिद्धान्तों और व्यवहारों पर आधारित संगठन की एक नई विचारधारा को प्रकट करते हैं। इस अध्याय में लिकर्ट के विचारों की विभिन्न परिच्छेदों में विवेचना की जा रही है।

पर्यवेक्षण शैलियाँ (Supervisory Styles)

लिकर्ट तथा उनके सहयोगियों ने अपने अध्ययन के दौरान इस बात पर ध्यान दिया कि आखिर किन कारणों से कुछ प्रबन्धक बहुत अच्छे परिणाम देते हैं जबकि कुछ अन्य प्रबन्धक ऐसा करने में असफल रहते हैं। सफल प्रबन्धक ऐसा क्या करते हैं जो कि सामान्य प्रबन्धक नहीं कर पाते? प्रबन्धकों की दक्षता को किस प्रकार मापा जा सकता है? किन कसौटियों पर प्रबन्धकों के परिणामों को मापा जा सकता है? क्यों कुछ प्रबन्धकों के अधीनस्थ कार्य पर सन्तुष्ट रहते हैं और कुछ के साथ असन्तुष्ट आदि–आदि। इन प्रश्नों के जवाब तलाशने के अपने प्रयासों में लिकर्ट दो प्रकार के पर्यवेक्षकों की पहचान करते हैं :

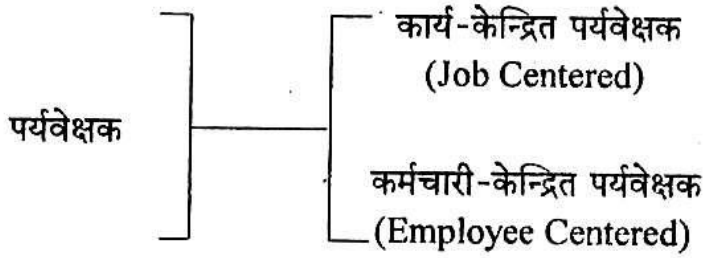

लिकर्ट का मानना था कि जो पर्यवेक्षक प्रथम श्रेणी में रखे गए हैं अर्थात् कार्य–केन्द्रित पर्यवेक्षक, उनकी प्राथमिक चिन्ता किसी भी तरह से कार्य–लक्ष्यों (Task) को पूरा करने की होती है। कार्य–केन्द्रित पर्यवेक्षकों की महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ इस प्रकार हैं :

1. कार्य–केन्द्रित पर्यवेक्षक अपने अधीनस्थों से कार्य करवाने के लिए दबाव डालते हैं। इनकी प्राथमिक रुचि कार्य–लक्ष्यों को किसी भी तरह से प्राप्त करना होता है।
2. कार्य–केन्द्रित पर्यवेक्षकों को अपने अधीनस्थों पर बहुत कम विश्वास होता है।
3. इस प्रकार के पर्यवेक्षक बन्द और व्यापक पर्यवेक्षक में विश्वास करते हैं चूँकि कार्य–लक्ष्यों को प्राप्त करना इनका प्राथमिक उद्देश्य होता है अतः ये व्यापक पर्यवेक्षण का सहारा लेते हैं और अपने अधीनस्थों की प्रत्येक गतिविधि पर कड़ी नजर रखते हैं।
4. इस प्रकार के पर्यवेक्षक अपने अधीनस्थों को बहुत थोड़ी स्वतन्त्रता देते हैं।
5. कार्य–केन्द्रित पर्यवेक्षक अपने अधीनस्थों की गलतियों पर दण्डात्मक और आलोचनात्मक होते हैं। गलतियाँ करने पर अधीनस्थों को दण्ड दिया जाता है।

इसके विपरीत दूसरी श्रेणी के पर्यवेक्षकों को लिकर्ट कर्मचारी–केन्द्रित पर्यवेक्षक कहते हैं। ये अपने अधीनस्थों के मानवीय पहलुओं पर ध्यान रखते हैं और उच्च कार्य–सम्पादन के लिए प्रभावी टीम निर्माण पर जोर देते हैं। इन्की मुख्य विशेषताएं इस प्रकार हैं :–

1. कर्मचारी–केन्द्रित पर्यवेक्षक अपने अधीनस्थों पर कम दबाव रखते हैं। मानवीय पहलुओं पर अधिक ध्यान होने के कारण दबाव का प्रयोग यदा–कदा ही किया जाता है।
2. ये पर्यवेक्षक अपने अधीनस्थों पर पूरा विश्वास रखते हैं और साथ ही कर्मचारी भी अपने पर्यवेक्षकों पर विश्वास करते हैं जो संगठन के लिए हितकारी होता है।
3. इस प्रकार के पर्यवेक्षक अपने अधीनस्थों पर सामान्य पर्यवेक्षण ही लागू करते हैं और अपने अधीनस्थों को अपने कार्य की गति निर्धारित करने के लिए खुला छोड़ देते हैं।
4. ये पर्यवेक्षक अपने अधीनस्थों को अभिप्रेरित करते हैं और सामुहिक निर्णय–प्रक्रिया का प्रयोग करते हैं। सामूहिक निर्णयन अधीनस्थों को अभिप्रेरित करने व उच्च निष्पादन लक्ष्यों को स्वीकार करने की प्रभावी तकनीक होती है।
5. कर्मचारी–केन्द्रित पर्यवेक्षक अपने अधीनस्थों से गलतियाँ होने तथा समस्याएँ पैदा होने पर उनकी मदद करते हैं।

कार्य–केन्द्रित और कर्मचारी–केन्द्रित पर्यवेक्षकों में से अधिक सफलं कर्मचारी–केन्द्रित पर्यवेक्षक होते हैं जो कि अपने अधीनस्थों के प्रति मानवीय होते हैं, उच्च कार्य–सम्पादन (High Performance) दर्शाते हैं। इसके विपरीत निम्न कार्य–सम्पादन वाले पर्यवेक्षक अपने अधीनस्थों के प्रति काफी कड़े होते हैं। लिकर्ट और उनके सहयोगियों अपने अध्ययनों में उन्होंने उच्च कार्य–सम्पादन करने वाले पर्यवेक्षकों को कम उत्पादन करने वाली इकाइयों में लगाया और निम्न कार्य–सम्पादन वाले पर्यवेक्षकों को अधिक उत्पादन करने वाली इकाइयों में लगाया। अध्ययन के

नतीजतन पाया गया कि कम उत्पादन करने वाली इकाइयाँ भी उच्च कार्य–सम्पादन करने वाले पर्यवेक्षकों के कार्य करने से अपना उत्पादन बढ़ाने में सफल हो गईं। इसके विपरीत अधिक उत्पादन करने वाली इकाइयों में निम्न कार्य–सम्पादन वाले पर्यवेक्षकों के कारण उत्पादन गिर गया। लिकर्ट का यह भी मानना था कि भारी दबाव के प्रयोग से थोड़े समय के लिए तो अच्छे परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं पर धीरे–धीरे यह अदृश्य होता जाता है।

लिकर्ट का यह मानना था कि कर्मचारी को प्राप्त होने वाला पर्यवेक्षण उसकी उत्पादकता, सन्तुष्टि, अभिप्रेरणा आदि को प्रभावित करता है। यदि कर्मचारी को अच्छा पर्यवेक्षण नहीं मिलता है तो वह सन्तुष्ट नहीं रहता। इसलिए लिकर्ट का आग्रह था कि, ''यदि कोई पर्यवेक्षक अपने कर्मचारियों को अभिप्रेरित करना चाहता है तो उसे कार्य–केन्द्रित न होकर 'कर्मचारी–केन्द्रित' होना चाहिए।'' कर्मचारी–केन्द्रित पर्यवेक्षक न केवल कर्मचारियों को अपने वर्तमान कार्य को अच्छी तरह से करने को प्रशिक्षित करते हैं अपितु आगामी उच्च कार्य को करने के लिए भी प्रशिक्षित करते हैं।''

प्रबन्ध प्रणालियाँ–1–4 (Management Systems-1-4)

रेन्सिस लिकर्ट का प्रबन्ध को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान उनका प्रबन्ध प्रणालियों का वर्गीकरण है। लिकर्ट का प्रबन्ध प्रणालियों का वर्गीकरण इस प्रकार है

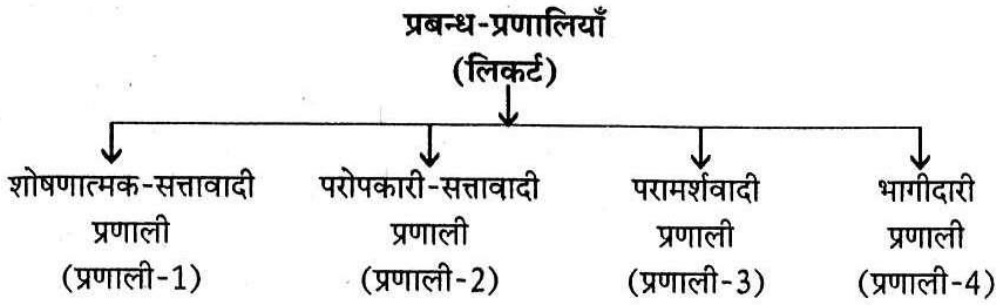

लिकर्ट ने चारों प्रणालियों की अलग–अलग विशेषताओं को रेखांकित किया है। लिकर्ट की योजना का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :

प्रणाली –1 : शोषणात्मक–सत्तावादी (Exploitative-Authoritative): शोषणात्मक– सत्तावादी प्रबन्ध प्रणाली या प्रणाली–1 की मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं :

– शोषणात्मक सत्तावादी प्रणाली में प्रबन्ध का अपने कर्मचारियों में बिल्कुल विश्वास नहीं होता है। प्रबन्ध अपने कर्मचारियों को निर्णय–प्रक्रिया में कभी भी शामिल नहीं करता है। – इस प्रणाली में निर्णयन और लक्ष्य निर्धारण का कार्य प्रबन्ध के उच्च स्तर पर होता है और अधीनस्थों को इसकी सूचना दे दी जाती है।

– अधीनस्थ कर्मचारियों को डर, धमकियों, दण्ड और कभी–कभी पुरस्कारों के साथ कार्य करने के लिए बाध्य किया जाता है। कर्मचारियों को शारीरिक व सुरक्षात्मक स्तर की आवश्यकताओं पर ही सन्तुष्ट किया जाता है।

– प्रबन्ध–कर्मचारी अन्तःक्रिया कभी–कभी ही हो पाती है और जब भी होती है भय और अविश्वास के वातावरण में।

– इस प्रणाली में नियन्त्रण की प्रकृति काफी केन्द्रीयकृत होती है। – इस प्रणाली में सम्प्रेषण की प्रकृति काफी औपचारिक होती है और कर्मचारियों को केवल आदेशों की सूचना दे दी जाती है।

इस प्रकार प्रणाली–1 काफी तानाशाही प्रकृति की होती है जिसमें कर्मचारियों पर कठोर नियन्त्रण रखा जाता है और प्रबन्ध के साथ उनकी अति–सीमित अन्तःक्रिया होती है।

प्रणाली–2 : परोपकारी–सत्तावादी (Benevolent Authoritative) : प्रणाली–2 प्रणाली 1 की तुलना में कुछ उदार होती है। इस प्रणाली की मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं :

– इस प्रणाली में प्रबन्ध अपने कर्मचारियों में काफी कम विश्वास और भरोसा रखता है जिस प्रकार मालिक और नौकर के बीच होता है।

– इस प्रणाली में निर्णयन और संगठन के लक्ष्यों का निर्धारण उच्च स्तर पर होता है पर निर्धारित स्वरूप में कुछ निर्णय निचले स्तरों पर भी लिए जाते हैं।

– पुरस्कार और दण्ड का प्रयोग कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने के लिए किया जाता है।

– इस प्रणाली में भी प्रबन्ध और कर्मचारियों के बीच सीमित अन्तःक्रिया होती है। इसमें भी भय का वातावरण बना रहता है।

– यद्यपि नियन्त्रण की प्रकृति इसमें भी केन्द्रीयकृत होती है तथापि कुछ नियन्त्रण मध्य और निम्न स्तरों तक प्रत्यायोजित किया जाता है।

– इस प्रणाली में अनौपचारिक संगठन का विकास होता है पर यह सदैव ही औपचारिक संगठन के लक्ष्यों का विरोध नहीं करता है।

इस प्रकार प्रणाली–2 प्रणाली–1 से अधिक लचीली और उदार है। इसमें कर्मचारियों को कुछ निर्णयन और नियन्त्रण सम्बन्धी अधिकार दिए जाते हैं यद्यपि ये काफी सीमित होते हैं।

प्रणाली– 3 :परामर्शात्मक प्रणाली (Consultative) : प्रणाली–3 की महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ इस प्रकार हैं :

– इस प्रणाली में अधीनस्थों पर विश्वास किया जाता है पर फिर भी पूर्ण विश्वास और भरोसे का अभाव रहता है।

– मुख्य नीति और निर्णय उच्च स्तर पर ही लिए जाते हैं पर निचले स्तरों पर भी निर्णय लेने की कर्मचारियों को इजाजत होती है।

– अभिप्रेरणा प्रणाली में पुरस्कार और कभी–कभी दण्ड का प्रयोग किया जाता है।

– पर्याप्त विश्वास और भरोसे के वातावरण में प्रबन्ध और कर्मचारियों के बीच अन्तःक्रियाएँ होती रहती हैं।

– उत्तरदायित्व की भावना के साथ नियन्त्रण के महत्त्वपूर्ण आयामों का निचले स्तरों तक प्रत्यायोजन किया जाता है।

– एक अनौपचारिक संगठन का विकास होता है जो या तो संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायता करता है या आंशिक प्रतिरोध।

– संचार उर्ध्वगामी और अधोगामी दोनों प्रकार का होता है।

इस प्रकार प्रणाली–3 पूर्व की दोनों प्रणालियों से काफी उदार है। इसमें कर्मचारियों पर पर्याप्त भरोसा किया जाता है व निर्णयन तथा नियन्त्रण के अधिकारों का प्रत्यायोजन किया जाता है।

प्रणाली–4 : भागीदारीपूर्ण प्रणाली (Participative) : लिकर्ट ने प्रणाली–4 को श्रेष्ठ बताया है। प्रणाली–4 की मुख्य विशेषताएं इस प्रकार हैं :

– इस प्रणाली में प्रबन्ध अपने कर्मचारियों पर पूरा विश्वास और भरोसा रखते हैं।

– निर्णय–प्रक्रिया व्यापक रूप से बिखरी होती है और कर्मचारियों की निर्णय–प्रक्रिया और लक्ष्य–निर्धारण में पूर्ण भागीदारी होती है। अभिप्रेरणा के साधन हैं

– सहभागिता, आर्थिक पुरस्कारों, लक्ष्य–निर्धारण में, विधियों के सुधारने में भागीदारी आदि।

– उच्च विश्वास और भरोसे के साथ प्रबन्ध व कर्मचारियों के बीच अन्तःक्रियाएँ होती रहती है।

– नियन्त्रण काफी बिखरी प्रकृति का होता है और निचली इकाइयाँ भी इसमें शामिल होती हैं।

– औपचारिक और अनौपचारिक संगठन प्रायः एक और समान होते हैं।

– संचार उर्ध्वगामी, अधोगामी और समस्तरीय प्रकार का होता है।

लिकर्ट के मत में प्रणाली–4 अपने लक्ष्यों के कारण सबसे अधिक पसन्द की जाती है। बेहतर लक्ष्य प्राप्ति के लिए वह प्रणाली–1 से प्रणाली–4 की ओर बढ़ने का सुझाव देते हैं। उल्लेखनीय है कि अपनी पुस्तक 'न्यू वेज ऑफ मैनेजिंग कांफ्लिक्ट्स' में लिकर्ट प्रणाली – 4 का उल्लेख करते हैं। जब इस प्रणाली–1–4 टायपोलोजी में निष्पादन लक्ष्यों के स्तर तथा तकनीकी क्षमता का स्तर जैसे– चर (Variable) और जोड़ दिए जाएँ तथा इनका जोड़ उच्च हो तो ऐसी स्थिति को लिकर्ट तथा लिकर्ट प्रणाली–4 के रूप में अभिहीत करते हैं। यहाँ टोटल मॉडल का प्रतीक है।

संक्षेप में, उपर्युक्त वर्गीकरण योजना के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रणाली–1 कार्य–अभिमुखी है, प्रणाली–4 सम्बन्ध–अभिमुखी प्रबन्ध प्रणाली है जो टीम वर्क, पारस्परिक विश्वास और भरोसे पर आधारित होती है। प्रणाली–2 और 3 इसके बीच की है और मैक्ग्रेगर की 'थ्योरी–एक्स' और 'थ्योरी–वाई' के नजदीक हैं लिकर्ट ने पाया कि यदि किसी संगठन की प्रबन्ध शैली प्रणाली–4 के जितने ज्यादा निकट है वह संगठन उतनी ही अधिक उच्च उत्पादकता दर्शाता है। इसके विपरीत प्रणाली–1 के निकट की प्रबन्ध शैली निम्न उत्पादकता दर्शाती है।

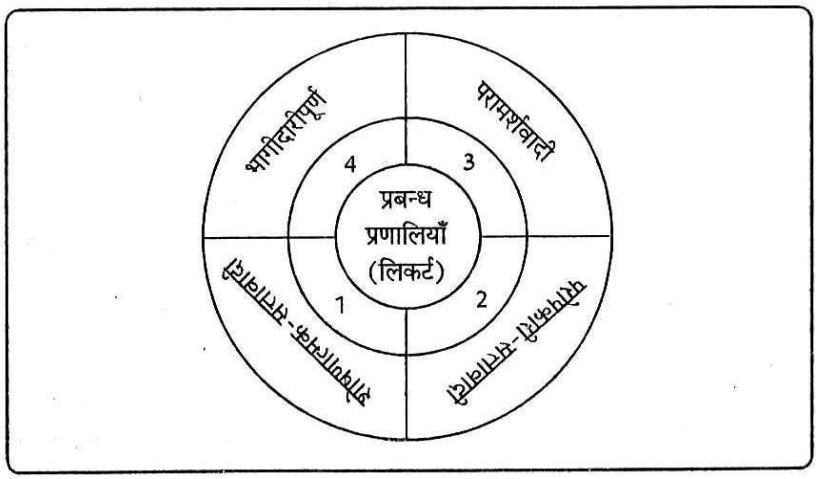

लिकर्ट ने अपनी प्रणाली–1–4 को स्पष्टतः समझाने के लिए निम्न चार्ट प्रस्तुत किया है।

लिकर्ट कहते हैं कि एक प्रणाली की कार्यकारी विशेषताओं को एकदम दूसरी प्रणाली पर आरोपित नहीं किया जा सकता। एक प्रणाली को पूर्णतया दूसरी प्रणाली में बदलने के प्रयासों से संगठनात्मक प्रभावशीलता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। फिर भी लिकर्ट प्रणाली–1 से प्रणाली 4 की ओर क्रमिक परिवर्तन का सुझाव देते हैं। लिकर्ट का

मत था कि मानव संसाधन विकास को दिशा देने के लिए आवश्यक सभी गुण प्रणाली–4 में पाए जाते हैं। जैसे–जैसे संगठन प्रणाली–4 के निकट पहँचता है वैसे–वैस उसके कार्यों में सुधार होता जाता है और इच्छित प्रतिफलों में वृद्धि होती जाती है।

संगठनात्मक विकास सुधार (Organizational Improvement)

लिकर्ट ने संगठनात्मक विकास के लिए (For Organizational Improvement) प्रणाली 4 का निम्न चक्र प्रस्तुत किया है :

1. आइडियल मॉडल को स्थापित करना (प्रणाली–4)
2. आइडियल मॉडल के आधारभूत आयामों पर संगठनात्मक प्राप्तियों को मापना
3. प्राप्तियों का विश्लेषण और व्याख्या आइडियल मॉडल के साथ सम्बन्धों के आधार पर करना तथा संगठनात्मक क्षमताओं और सही कमजोरियों का निदान खोजना
4. कार्य–योजना को क्रियान्वित करना।

उपर्युक्त संगठनात्मक सुधार चक्र के लिए लिकर्ट निम्न मार्गदर्शक सिद्धान्त सुझाते हैं

– कार्य–प्रयासों को नेतृत्त्व व्यवहार, संरचना आदि कारणात्मक चरों पर केन्द्रित करना।

– धीरे–धीरे प्रणाली–1 से प्रणाली–4 की ओर बढ़ना। एक साथ तीव्र उछाल उपयुक्त नहीं होता।

– कार्य योजना में उनको शामिल किया जाए जिनका व्यवहार सुधार प्रक्रिया के दौरान परिवर्तित होता है।

– कार्य योजना प्रक्रिया में जहाँ तक सम्भव हो वस्तुनिष्ठ, निर्वैयक्तिक प्रमाण काम में लिए जाएँ।

– जहाँ तक सम्भव हो सके सुधार कार्यक्रम में उन लोगों का सक्रिय सहयोग निश्चित किया जाए जो शक्तिशाली और प्रभावशाली पदों पर आसीन हों।

– सहायक और समर्थक वातावरण में कार्य योजना को लागू किया जाए।

इन मार्गदर्शी सिद्धान्तों की सहायता से संगठनात्मक सुधार में प्रणाली–4 को प्रयुक्त किया जा सकता है। वस्तुतः आज अधिकांश संगठन प्रणाली–2 और प्रणाली–3 के निकट है।

संगठनात्मक प्रभावकारिता (Organizational Effectiveness)

संगठनात्मक प्रभावकारिता संगठन का एक महत्त्वपूर्ण आयाम है। कई बार प्रभावकारिता और दक्षता (Efficiency) को एक समान ही मान लिया जाता है। इन दोनों में अन्तर है। इन दोनों में अन्तर बताते हए पीटर ड्रकर अपनी पुस्तक मैनेजमेन्ट : टास्कस, रिसपोन्सीबिलिटीज, प्रेक्टिसेस (हार्पर एण्ड रो, न्यूयॉर्क, 1973, पृ. 45) में लिखते हैं

प्रभावकारिता सफलता की आधारशीला है– दक्षता सफलता प्राप्ति के पश्चात् बने रहने की एक न्यूनतम शर्त है। दक्षता चीजों को ठीक तरीके से करना है। प्रभावकारिता ठीक चीजें करना है। यह प्रश्न काफी महत्त्व रखता है कि आखिर संगठन में प्रभावकारिता का निर्धारण कैसे किया जाता है? प्रभावकारिता का वर्णन करते समय रेन्सिस लिकर्ट द्वारा बताए गए विभिन्न प्रकार के चरों का उल्लेख समीचीन होगा। लिकर्ट ने निम्न तीन प्रकार के चरों की पहचान की है कार्य–कारणात्मक चर हस्तक्षेपकारी चर तथा निर्गत या लक्ष्य–परिणाम चर कार्य–कारणात्मक चर वे होते हैं जो किसी संगठन में घटनाओं के क्रम तथा इसके परिणामों या उपलब्धियों (Accomplishments) को प्रभावित करते हैं। संगठन और इसका प्रबन्धन इन स्वतन्त्र चरों को बदल सकते हैं तथा अन्य सामान्य व्यापार की स्थितियों के विपरीत ये चर संगठन के नियन्त्रण के परे भी नहीं होते हैं। कार्य–कारणात्मक चरों के उदाहरण निम्न हैं नेतृत्व रणनीतियाँ, कौशल और व्यवहार प्रबन्ध के निर्णय और संगठन की नीतियाँ तथा संरचना आदि। ये चर

संगठनों के परिणामों को प्रभावित करते हैं। नेतृत्व रणनीतियाँ, कौशल, व्यवहार और अन्य कार्य–कारणात्मक चर संगठन में मानवीय संसाधनों या हस्तक्षेपकारी चरों को प्रभावित करते हैं। लिकर्ट के अनुसार हस्तक्षेपकारी चर वे होते हैं जो संगठन की आन्तरिक अवस्था (Internal State) की वर्तमान स्थिति का प्रतिनिधित्व करते हैं। हस्तक्षेपकारी चरों में निम्न कारक शामिल हैं– सदस्यों की उद्देश्य के प्रति प्रतिबद्धता, अभिप्रेरणा तथा मनोबल और नेतृत्व में उनके कौशल (Skill), संचार, संघर्ष प्रस्ताव, निर्णय निर्माण तथा समस्या समाधान ।

लिकर्ट ने तीसरे प्रकार के चरों के रूप में निर्गत चरों (Output Variables) या साध्य परिणाम चरों की पहचान की। यह वे चर होते हैं जो संगठन की उपलब्धियों (Achievements) को प्रकट करते हैं। जब भी प्रबन्धक संगठन की प्रभावकारिता का मूल्यांकन करते हैं तो 90 प्रतिशत से ज्यादा प्रबन्धक केवल निर्गत या उत्पादन (Output) का मापन करके ही प्रभावकारिता का पता लगाते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि एक प्रबन्धक की प्रभावकारिता का निर्धारण शुद्ध लाभों द्वारा, एक प्रोफेसर की प्रभावकारिता का निर्धारण उसके द्वारा प्रकाशित लेखों और पुस्तकों द्वारा तथा एक बास्केटबॉल कोच की प्रभावकारिता का निर्धारण उनके हार–जीत के रिकॉर्ड से ही किया जा सकता है। कार्य–कारणात्मक चर हस्तक्षेपकारी चरों का स्तर या स्थिति (Level or Condition) पैदा करते हैं तथा जो साध्य परिणाम चरों को प्रभावित करते हैं। हस्तक्षेपकारी चरों को प्रत्यक्ष रूप से उन्नत करना अधिक प्रभावी नहीं होता है। इसके बदले में, यदि हम हस्तक्षेपकारी चरों को उन्नत करना चाहते हैं, तो कार्य–कारणात्मक चरों को परिवर्तित करना अधिक प्रभावी रहता है। इसी प्रकार साध्य परिणाम चरों को हम कार्य–कारणात्मक चरों को संशोधित (Modify) करके उन्नत कर सकते हैं न कि हस्तक्षेपकारी चरों को बदल कर ।

यदि लिकर्ट द्वारा बताए गए चरों को हम देखें तो पाते हैं कि इन तीनों श्रेणियों में आपसी सम्बन्ध पाए जाते हैं। इनमें उद्दीपन (Stimuts) कार्य–कारणात्मक चर होते हैं, हस्तक्षेपकारी चर सावयव (Organism) पर कार्य करने वाले होते हैं तथा निर्गत चर कुछ निश्चित अनुक्रिया (Responses) पैदा करने वाले होते हैं। इन तीनों चरों को निम्न तालिका में दर्शाया जा रहा

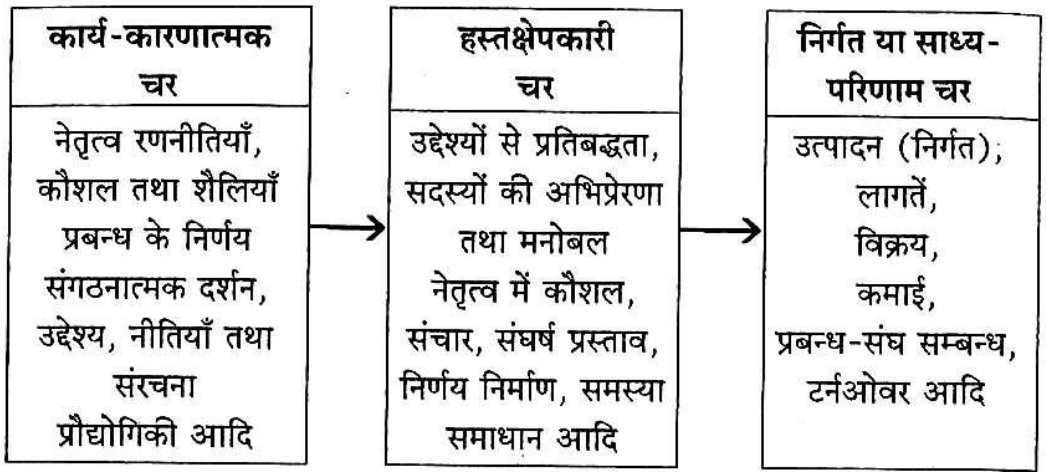

रेन्सिस लिकर्ट के कार्य–कारणात्मक, हस्तक्षेपकारी व निर्गत चरों में सम्बन्ध

संघर्ष का प्रबन्ध (Managing Conflicts)

संघर्ष के प्रबन्ध (Managing Conflicts) पर लिकर्ट के विचार महत्त्वपूर्ण हैं। संघर्ष या मतभेद किसी भी संगठन में उत्पन्न हो सकते हैं। उन्हें यथाशीघ्र सुलझाया जाना आवश्यक होता है। लिकर्ट ने संघर्षों को सुलझाने के नए रास्तों का उल्लेख किया है। 'न्यू वैज ऑफ मैनेजिंग कॉनफ्लिकट्स' पुस्तक में लिकर्ट संघर्ष को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि संघर्षः

''अपने चाहे गए परिणाम, जो यदि प्राप्त हो जाते हैं, तो उन्हें प्राप्त करने की तीव्र इच्छा दूसरों द्वारा चाहे गए परिणामों की प्राप्ति में बाधा पहुँचाती है और इस कारण शत्रुता पैदा होती है।''

लिंकर्ट दो तरह के संघर्षों का उल्लेख करते हैं– प्रथम, सारभूत संघर्ष (Substantive) तथा दूसरे, भावनात्मक संघर्ष । लिकर्ट संघर्षों का प्रबन्ध करने के लिए सहयोगी और समर्थक सम्बन्धों की रणनीति को अपनाने का सुझाव देते हैं।

लिंकिंग–पिन मॉडल (Linking-pin Model)

लिंकिन–पिन मॉडल लिकर्ट के महत्त्वपूर्ण योगदानों में से एक है। लिकर्ट का लिंकिंग–पिन मॉडल अन्तःक्रिया–प्रभाव व्यवस्था की वृद्धि में सहायता करता है और परम्परागत पदसोपानात्मक व्यवस्था की बाधाओं को दूर करता है।

लिकर्ट का लिंकिंग–पिन मॉडल इस विचार पर आधारित है कि संगठन में प्रत्येक व्यक्ति दो समूहों का महत्त्वपूर्ण सदस्य होता है। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति संगठन में एक लिंकिंग–पिन की भाँति कार्य करता है जो कि संगठन की ऊपरी और निचली इकाइयों से जुड़ा होता है। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति संगठन में दो परस्पर व्यापित समूहों में दोहरी भूमिका निभाता है। वह संगठन की उच्च स्तरीय इकाई का तो सदस्य होता है और निम्न स्तरीय इकाइयों का नेता । इस मॉडल में व्यक्ति का व्यक्ति से सम्बन्ध के स्थान पर समूह का समूह से सम्बन्ध अस्तित्व रखता है। इस मॉडल में अधिक ध्यान 'उर्ध्वगामी' अर्थात् ऊपर की ओर दिया जाता है। 'उर्ध्वगामी अभिमुखिता' लक्ष्यों की प्राप्ति, संचार, पर्यवेक्षण प्रभाव आदि में देखी जा सकती है। परम्परागत पदसोपानात्मक व्यवस्था जो अधोगामी अर्थात् नीचे की ओर उन्मुखता पर जोर देती है, के स्थान पर यह मॉडल उर्ध्वगामी अभिमुखिता पर ध्यान देता है। लिकर्ट बाद में इस मॉडल का और विकास करते हैं और इसमें क्षैतिज लिंकेज को जोड़ते हैं। इस प्रकार उनका मॉडल क्षैतिज आयामों को जोड़ते हुए उर्ध्वगामी अभिमुखता पर जोर देता है। लिकर्ट के लिंकिंग–पिन मॉडल में समूह कार्य अधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सभी समूह शक्तिशाली माने जाते हैं। लिकर्ट के लिंकिंग–पिन मॉडल को इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है :

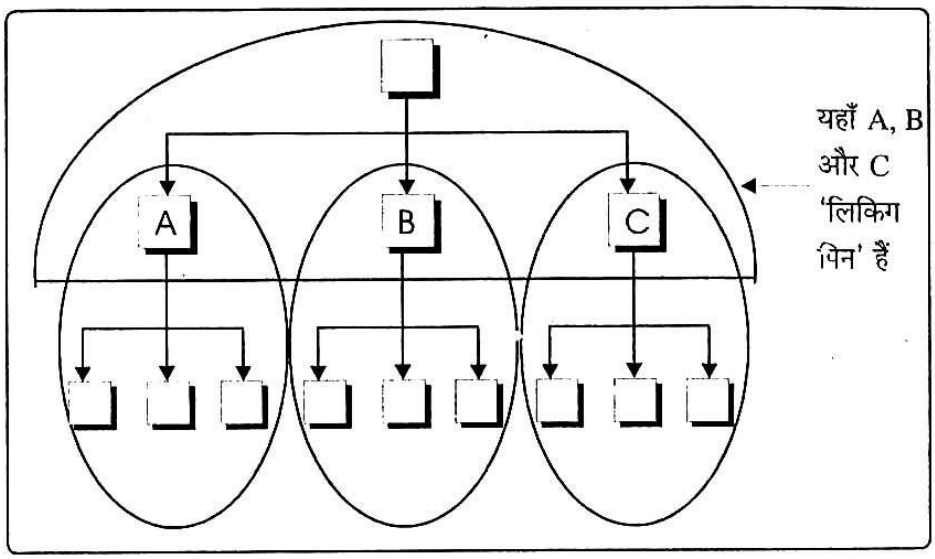

चित्र : लिकर्ट का 'लिंकिंग–पिन मॉडल'

लिकर्ट के 'लिंकिंग–पिन मॉडल' की यह कहकर आलोचना की जाती है कि इसने ओर कुछ नया नहीं किया सिवाय परम्परागत पदसोपान संरचना के चारों ओर एक त्रिभुज बनाने के। साथ ही इसकी यह कहकर भी आलोचना की जाती है कि इससे निर्णय निर्माण की प्रक्रिया धीमी पड़ जाएगी। फिर भी, यह मॉडल निर्णयन में व्यक्तियों की अधिक

सहभागिता को प्रोत्साहित करता है। 'उर्ध्वाधर अभिमुखिता' का विचार वाकई एक नया विचार है और समतलीय लिंकेजों के साथ लिंकिंग–पिन व्यवस्था परम्परागत पदसोपानात्मक व्यवस्था से कहीं अधिक बेहतर है।

संगठनात्मक कार्य–सम्पादन (Organizational Performance)

संगठनात्मक कार्य–सम्पादन या परफोरमेन्स को कैसे मापा जाए और मानवीय कारक इसमें कितनी भूमिका निभाते हैं, विषय पर लिकर्ट के विचार महत्त्वपूर्ण है। इस सन्दर्भ में लिकर्ट अभिप्रेरणा की संशोधित विचारधारा का प्रतिपादन करते हैं। वे कहते हैं कि संगठनात्मक प्रभावकारिता को मापते समय मानवीय संसाधनों के संधारण (मैन्टीनेन्स) को अत्यधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व मानना चाहिए। टेलर के वैज्ञानिक प्रबन्ध से ऊँची उत्पादकता तो प्राप्त की जा सकती है परन्तु ये शत्रुता, नकारात्मक अभिप्रेरण तथा अभिवृत्ति सम्बन्धी प्रतिक्रियाएँ पैदा करता है।

आधुनिक समय में व्यक्ति अधिक आजादी और पहल चाहते हैं। लिकर्ट के मत में वे नियन्त्रण और कड़े पर्यवेक्षण को बिल्कुल नहीं स्वीकारते। आज संगठनात्मक कार्य–सम्पादन को मापने के लिए केवल उत्पादकता को ही एकमात्र घटक नहीं माना जाना चाहिए। मानवीय संसाधन भी इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उत्पादन पर अत्यधिक ध्यान देने वाले दृष्टिकोण की लिकर्ट आलोचना करते हैं तथा आरोप लगाते हैं कि ये दृष्टिकोण अभिप्रेरणा के महत्त्व पर कम ध्यान देता है और ले–देकर पुनः 'आर्थिक मानव' के विचार के चारों ओर ही घूमता रहता है। इसलिए लिकर्ट प्रबन्ध और संगठन की उस संशोधित विचारधारा का सुझाव देते हैं जो निम्न बातों पर ध्यान देती हैं :

1. कार्यरत स्थितियों में मानवीय व्यवहार को नियन्त्रित करने वाले अभिप्रेरणा बलों की प्रकृति तथा परिणाम।
2. उस तरीके पर जिसमें ये बल काम में लिए जा सकें और इनमें आपस में कोई संघर्ष न हो।

लिकर्ट अपनी संशोधित विचारधारा में वकालत करते हैं कि उच्चाधिकारियों और अधीनस्थों के बीच सम्बन्ध समर्थन वाले होने चाहिए न कि धमकी पर आधारित। लिकर्ट सुझाव देते हैं कि किसी निगम, एक विभाग या एक समूह के कार्य–निष्पादन का मापन करते समय निम्न घटकों पर अवश्य ध्यान दिया जाना चाहिए।

1. संस्था के साथ निष्ठा की भावना की व इसके उद्देश्यों के साथ पहचानीकरण,
2. इकाइयों व व्यक्तियों के लक्ष्य किस सीमा तक संगठनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होते हैं।
3. संगठन के सदस्यों के बीच अभिप्रेरणा स्तर, जिसमें निम्न चारों पर ध्यान दिया गया हो :– किए गए कार्य की गुणवत्ता व मात्रा सहित कार्य–सम्पादन, व्यर्थ की समाप्ति व लागतों को कम करने की चिन्ता, उत्पाद को सुधारने की चिन्ता, प्रक्रिया को सुधारने की चिन्ता।
4. संगठन में सदस्यों के बीच पारस्परिक और विभिन्न पदसोपानात्मक स्तरों पर विश्वास और भरोसे की मात्रा।
5. इकाइयों में टीम वर्क की मात्रा और गुणवत्ता तथा संगठन की इकाइयों के बीच टीम वर्क की मात्रा व गुणवत्ता।
6. जहाँ तक लोग सोचते हैं कि प्रत्यायोजन प्रभावी है, की मात्रा।
7. वह मात्रा जिसमें संगठन के सदस्य यह सोचें कि निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में उनके विचार, सूचनाएँ, प्रक्रिया का ज्ञान तथा अनुभव काम में लिया गया है।
8. संचार प्रक्रिया की उर्ध्वगामी, अधोगामी तथा समस्तरीय दक्षता और पर्याप्तता।
9. पर्यवेक्षकों के नेतृत्व सम्बन्धी कौशल व योग्यताएँ।

इस प्रकार लिकर्ट आग्रह करते हैं कि केवल उत्पादन ही कार्य–सम्पादन का एकमात्र मापदण्ड नहीं हो सकता। अनेक अन्य कारक भी इसमें शामिल किए जाने चाहिए।

अन्य विचार (Miscellaneous Views)

लिकर्ट तथा उनके सहयोगियों द्वारा किए गए 'मिशीगन अध्ययनों' ने प्रबन्ध के सिद्धान्त और व्यवहार को काफी प्रभावित किया। मिशीगन अध्ययनों के परिणामों में पर्यवेक्षण शैलियाँ, प्रबन्ध प्रणालियाँ–1–4, लिंकिंग–पिन मॉडल, कार्य–सम्पादन के मापन के अलावा भी कुछ अन्य परिणाम सामने आए जिनको पॉल पिगर्स तथा चार्ल्स मायर्स ने अपनी पुस्तक 'पर्सनल एडमिनिस्ट्रेशन' में इस प्रकार बताए हैं:

- उच्च उत्पादन समूहों और निम्न उत्पादन समूहों के नेतृत्व प्रतिमानों में महत्त्वपूर्ण अन्तर होते हैं।
- अपने कार्य की गति को निर्धारित करने की व्यक्ति की स्वतन्त्रता उसकी उत्पादकता से जुड़ी होती है। लिकर्ट कहते हैं – प्रबन्धक, जो अपनी इकाइयों में उच्च कार्य–सम्पादन (लक्ष्य) प्राप्त करते हैं, निम्न बातों से जुड़े होते हैं– आजादी की भावना, सामान्य लक्ष्य निर्धारित करके पर्यवेक्षक तथा बहुत कम विशिष्ट निर्देश जारी करके । यह न्यून कार्य–सम्पादन वाले प्रबन्धक नहीं कर पाते हैं।
- उच्च कार्य–सम्पादन के लिए प्रभावशाली अन्तःक्रिया–प्रभाव प्रणाली की आवश्यकता होती है।
- संगठन में पर्यवेक्षक सामान्यतया अपने अधीनस्थों के इस विश्वास का अनुमान कम करके लगाते हैं कि उनका बॉस उनकी समस्याओं को समझता है ।
- दबाव से अल्पकालीन अच्छे परिणाम ही प्राप्त हो सकते हैं।
- अनुकूल संगठन जलवायु में भागीदारी प्रबन्ध प्रणाली परिवर्तन के प्रति विरोध की भावना को घटाती है और उत्पादकता बढ़ाती है।

इनके अलावा रेन्सिस लिकर्ट ने समर्थात्मक सम्बन्धों के सिद्धान्त का प्रतिपादन भी किया। समर्थात्मक सम्बन्धों के सिद्धान्त (Principle of Supportive Relationships) के सम्बन्ध में वे कहते हैं : संगठन में नेतृत्व और अन्य प्रक्रियाएँ इस प्रकार होनी चाहिए कि जो इस बात की अधिकतम सम्भावना को सुनिश्चित कर सके कि संगठन के साथ सभी अन्तःक्रियाएँ और सबन्धों के सन्दर्भ में प्रत्येक सदस्य, अपनी पृष्ठभूमि, मूल्यों और प्रत्याशाओं को ध्यान में रखते हुए, अपने अनुभव को समर्थात्मक माने और जो उसके व्यक्तिगत मूल्य (Worth) एवं महत्त्व की भावना का निर्माण करे और उसे बनाए रखे।

संगठन में विभिन्न स्तरों पर व्यक्तियों के कौशल, संसाधनों और अभिप्रेरणा को बढ़ाने के लिए लिकर्ट ने 'अन्तःक्रिया–प्रभाव प्रणाली' का सुझाव देते हैं। यह प्रणाली समन्वय, संचार, निर्णय–निर्माण, निर्देशन आदि संगठनात्मक और प्रबन्धात्मक प्रक्रियाओं के एकीकरण में सहायक होती है । इन पारस्परिक रूप से निर्भर प्रक्रियाओं की प्रभावकारिता इस अन्तःक्रिया प्रभाव प्रणाली (Interaction-Influence System) की क्षमता पर निर्भर करती है । लिकर्ट के मत में जो संगठन एक आदर्श अन्तःक्रिया–प्रभाव प्रणाली के आधार पर चलते हैं वे निम्न विशेषताएँ प्रकट करते हैं – 1 प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तिगत मूल्यों, आवश्यकताओं और लक्ष्यों को अपने साथी कार्मिक समूहों और समग्र संगठन में पाएगा। 2 संगठन का प्रत्येक सदस्य संगठन के उद्देश्यों और कार्य–समूह के लक्ष्यों के साथ पहचाना जाएगा और अपनी आवश्यकताओं और व्यक्तिगत लक्ष्यों की प्राप्ति के सर्वोत्तम तरीके के रूप में उनको प्राप्त करना चाहेगा। 3 उच्च निष्पादन लक्ष्यों का दबाव, दक्ष विधियाँ और कौशल विकास सदस्यों में से ही आएँगे। वे चिन्ताएँ जो परम्परागत संगठनों में पदसोपानात्मक दबावों से जुड़ी है, उनकी अनुपस्थिति द्वारा सुप्रकट होगी। 4 कार्य–समूह के भीतर तथा उनके बीच की प्रमाणिक और संवेदनशील संचार प्रक्रियाएँ संगठन के सभी बिन्दुओं पर व्यक्तिगत और समूह निर्णयों व क्रियाओं को तार्किक आधार प्रदान करने के लिए सहज और सही सूचनाओं के प्रवाह को सुनिश्चित करेगी। 5 संगठन का प्रत्येक सदस्य संगठन के निर्णयों और क्रियाओं पर अपना प्रभाव डालने में सक्षम होगा। उसके प्रभाव की मात्रा उसके विचारों के महत्त्व तथा योगदान के अनुपात में होगा न कि औपचारिक संगठन में केवल उसकी पद–स्थिति पर। 6 सहयोगी अभिप्रेरणा, संचार और निर्णय प्रक्रियाएँ संगठन में किसी भी

स्तर पर काम कर रहे प्रत्येक सदस्य को अपना प्रभाव डालने, अपने विचारों, कौशल तथा संसाधनों का योगदान करने और समस्या समाधान तथा लक्ष्य प्राप्ति के लिए संगठन की कुल क्षमता को सुधारने में सक्षम होगा। लिकर्ट द्वारा प्रतिपादित लिंकिंग–पिन मॉडल परम्परागत पदसोपानों में पाई जाने वाली बाधाओं को दूर करने वाला और 'अन्तःक्रिया–प्रभाव प्रणाली' की वृद्धि में सहायक सिद्ध होने वाला माना जा सकता है।

मूल्यांकन (Evaluation)

रेन्सिस लिकर्ट के योगदानों के लिए प्रबन्ध जगत् सदैव उनका ऋणी रहेगा। उनके विचारों में जहाँ मौलिकता व नवीनता झलकती है वहीं उनकी आलोचनाएँ भी की जाती हैं। लिकर्ट के विचारों की कतिपय आलोचनाएँ इस प्रकार हैं :

- लिकर्ट के लिंकिंग–पिन मॉडल की यह कहकर आलोचना की जाती है कि यह परम्परागत पदसोपान संरचना में त्रिभुज खींचने के सिवाय कुछ नहीं करता। यह निर्णय प्रक्रिया में देरी करता है । लिकर्ट का यह मानना कि प्रणाली–4 को अपनाने वाले नेता/प्रबन्धक ही सदैव सफल होते हैं, गलत है। यह हर स्थिति में आवश्यक नहीं है। प्रबन्ध प्रणालियों के सम्बन्ध में कतिपय प्रश्न महत्त्वपूर्ण हैं। हम किस प्रकार प्रबन्ध प्रणाली–1 और 2 को प्रबन्ध प्रणाली–3 और 4 की तरह बढ़ा सकते हैं? वस्तुतः यह एक कठिन और जटिल प्रक्रिया है। संगठन में संकट आने स्वाभाविक है । परन्तु क्या इन संकटों का अर्थ यह मान लिया जाए कि संगठन में निष्पादन लक्ष्य, समूह निर्णयन तथा समर्थात्मक सम्बन्ध टूट गए हैं? वस्तुतः संघर्ष का प्रबन्ध (Managing Conflicts) एक जटिल प्रक्रिया है जिसकी अनेक पूर्वावेक्षाएँ हैं।
- आलोचकों के मत में लिकर्ट ने अपनी प्रबन्ध प्रणालियों के सम्बन्ध में परिस्थिति सम्बन्धी घटकों की अवहेलना की गई है। 1965 में पॉल हर्सी ने नाइजीरिया के सन्दर्भ में नेतृत्व शैली सम्बन्धी अध्ययन किया। इस अध्ययन द्वारा यह स्पष्ट किया गया कि नेता के व्यवहार की एक अकेली आदर्श अथवा मानकी शैली का समर्थन करने वाले प्रमाण अव्यवहारिक हैं। इसके परिणाम लिकर्ट के निष्कर्षों (Findings) के बिल्कुल विपरीत थे। इस राष्ट्र में कार्य–केन्द्रित पर्यवेक्षकों की ओर झुकाव था जो उच्च उत्पादन के लिए कड़ा (Close) पर्यवेक्षण करते थे। पॉल हर्सी, ब्लेनकार्ड व जॉनसन लिखते हैं : इस प्रकार एक अकेली मानकीय नेतृत्व शैली सांस्कृतिक विभिन्नताओं विशेषतः रीतियाँ (Customs), परम्पराएँ व शिक्षा का स्तर, जीवन स्तर या औद्योगिक अनुभव को अधिक ध्यान में नहीं रखती है। ये अनुयायियों में सांस्कृतिक भिन्नताओं और एक उपयुक्त नेतृत्व शैली के निर्धारण की परिस्थितियों (Situations) के उदाहरण इस प्रकार.....नेता के व्यवहार की एक अकेली आदर्शात्मक शैली बिल्कुल अव्यवहारिक लगती है। उपर्युक्त आलोचनाओं के बावजूद लिकर्ट अपने मौलिक विचारों के लिए सदैव याद किए जाएंगे।

अध्याय – 9

पीटर ड्रकर

(Peter Drucker)

परिचय :– पीटर ड्रकर, प्रबंधन गुरू, सलाहकार, प्रोफेसर, अर्थशास्त्री, लेखक और सामाजिक पारिस्थितिकीविद् ने अपने लेखन के माध्यम से सात दशकों में समझाया था कि कैसे मनुष्य व्यापार, सरकार और समाज के गैर–लाभकारी क्षेत्रों में संगठित हैं। उन्होंने आधुनिक प्रबंधन के आधार का निर्माण किया और उन्हें पिछली सदी के महानतम प्रबंधन विचारकों में से एक माना जाता है। उन्होंने प्रबंधन के लिए एक मानवतावादी दृष्टिकोण लिया, इस बात पर जोर दिया कि यह ऐसे लोग हैं जो संगठन बनाते हें और आधुनिक समाज में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका है। वह असामान्य जोश, व्यावहारिकता और तीक्ष्णता के लेखक हैं और समाज के संदर्भ में प्रबंधन मामलों से निपटते हैं। उन्होंने प्रबंधकों को एक नेतृत्व समूह के रूप में माना और महसूस किया कि यदि प्रमुख संस्थानों के प्रबंधक सामान्यतः अच्छे की जिम्मेदारी नहीं लेते हैं तो कोई और यह नही कर सकता है। उनके दृष्टिकोण को पिछले कई दशकों में उनके शानदार लेखन से उजागर किया जा सकता है और सरकारी प्रशासन के लिए उन्हें उपयोग किया जा सकता है। ड्रकर ने ज्यादातर व्यावसायिक क्षेत्र पर ध्यान केंद्रित किया और परिणामस्वरूप सार्वजनिक क्षेत्र से उनके विचारों को दूर रखा गया। एक प्रबंधन सिद्धांतकार के रूप में ड्रकर ने अमेरिका में गैर–लाभकारी संगठनों और संघीय सरकार के सुधारों पर लिखा। लेकिन लोक प्रशासन के विद्वानों ने अभी तक सरकार और सार्वजनिक प्रशासन, विशेष रूप से सार्वजनिक प्रबंधन के भविष्य के लिए उनके विचार के निहितार्थ का पता नहीं लगाया है।

लाइफ एंड वर्क्स :– पीटर फर्डिनेंड ड्रकर (1909–2005) का जन्म ऑस्ट्रिया के विएना मे हुआ था और उनकी स्कूलिंग डबलिंग जिम्नेजियम में हुई थी। 1927 में, वह हैम्बर्ग, जर्मनी एक ट्रेडिंग कंपनी में एक साल की अप्रेंटिसशिप के लिए गए। इसके साथ ही उन्होंने हैम्बर्ग यूनिवर्सिटी लॉ स्कूल में दाखिला लिया और कानून की डिग्री हासिल की। 1929 में, वह फैंकफर्ट चले गए जहां उन्होंने एक स्थानीय अखबार के वितिय पत्रकार के साथ–साथ एक अमेरिकी बैंक के लिए काम किया उन्होंने 1931 में फ्रैंकफर्ट विश्वविद्यालय से अंतर्राष्ट्रीय कानून और सार्वजनिक कानून में पीएचडी प्राप्त की। कुछ समय के लिए उनहोंने फ्रैंकफर्ट विश्वविद्यालय में इतिहास और अंतर्राष्ट्रीय कानून पढ़ाया। 1933 में, नाजी शासन के दौरान, वह लंदन चले गए जहां उन्होंने एक बीमा कंपनी के लिए प्रतिभूति विश्लेषक और एक बैंक के लिए एक अर्थशास्त्री के रूप में काम किया। उन्होंने ब्रिटिश समाचार पत्रों के लिए अमेरिकी संवाददाता के रूप में भी काम किया। वह ऑस्ट्रिया के जोसेफ शम्पेटर और ब्रिटेन के जॉन केन्स जैसे अर्थशासत्रियों से प्रभावित थे। संयुक्त राज्य अमेरिका में ड्रकर ने अपने कैरियर की शुरूआत मुख्य रूप से हार्पर और वाशिंगटन पोस्ट के स्वतंत्र पत्रकार के रूप में की। उन्होंने न्यूयॉर्क के ब्रोंक्सविले में सारा लॉरेंस कॉलेज और बाद में वर्मोट के बेनिंगटन कॉलेज (1942–49) में अर्थशास्त्र पढ़ाया। वह न्यूयॉर्क विश्वविद्यालय में प्रबंधन के प्रोफेसर (1950–71) और 1971 से कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में क्लेयरमोंट ग्रेजुएट स्कूल में सामाजिक विज्ञान और प्रबंधन के क्लार्क प्रोफेसर रहे। स्कूल में उन्होंने देश का पहला कार्यकारी एमबीए प्रोग्राम विकसित किया। उनके सम्मान में, 1987 में यूनिवर्सिटी मैनेजमेंट स्कूल को पीटर एफ. ड्रकर ग्रेजुएट स्कूल ऑफ मैनेजमेंट कर दिया गया। उन्होंने 2002 में स्कूल में अपनी अंतिम कक्षा ली। उन्हे व्यापार सलाहकार के रूप में माना जाता था, 1943 से जनरल मोटर्स, जनरल इलेक्ट्रिक, Citicorp, Coca-cola, Intel और IBM जैसे प्रमुख निगमों के साथ और अमेरिका, कनाडा, जापान और अन्य देशों में कई सरकारी और गैर–सरकारी संगठनों मे कार्य किया। वह अल्फ्रेड स्लोन

(जनरल मोटर्स), जैक वेल्च (जनरल इलेक्ट्रिक), एंड्रयू ग्रोव (इंटेल), एगलाफली (प्रॉक्टर एंड गैंबल), शॉइचिरा टोयोदा (टोयोटा मोटर्स) आदि के सलाहकार थे। उन्होंने कई गैर–लाभकारी मूल और सामाजिक क्षेत्र के साथ (विश्वविद्यालयों और अस्पतालों सहित) काम किया। एक पॉलिमथ और विपुल लेखक, ड्रकर ने 39 प्रभावशाली पुस्तकें प्रकाशित की और प्रतिष्ठित व्यावसायिक पत्रिकाओं जैसे हार्वर्ड बिजनेस रिव्यू, द इकोनॉमिस्ट, हार्पर्स और द अटलांटिक मंथली में कई लेखों का योगदान दिया। उन्होंने वाल स्ट्रीट जर्नल में दो दशक तक एक नियमित कालम लिखा। उनकी किताबों में द कॉन्सेप्ट ऑफ दी कॉरपोरेशन (1946), द प्रैक्टिस ऑफ मैनेजमेंट (1954), द इफेक्टिव एगजीक्यूटिव (1966), मैनेजमेंट – टास्क, रेस्पांसिबिलिटी, प्रैक्टिस (1974), द डिसिप्लीन ऑफ इनोवेशन (1985), मैनेजिंग फोर द फयूचर (1992), 21वीं सदी (1999) के लिए प्रबंधन चुनौती। अपने लेखन में उन्होंने अर्थशास्त्र और प्रबंधन को मानविकी के व्यापक संदर्भ में माना। उनकी कुछ पुस्तकों का 30 से अधिक भाषाओं में अनुवाद किया गया। अतः विषय सोच, अकादमिक शब्दजाल से बचना और फुटनोटस की विशिष्ट अनुपस्थिति उनके लेखन की विशेषता है। उन्होंने उपन्यास भी लिखे, पेटिंग पर एक किताब के सह–लेखक, प्रबंधन पर शैक्षिक फिल्में और प्रबंधन पर ऑन लाइन पाठ्यक्रम के अलावा एक व्यक्तिगत संस्मरण एडवेंचर्स ऑफ ए बिसटंडर उनकी किताबें बेस्टसेलर है और कुछ को लाखों प्रतियां बेचकर दर्जनों संस्करण मिले है। उन्होंने सेवा क्षेत्र के लिए भी समय समर्पित किया और गैर–लाभ प्रबंधन के लिए न्यूयॉर्क स्थित पीटर एफ ड्रकर फाउंडेशन की स्थापना की, जिसे 2003 से लीडर टू लीडर इंस्टीट्यूट के रूप में जाना जाता है।

ड्रकर को अमेरिका के सर्वोच्च नागरिक सम्मान और जापान और ऑस्ट्रिया के शासन से आदेश, न्यूयॉर्क यूनिवर्सिटी के प्रेसिडेंशियल प्रशस्ति पत्र (1969), सातवें मैकिन्से पुरस्कार (2005) HBR में उनके लेख के लिए ''व्हाट मेक्स एन इफेक्टिव एग्जूक्यूटिव'' आदि सम्मान प्राप्त हुए।

ड्रकर ने निजीकरण, विकेंद्रीकरण, जीवन भर सीखने के लिए आवश्यक सूचना समाज का उदय, ज्ञान कार्यकर्ताओं की भूमिका इत्यादि का अनुमान लगाया, सात दशकों से प्रबंधन पर उनके लेखन ने इंसानों के बीच संबंधों पर ध्यान केंद्रित किया और संगठनो को सबक प्रदान किया। लोगों का सर्वश्रेष्ठ बाहर लाएं और कैसे कार्यकर्ता बड़े संस्थानों के आसपास आयोजित आधुनिक समाज में एक समझदार समुदाय और गरिमा पा सकते हैं। उनका ध्यान संगठन पर था और शीर्ष प्रबंधन का काम। उन्होंने प्रबंधन को एक उदार कला माना और इतिहास, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, संस्कृति और धर्म से अंतर–अनुशासनात्मक पाठों के साथ अपने प्रबंधन को प्रभावित किया। प्रबंधन के एक व्यावहारिक व्यक्ति के रूप में, उनका प्रभाव दुनिया भर में था।

Generic Management **(सामान्य प्रबंधन) :** ड्रकर का मानना था कि ''प्रबंधन'' शब्द सामान्य है और व्यवसाय या किसी अन्य पेशे से संबंधित नहीं है। यह प्रत्येक मानव प्रयास से संबंधित है जो विविध ज्ञान और कौशल के एक संगठन के लोगो को एक साथ लाता है। प्रबंधन संगठन का हिस्सा है – सार्वजनिक या निजी के बीच कोई अंतर नहीं है। संगठनों और प्रबंधन के साथ चिंता और इसका अध्ययन बड़े संगठनों–व्यापार, सरकारी, सिविल सेवाओं, सेना आदि के उद्भव के साथ शुरू हुआ। उनके लिए प्रबंधन को व्यवसाय के साथ जोडना हाल का कार्य है।'' FW टेलर और चेस्टर बरनार्ड जैसे विचारकों ने माना कि व्यवसाय प्रबंधन सामान्य प्रबंधन की एक उप–प्रजाति है और मूल रूप से किसी भी अन्य संगठन के प्रबंधन से अलग नहीं है। उन्होंने महसूस किया कि 'प्रबंधक' शब्द का उद्भव व्यवसाय में नहीं हुआ बल्कि शहरी प्रशासन में हुआ। उनका कहना है कि प्रबंधन सिद्धांतो का पहला जागरूक और व्यवस्थित अनुप्रयोग व्यवसाय में नहीं था। लेकिन 1901 में एलिहु रूट, थियोडोर रूजवेल्ट के युद्ध सचिव द्वारा अमेरिकी सेना में, पहला प्रबंधन विभाग स्थापित किया गया था। ड्रकर का कहना है कि सार्वजनिक क्षेत्र में प्रबंधन को लोक प्रशासन के रूप में नामांकित किया गया और अपने स्वयं के विश्वविद्यालय विभागों, शब्दावली और अपने कैरियर की सीढ़ी के साथ एक अलग अनुशासन के रूप में घोषित किया गया। उसी प्रकार अस्पतालों के प्रबंधन को अस्पताल प्रशासन नाम दिया गया था। एक ही समय में, संयुक्त राज्य अमेरिका में कई 'बिजनेस स्कूलों'

को प्रबंधन स्कूलों के रूप में फिर से नामित किया गया था और वे गैर–लाभकारी संगठनों और सरकार को कार्यक्रम पेश करने लगे उन्होंने कहां कि इन घटनाओं के बावजूद यह महसूस किया जाता है कि प्रबंधन व्यवसाय प्रबंधन है और अभी भी कायम है और यह दावा करता है कि प्रबंधन व्यवसाय प्रबंधन नहीं है। ड्रकर ने विभिन्न संगठनो के प्रबंधन की मिशन, रणनीति और संरचनाओ में अंतर देखा हालांकि यह मतभेद सिद्धांत के बजाय मुख्य रूप से आवेदन का है।

वहां कार्यो और चुनौतियों में कोई अंतर नहीं है। सभी संगठनों का 90 प्रतिशत एक सामान है। ड्रकर के अनुसार, प्रबंधन गैर–लाभकारी संगठनों को सामाजिक सेवा जिम्मेदारियों का विस्तार करने के लिए फैला रहा है। दूसरे, गैर–कॉर्पोरेट संगठनों और सार्वजनिक सेवा में शामिल होने वाले कॉर्पोरेट अधिकारियों के लिए ज्ञान और कौशल का रिसना। यह वुडरो विल्सन के दावे के अनुरूप है कि प्रशासन को व्यवसायिक तर्ज पर चलाया जाना चाहिए। ''ड्रकर के विश्वास की अन्य धारणाएं प्रबंधन सामान्य है, जीवन की गुणवत्ता में सुधार हेतू, प्रबंधन अनुभव के प्रसार के लिए दबाव, सरकार के लिए ज्ञान और गैर–लाभकारी संगठनों, दूसरे विश्वयुद्व के बाद नव स्वतंत्र देशो के लिए उनकी अर्थव्यवस्था का प्रबंधन आदि थी। ड्रकर ने विकसित देशों में 21 वीं सदी में गैर–लाभकारी सामाजिक क्षेत्र के विकास की भविष्यवाणी की, और वह क्षेत्र जहां प्रबंधन की सबसे अधिक आवश्यकता है और जहां व्यवस्थित, राजसी, और सिद्धांत–आधारित प्रबंधन सबसे अच्छा परिणाम हो सकता है। उनका मानना था कि अन्य संस्थानों के बीच सरकार को इस तरह के ज्ञान के आवेदन से इसकी प्रभावशीलता में वृद्धि होगी, लेकिन यह महत्वपूर्ण नहीं होगा। उनके विचार में निर्णायक शक्ति, सरकारी जिम्मेदारी की सीमाओं की मान्यता होगी। ड्रकर प्रबंधन को पेशे के रूप में देखने वाला पहला व्यक्ति था संगठनों, कार्यो और लोगों के लिए सैद्धांतिक और व्यवहारिक ज्ञान का एक निकाय। उनके लिए प्रबंधन एक कार्य, एक अनुशासन, किया जाने वाला कार्य और प्रबंधक पेशेवर है जो इस अनुशासन का अभ्यास करते है, कार्य करते है और इन कार्यो का निर्वहन करते है। ड्रकर प्रबंधन के लिए सार्वजनिक और कॉर्पोरेट–शिक्षा और प्रशिक्षण के माध्यम से सामान्य दृष्टिकोण के माध्यम से हल्तांतरणीय सिद्धांतों, प्रथाओ और कौशल का एक भंडार है – अर्थात्, सार्वजनिक क्षेत्र के लिए व्यवसाय प्रशासन के निर्देशों को अपनाना।

ड्रकर ने सही संगठन और उसके सिद्धांतों जैसे पदानुक्रम और आदेश की एकता की आवश्यकता पर जोर दिया। वह 'पदानुक्रम के अंत की बात को बेमतलब बकवास कहते हैं। ड्रकर संगठन के अन्य सिद्धांतों, पारदर्शिता, अधिकार जिम्मेदारी के साथ, एक मास्टर आदि के बारे मे बात करते है। ड्रकर क्या कहता है कि इन सिद्धांतों को हमें यह नहीं बताना चाहिए कि क्या करना है, बल्कि ये हमें बताएं कि क्या नहीं करना है। वे हमें नहीं बताते कि क्या काम होगा। वे हमें बताते हैं कि क्या काम नहीं होगा। वे हमें बताते है कि काम करने की संभावना क्या है। ये सिद्धांत उन लोगों से बहुत अलग नहीं है जो एक वास्तुकार के काम को सूचित करते हैः वे उसे नहीं बताते कि किस तरह की इमारत का निर्माण करना है। वे उसे बताते हैं कि संयम क्या हैं और यह बहुत जरूरी है जो संगठनों के विभिन्न सिद्धांतों को पूरा करता है।

Management in Government – A Critique (सरकार प्रबंधन : एक आलोचना) :

ड्रकर में ज्यादातर कॉर्पोरेट प्रशासन पर लिखा है और बहुत कम सीधे सरकार और सार्वजनिक प्रशासन पर। वह सरकार में प्रशासन के गंभीर आलोचक थे। पीटर ड्रकर का अवलोकन मुख्य रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका पर केंद्रित है; हालांकि उनके पास सामान्य आवेदन है। ड्रकर ने सरकारी प्रशासन को मोटा, पिलपिला, विस्तारक और अनुत्पादक कहा। यह निहित स्वार्थों ओर दबाव समूहों के जाल में उलझा हुआ है। यह असंतुष्ट, उदासीन और असहनीय है। यह किसी भी गतिविधियों को नहीं छोड़ सकता, भले ही वे आपदाएं हों। यह बहुत बीमार है और इलाज की सख्त जरूरत है। सत्ता में अपनी इच्छा, अपनी औचित्य, अपनी संकीर्ण दृष्टि के बजाय राष्ट्रीय नीति और राष्ट्रीय सरकार द्वारा संचालित, स्वयं समाप्त हो जाते है। जैसा कि राजनेता कार्यक्रमों पर पर्याप्त ध्यान नहीं

दे सकते हैं, नौकरशाहों को उनके अपने उपकरणों पर छोड़ दिया जाता है। लेकिन उन्हें राजनीतिक प्रक्रियाओं से बचाया जाता है और प्रदर्शन की मांग भी की जाती है, यहां तक कि कांग्रेस को भी उनका सुझाव है कि प्रत्येक अधिनियम, प्रत्येक एजेंसी और शासन के हर कार्यक्रम की कल्पना एक निश्चित समयावधि के लिए की जानी चाहिए और इसे आवश्यकता के अध्ययन के आधार पर स्वचलित रूप से छोड़ दिया जाना चाहिए। प्रभावी प्रबंधन में एक प्रमुख तत्व संगठन की योग्यता है कि वह कल के कार्यो से खुद को मुक्त कर सके और नए और अधिक उत्पादक लोगों के लिए और भविष्य के लिए संसाधनों को मुक्त कर सके। लेकिन ड्रकर का कहना है कि कुछ करने से रोकने में असमर्थता के कारण सरकार सबसे खराब अपराधी है, जिसे यह नहीं करना चाहिए। उनकी सबसे बड़ी नाराजगी यह है कि सरकार ने प्रदर्शन नहीं किया उन्होनें तर्क दिया कि सरकार एक कमजोर प्रबंधक है और प्रक्रियाओं से चिंतित है और प्रक्रिया में नौकरशाही बन जाती है। उनका कहना है कि सरकार कोई कर्त्ता नहीं, बल्कि निर्णय लेने वाली है और नाटकीय मुद्दों पर अपनी ऊर्जा केन्द्रित करता है।

सार्वजनिक अभिकरणों का खराब प्रदर्शन :– ड्रकर सार्वजनिक एजेंसियो के खराब प्रदर्शन के कडे आलोचक थें। उन्होंने छह विशेषताओं की पहचान की, जिन्हें उन्होंने 'पाप' कहा जो खराब प्रदर्शन में योगदान करते है। वे हैः ''सबसे पहले बीमार लोगो के लिए सबसे अच्छी चिकित्सा देखभाल जैसे बुलंद उद्देश्य हैं। ऐसे उद्देश्य अस्पष्ट हैं, न किं संचालन योग्य। उनका सुझाव हैं कि उद्देश्य विशिष्ट, औसत दर्जे का और प्राप्य होना चाहिए और इसे कार्य और प्रदर्शन में परिवर्तित किया जा सकता है। दूसरा, किसी को प्राथमिकता दिए बिना एक ही समय में कई काम करने का प्रयास करना। तीसरा, भाग्य सुंदर है' में विश्वास परन्तु ड्रकर का विश्वास है कि अत्यधिक स्टाफिंग तथा परिणाम की तुलना में प्रशासन पर अधिक बल देना खराब प्रदर्शन के रास्ते हैं। चौथा, काम पर 'हंठधर्मिता' तथा प्रयोग और नवाचार करने के लिए अनिच्छा। पांचवा, 'अनुभव' से सीखने में विफलता, और अंत में, अमरता में विश्वास और नीतियों, कार्यक्रमों को छोड़ने और जारी रखने में असमर्थता और संस्थानों का उनकी आवश्यकता गायब हो जाने पर भी चलते रहना।

ड्रकर स्पष्ट थे कि इन कारको से अगर बचा जाए, तो सर्वोत्तम परिणामों की गारंटी और प्रदर्शन में योगदान नहीं दे सकते है, लेकिन उनसे बचना प्रदर्शन और परिणामों के लिए एक शर्त है, लेकिन ड्रकर का मानना था कि ''अधिकांश प्रशासक'', इनमें से अधिकांश 'पाप' हर समय करते हैं। ड्रकर, नाजीवाद और काल्पनिकता से प्रभावित, संदेहवादी हो गए और सरकार की प्रभावशीलता और प्रभाव पर संदेह करते है ''वे पश्चिमी नौकरशाही समाज के आलोचक थे। सरकार के वाद–विवाद में विश्वास करते थे और प्रबंधकीयवाद के साथ उनका गहरा लगाव था। उनका दृढ़ता से मानना था कि कॉपोरेट अधिकारी सर्वश्रेष्ठ योग्यता प्राप्त है और यहां तक कि प्रशासन को संचालित करने के लिए सबसे अधिक सक्षम हैं।

सरकार की कमियां :– ड्रकर कहते हैं कि सरकार को विकेन्द्रीयकरण और विनौकरशाही की आवश्यकता है इसका कारण यह है क्योकि कोई व्यक्ति या समूह जटिल सरकारी प्रकार्य तथा अर्थव्यवस्था के प्रभावी प्रबंधन के लिए पर्याप्त जानकारी नही है। उनका मानना था कि अप्रभावी शासन में परिणाम बहुत कम हो जाएगा। दुर्भाग्य से सीमित क्षमता के बावजूद, सरकारें हमेशा अधिक जिम्मेदारियों को मानती हैं, क्योंकि वे प्रभावी रूप से ऐसी अत्यधिक जिम्मेदारियों से सरकार को वंचित कर सकती हैं जैसे प्राथमिकताओं की रणनीतियों, लक्ष्यों, समय सारिणी, माप मानकों आदि को निर्धारित करने की क्षमता। वे आलोचना करते है कि राष्ट्रीय सरकारें किसी भी संरचना और गतिविधि को छोड़ने के लिए अनिच्छुक हैं क्योंकि वे एजेंसियों और कार्यक्रमों के आसपास मजबूत निर्वाचन क्षेत्रों को नष्ट कर देती हैं। ''ड्रकर के अनुसार राष्ट्रीय शासन की प्रमुख कमियां, प्रभावी ढंग से स्थूल अर्थव्यवस्थाओं का प्रबंधन करने की प्रवृत्ति है। उनके द्वारा पहचान करने वाली अन्य कमियों में क्रोनिक कॉस्ट ओवररन, एजेंसियों का प्रसार, प्रोग्राम और पेपर वर्क, इंटर–एजेंसी प्रतिद्वंद्विता, नीति–निर्माण में विखंडन, नितियों का पृथक्करण, निष्पादन, नौकरशाही जड़ता से दिशा, परिणामों पर नियमों पर ध्यान केन्द्रण, खराब प्रबंधन, नवाचार पर यथास्थिति और वादों

को पूरा करने में असमर्थता। ड्रकर ने महसूस किया कि राष्ट्रीय सरकारों को रक्षा, न्याय, आंतरिक व्यवस्था आदि करना चाहिए। राष्ट्रीय सरकार को सीमित कार्य करने चाहिए लेकिन अन्यों को विनियमित करना चाहिए। उनका दृढ़ता से मानना था कि परिवहन कचरा संग्रहण और अग्नि सुरक्षा जैसे कार्य निजी हाथों में होने चाहिए और उन्हें अनुबंधित किया जाना चाहिए। ड्रकर ने प्रशासन को प्रभावी बनाने के लिए व्यापक विकेन्द्रीकरण और विनौकरशाही से जुड़े एक दृष्टिकोण को उजागर किया। जैसा कि Gazell ने उल्लेख किया है कि लोक प्रशासन के लिए उनके दृष्टिकोण का एक निहितार्थ संघीय स्तर पर कम होना है। राज्य और स्थानीय स्तरों पर प्रमुखता ओर तीसरे और चौथे क्षेत्रों के लिए इनके विस्तार से संघीय सरकार को व्यापक लक्ष्यों और नीतियों को तैयार करना चाहिए गैर–सरकारी संगठनों को उनके निष्पादन को सौंपते हुए। ड्रकर अनुसार के लिए शासन की प्रभावशीलता में सुधार हेतू अधिनायकवाद से बचना जरूरी है। ड्रकर का मानना था कि प्रबंधक बनाए जाते है और पैदा नहीं होते है। यह अधिकारियों के शिक्षा और प्रशिक्षण से जुड़े महत्व को रेखांकित करता है। नैतिकता के बारे में ड्रकर का कहना है कि कोई व्यावसायिक नैतिकता नहीं होनी चाहिए, कोई आचरण नहीं, कोई नैतिक कोड नहीं होना चाहिए आदि और वांछित है कि केवल सार्वभौमिक नैतिकता होनी चाहिए, ड्रकर ने तर्क दिया कि शासन को विकेंद्रीकृत और विवादास्पद बनाना होगा क्योंकि यह सार्वजनिक नियम है।

पुनः – निर्माण सरकार (Restructuring Government) :- सरकार मे 'गैर–परिणाम' की विशेषता है और इसका कारण नौकरशाही द्वारा उसके निवारण और निष्प्रभावी नियमों का विरोध है जो प्रदर्शन को रोकते हैं। ड्रकर ने पाया कि सरकार में समर्पित लोगों के मूल दृष्टिकोण गलत हैं और इसलिए खराब–प्रदर्शन या खराब परिणाम हैं। उन्होंने ध्यान दिया कि यहां और ''कहीं भी'' पैच–एंड–स्पॉट वेल्ड करने का प्रयास कभी भी परिणाम नहीं दे सकता है और इसके लिए सरकार और उनके द्वारा प्रबंधित तरीके में 'आमूल–चूल परिवर्तन' की आवश्यकता है। ड्रकर का सुझाव है कि निरंतर सुधार की अवधारणा को सरकार के कामकाज में बनाया जाना चाहिए और यह केवल स्थिरता में योगदान देता है। दूसरा पहलू बैंचमार्किंग है – एक अवधारणा जो सभी दूसरों के साथ प्रदर्शन की तुलना करती है और सबसे अच्छा मानक बनाती है।'' ड्रकर निरंतर सुधार और बैंचमार्किंग का पक्षधर है जो सरकार में अनुपस्थित है। उन्हें नीतियों और प्रथाओं में आमूलचूल परिवर्तन की आवश्यकता है जो नौकरशाही और यूनियनों में है। इसके लिए यह भी आवश्यक है कि सार्वजनिक संगठन प्रदर्शन, गुणवत्ता और लागत के उद्देश्यों को परिभाषित करें। ड्रकर ने खराब–प्रदर्शन के लिए बजटीय कटौती जैसे नकारात्मक प्रोत्साहन या दंड का प्रस्ताव रखा है। बेंचमार्क से नीचे प्रदर्शन करने वाले व्यक्तिगत अधिकारियों को वेतन के मामले में दंडित किया जा सकता हैं। संगठनों को अपने ढांचे को बदलने की जरूरत है अगर उनके 'आकार' में बदलाव हो, सभी संगठन, सरकार या अन्य जो पुराने हैं और बढ़ते हुए पुनर्गठन की आवश्यकता है क्योंकि वे नीतियों और व्यवहार के नियमों को रेखांकित करते हैं। जब तक उनका पुनर्गठन नहीं किया जाता, वे अप्राप्य, असहनीय और बेकाबू हो जाते है।'' वह अपने प्रस्तावों के समर्थन में अमेरिकी लोक प्रशासन का उदाहरण देता है। वह कहते है कि अमेरिकी सरकार ने संरचनाओं, नीतियों और इसके लिए डिजाइन किए गए नियमों को आगे बढ़ाया है। संस्थागत परिणाम प्राप्त करने के लिए प्रबंधन मौजूद है, इसे अभीष्ट परिणामों से शुरू करना है और इन परिणामों को प्राप्त करने के लिए संस्थ के संसाधनों को व्यवस्थित करना है। यह संस्था बनाने के लिए अंग है, चाहे व्यवसाय, चर्च, विश्वविद्यालय, अस्पताल या एक पस्त महिला आश्रय, इसके बाहर परिणाम के लिए सक्षम हैं। ड्रकर का सुझााव है कि किसी विशेष समय पर शुरू किए गए कार्यक्रम और गतिविधियां बाद में उत्पादक होने की संभावना नहीं हैं वे अनुत्पादक और यहां तक कि काउंटर उत्पादक हो सकते है। ड्रकर का सुझाव है कि इन संगठनों में सुधार के बजाय इन्हें समाप्त किया जाना चाहिए।

Rethinking and Abondonment पुनर्विचार और परित्याग :–

सरकार जब भी अधिकांश व्यापारिक संगठनों की समस्याओं का सामना करती है, तो वह मरहम पट्टी और डाउन–साइजिंग का सहारा लेती है। ड्रकर के अनुसार, पिछले पंद्रह वर्षो में (1995 से पहले) एक के बाद एक बड़ी अमेरिकी कम्पनी ने बारी–बारी से प्रत्याशा में कर्मचारियों की एक बड़ी संख्या को बंद कर दिया, लेकिन अधिकांश मामलों में बिना किसी परिणाम के। उनका कहना है कि डाउन–साइजिंग ने कुछ ऐसा किया कि सदियों से सर्जनों ने निदान से पहले विच्छेदन के खिलाफ चेतावनी दी है और परिणाम हमेशा एक 'मृत्यु' होती है। ड्रकर के लिए बेहतर दृष्टिकोण 'पुनर्विचार' है, जिसे जीई और कई अस्पतालों जैसे संगठनों ने अपनाया और सफलता हासिल की। 'पुनर्विचार' उन गतिविधियों की पहचान करता है जो उत्पादक है और उन्हें मजबूत, बढ़ावा और विस्तारित करने की आवश्यकता है, डाउनसाइजिंग और व्यय में कमी नहीं। एजेंसियों को नीतियों की समीक्षा करनी चाहिए। कार्यक्रमों गतिविधियों और मिशन के बारे में पुनर्विचार करना चाहिए और प्रश्न कि यह सही मिशन था। क्या यह अभी भी जारी रखने लायक है? क्या मिशन अब व्यवहार्य है? आदि इस तरह के अभ्यास सरकार, व्यापार और यहां तक कि धार्मिक संगठनों द्वारा किए जाते है। ड्रकर बताते है कि हम अब कृषि विभाग की स्थापना नहीं करेगे क्योंकि किसान सिर्फ तीन प्रतिशत और उत्पादक किसान आधे से भी कम हैं क्योंकि ब्यूरो ऑफ कॉमर्स या लेबर इन सीमित कार्यों को कर सकते हैं। ड्रकर ने यह भी सुझाव दिया कि गतिविधियों के आधार पर संगठनात्मक ढ़ाँचे पर पुनर्विचार की आवश्यकता है। ड्रकर सचेत थे कि 'पुनर्विचार' आसान नहीं है, अक्सर असंभव है, और नौकरशाही, और विशेष हितों का विरोध होगा। लेकिन पुनर्विचार अपरिहार्य है और इसे प्रभावी रूप से निष्पादित करने के लिए किए जाने की आवश्यकता है। वह सुझाव देते हैं कि ''सरकार क्या कर सकती है'' का एक सिद्धांत है, लेकिन उन्होंने कहा कि राजनीतिक और प्रशासनिक सिद्धांत ने इस पहलू को संबोधित नहीं किया है। ड्रकर जागरूक था कि सरकार, उसके कार्यक्रमों, उसकी एजेंसियों, उसकी गतिविधियों के बारे में पुनर्विचार कोई नया सिद्धांत या उत्तर नहीं देगा। लेकिन यह प्रदर्शन और पुनर्गठन पर सही सवाल उठाने में मदद करने के लिए तथ्यात्मक जानकारी देता है। अपने अनुभव के आधार पर वे कहते हैं कि जहां 'पुनर्विचार' किया गया, इसने काफी सुधार दिए। एक और सवाल यह है कि जिन संगठनों ने एक समय में अच्छा काम किया है, वे बाद में काम नहीं कर सकते हैं और समय–समय पर पहले से चर्चा किए गए सवालों और 'कार्यक्षमता' के आधार पर समाप्त किए जाने की आवश्यकता है। ड्रकर अमेरिकी अनुभव से उदाहरण देते हुए कहते है कि ऐसे सभी मामलों मे सामान्य नुस्खे में सुधार करना है। ड्रकर का सुझाव है कि 'समाप्त', 'डाउन–साइजिंग' और विकल्प चुनने से पहले अलग–अलग तरीकों पर नियंत्रित प्रयोग करने की आवश्यकता है। वह कहते है कि पुनर्विचार उन गतिविधियों को समझने में मदद करता है जिन्हें मजबूत करने, समाप्त करने या पुनर्विचार करने की आवश्यकता होती है। उसके लिए पुनिर्विचार, लागत में कटौती के बारे में नही है। यह प्रदर्शन, गुणवत्ता, सेवा में वृद्धि करने में योगदान देता है।

Management by Objectives (उद्देश्यों द्वारा प्रबंधन) :– पहले उद्देश्य द्वारा प्रबंधन की अवधारणा ''द प्रैक्टिस ऑफ मैनेजमेंट'' पुस्तक में ड्रकर द्वारा बताई गई थी। यद्यपि जेम्स ओ, मैकिन्से, बरनार्ड, फेनोल, फोलेट आदि जैसे कई अग्रदूत थे जिन्होंने इस विषय पर लिखा था। उन्होंने MBO शब्द का उपयोग नहीं किया था, लेकिन कैथ ने अपने लेखन में इसके दर्शन को रेखांकित किया। यह ड्रकर था जिसने 1948–51 के दौरान इस शब्द को गढ़ा और इसके दर्शन में कई योगदान दिए। इस विचार ने व्यावसायिक संगठनों के साथ–2 सार्वजनिक प्रशासन दोनों में काफी रूचि उत्पन्न की। MBO संगठनात्मक लक्ष्यों, लक्ष्यों और मापों की सामूहिक सेटिंग को संदर्भित करता है।

पीटर ड्रकर ने हेरोल्ड स्मिडी के प्रबंधक पत्र की अवधारणा की प्रत्येक महीने के लिए लक्ष्यों, गतिविधियों और मानकों को शामिल करते हुए सामान्य इलेक्ट्रिकस में पेश किया और MBO के रूप में पिछले महीने के उद्देश्यों के खिलाफ परिणाम की रिपोर्ट की। उन्होंने तर्क दिया कि प्रबंधन द्वारा अप्रभाविता ओर गलत दिशा की विशेषता को MBO द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए। उन्होंने लिखा है कि एक प्रभावी प्रबंधन को सभी प्रबंधकों

की दृष्टि और प्रयासों को एक समान लक्ष्य की ओर निर्देशित करना होगा। यह सुनिश्चित करना होगा कि व्यक्तिगत प्रबंधक यह समझे कि उसके लिए क्या परिणाम मांगे गए है। यह सुनिश्चित करना है कि प्रत्येक से क्या अपेक्षा की जाएं। अपने अधीनस्थ प्रबंधकों के लिए प्रत्येक प्रबंधक को सहीं दिशा में अधिकतम प्रयासों के लिए प्रेरित करना चाहिए, अहंकार और प्रोत्साहित करते हुए कारीगरी के उच्च मानकों, यह उन्हें अपने आप में समाप्त होने के बजाय व्यावसायिक प्रदर्शन के अंत का साधन बनाना चाहिए। उन्होंने कहा कि उत्पादन प्रबंधक के लिए वरिष्ठ कार्यकारी से प्रत्येक प्रबंधक को स्पष्ट रूप से उद्देश्यों को पूरा करने की आवश्यकता है। MBO काम करने के लिए प्रबंधक को एक लक्ष्य के खिलाफ प्रदर्शन को मापना चाहिए। उन्होंने सुझाव दिया कि उददेश्यों को संगठन के कार्यो को प्रतिबिंबित करना चाहिए और संगठन के लक्ष्यों से व्युत्पन्न होना चाहिए। '' MBO आत्म–नियंत्रण द्वारा प्रबंधन के साथ वर्चस्व का प्रबंधन करता है। ड्रकर का कहना है कि प्रत्येक प्रबंधक को उद्देश्यों को विकसित और निर्धारित करना चाहिए। लेकिन उद्देश्यों का विकास प्रबंधक की जिम्मेदारी का एक हिस्सा है; प्रत्येक प्रबंधक को जिम्मेदार रूप से उच्च इकाई में उद्देश्यों के विकास में भाग लेना चाहिए जिसमें वह एक हिस्सा है। MBO का सबसे बड़ा लाभ यह है कि यह एक प्रबंधक के लिए अपने स्वयं के प्रदर्शन को नियंत्रित करना संभव बनाता है। आत्म–नियंत्रण का अर्थ है मजबूत प्रेरणा, सर्वश्रेष्ठ करने की इच्छा, उच्च प्रदर्शन लक्ष्य और व्यापक दृष्टि। ड्रकर के लिए, एमबीओ व्यक्तिगत शक्ति और जिम्मेदारी देता है और एक ही समय में, दृष्टि और प्रयास की सामान्य दिशा देता है, टीम वर्क स्थापित करता है और सामान्य धन के साथ व्यक्ति के लक्ष्यों का सामंजस्य करता है।

Knowledge based organization (ज्ञान–आधारित संगठन) :– ड्रकर ने भविष्यवाणी की थी कि जानकारी समाज में बड़े बदलाव लाएगी और ज्ञान श्रमिकों, नए पेशेवर प्रबंधकों और विशेषज्ञों के लिए उनका नाम, संगठनों में सबसे बड़े समूह का गठन करेगा। उन्होंने 1959 की शुरूआत में ज्ञान कार्यकर्ता की अवधारणा पेश की और उनके बाद के लेख ज्ञान कार्य, ज्ञान कार्यकर्ता और उनकी उत्पादकता पर प्रतिबिंबित करते है। उनका मानना है कि 21वीं शताब्दी संगठनों और प्रबंधन–व्यवसाय या गैर–व्यवसाय को ज्ञान श्रमिकों और उनकी उत्पादकता की विशेषता होगी। एक नया कार्यकर्ता ज्ञान पर आधारित होगा, शारीरिक श्रम या प्रबंधन पर नहीं। ड्रकर का मानना है कि उनके कारण व्यवसाय सफल होता है इसलिए, ज्ञान को उत्पन्न करने और उपयोग करने की क्षमता उनका सुझाव है कि ज्ञान कार्यकर्त्ता उत्पादकता 21वीं सदी की सबसे महत्वपूर्ण चुनौती है। वह कहते है कि यदि हम उन कार्यों के लिए ज्ञान लागू करते हैं जिन्हे हम पहले से जानते है कि यह कैसे करना है, तो यह उत्पादकता है और यदि हम ऐसे कार्यो के लिए ज्ञान लागू करते हैं जो नए है और अलग–2 है तो यह नवाचार है, आधुनिक संगठनों में प्रत्येक कार्यकारी एक ज्ञान कार्यकर्ता है और ऐसे योगदानों के लिए जिम्मेदार है जो संगठन को प्रदार्शन करने और परिणाम प्राप्त करने की क्षमता को प्रभावित करते है। ड्रकर छह कारकों की पहचान करता है जो ज्ञान कार्यकर्ता की उत्पादकता निर्धारित करते हैं। इनमें शामिल किए जाते हैं– प्रदर्शन जिम्मेदारी और स्वायत्तता, निरंतर नवाचार, निरंतर सीखने और उत्पादन की गुणवत्ता शामिल है। वह कहते है कि ज्ञान कार्यकर्ता को संपति की तुलना में लागत के रूप में देखा जाना चाहिए। ड्रकर बताते है कि ज्ञान कार्यकर्ताओं को अपने मूल कार्यों से परे कई गतिविधियों में शामिल होना पड़ता है जो उनके समय और ध्यान की मांग करते है उनकी उत्पादकता को प्रभावित करते है। वह अनुशंसा करता है कि ज्ञान कार्यकर्ताओ के अन्य कार्यो और गतिविधियों को कम से कम किया जाना चाहिए या उन्हें दूसरों को सौपंना चाहिए ताकि वे कार्यो पर अपने प्रयासों को केन्द्रित कर सके। वह जोर देकर कहते हे कि ज्ञान कार्यकत्ताओं को खुद का प्रबंधन करना सीखना चाहिए। यह उन्हें रचनात्मक बनाने में सक्षम है। उन्हें ज्ञान को रखने और आवश्यकतानुसार उपयोग करने की आवश्यकता है।

मूल्यांकन :– सरकार में प्रबंधन के क्षेत्र में ड्रकर के योगदान पर कई आलोचनाएं हैं। ''सबसे गंभीर आलोचना जोसैफ कोट्स ने की जो कहते हैं कि मैं बौद्धिक नेतृत्व के मामले में ड्रकर के बारे में नहीं सोचता वह आगे कहते

हैं कि'' क्या। ड्रकर व्यापार के भीतर पहले से ही चर्चा किए जा रहे विचारों को सुनने के लिए और पहले से ही स्पष्ट रूझानों के बारे में लिखने और अभिषेक करने वाले पहले व्यक्ति थे। यह पत्रकार की तरह महत्वपूर्ण कार्य है, लेकिन वह एक मौलिक विचारक नहीं हैं। ड्रकर के छात्र वॉरेन बेनिस जोसेफ कोट्स से सहमत हैं और कहते हैं कि पीटर का उपहार पत्रकारीता का है। वॉल स्ट्रीट जर्नल ने 1987 में उनके कई व्याख्यानों पर शोध किया और बताया कि ड्रकर कभी–कभी ढीला होता था। तथ्य और उनके पूर्वानुमान हमेशा सही नहीं थे। ड्रकर अक्सर 'सरकार और नौकरशाही का इस्तेमाल करते थे, जो एक व्यवसाय की तरह काम करने में विफल होने पर खुशियों का नकारात्मक उदाहरण' है। उनके अनुसार, ड्रकर ने व्यवसाय (संतरे) के परिप्रेक्ष्य से शासन (सेब) की तुलना करने का प्रयास किया और इसका कोई मतलब नहीं है क्योंकि मतभेद समानता को उजागर करते हैं। सार्वजनिक प्रशासन विफलता के लिए निर्धारित किया जाता है। हालांकि, वे इस बात से सहमत है कि सार्वजनिक प्रशासको को उद्देश्यों, मिशन–केन्द्रित प्रबंधन और ज्ञान कार्यकर्ता आदि के महत्व पर ड्रकर की सलाह को ध्यान में रखना चाहिए। ड्रकर द्वारा व्यक्त MBO की अवधारणा, विभिन्न आधारों पर कई द्वारा आलोचना की गई थी। सबसे पहले बावजूद ड्रकर का दावा है कि MBO का सार कर्मचारी सहयोग है और काम के उद्देश्यों को स्थापित करने में सहायता करता है। दूसरे, जैक्सन और मैथिस ने तर्क दिया कि MBO अभ्यास प्रदर्शन को अध्ययन के आधार पर मूल्यांकन और इनाम प्रक्रिया से जोड़ने में विफल रहा है। तीसरा MBO सिर्फ एक तकनीक है और इसकी कोई सैद्धांतिक नींव नहीं है। आखिरकार, MBO ने कभी भी अपनी प्रभावशीलता साबित नहीं की। इसको लागू करना मुश्किल है और अक्सर कम्पनियां अपने लक्ष्यों को पूरा करने के लिए रचनात्मकता को बढ़ावा देने के विरोध में अधिक जोर देती है। निजीकरण पर ड्रकर की स्थिति की असंतोषजनक के रूप में आलोचना की गई थी। उनका तर्क है कि निजीकरण या अधिक सटीक रूप से, सार्वजनिक सेवाओं से अनुबंधित करने से एक सक्षम उत्पादन होगा और सरकार कई निजीकरण विश्लेषकों द्वारा पहचाने जाने वाले असंख्य को नजरअंदाज कर देगी। आलोचकों का तर्क है कि ड्रकर सार्वजनिक युग के वास्तविक कार्यकाल और बनावट को समझने मे असमर्थ थे। ''हालांकि ड्रकर के लेखन ने सार्वजनिक प्रशासकों की मदद की, अच्छे प्रबंधन के लिए ड्रकर के निरूपण पर बहुत अधिक भरोसा करने के लिए, 'अद्वितिय संदर्भो के लिए प्रशासकों को अंधा कर देगा। लोक प्रशासन के विद्वानों ने ड्रकर की सरकारी प्रशासन की आलोचना और, प्रभावी सार्वजनिक प्रबंधन के लिए बाधाओं का उनका सरलीकरण किया जा सकता है। लेकिन सरकार के कामकाज और उसके प्रदर्शन की आलोचना को संक्षेप में अस्वीकार करना मुश्किल है। सार्वजनिक प्रशासन के अनुशासन में उनका योगदान मिशन अभिविन्यास, एमबीओ, निजीकरण, विकेंद्रीकरण, आदि जैसी अवधारणाओं के प्रचार में निहित है, और उनका सार्वजनिक प्रशासन सिद्धांत और दुनिया भर में अभ्यास में गहरा प्रभाव है। 2 आलोचनाओ के बावजूद, सार्वजनिक प्रशासन और प्रबंधन के अध्ययन और अभ्यास के लिए ड्रकर का योगदान पर्याप्त है। उन्होंने नेतृत्व के पहलुओं को उजागर किया, संगठनों में मिशन अभिविन्यास की आवश्यकता पर बल दिया, निर्णय लेने की प्रकृति का विश्लेषण किया, एमबीओ की अवधारणा की, ज्ञान कार्यकर्ता के आगमन का पूर्वानुमान लगाया, प्रबंधन को एक पेशे के रूप में देखा, गैर–लाभकारी क्षेत्र के उद्भव को मान्यता दी, और गैर–सरकारी और गैर–व्यावसायिक दायरे का विस्तार किया।

स्तर पर काम कर रहे प्रत्येक सदस्य को अपना प्रभाव डालने, अपने विचारों, कौशल तथा संसाधनों का योगदान करने और समस्या समाधान तथा लक्ष्य प्राप्ति के लिए संगठन की कुल क्षमता को सुधारने में सक्षम होगा। लिकर्ट द्वारा प्रतिपादित लिंकिंग–पिन मॉडल परम्परागत पदसोपानों में पाई जाने वाली बाधाओं को दूर करने वाला और 'अन्तःक्रिया–प्रभाव प्रणाली' की वृद्धि में सहायक सिद्ध होने वाला माना जा सकता है।

अध्याय – 10

कार्ल मार्क्स

(Karl Marx)

प्रशासकीय संगठन, जिसका नौकरशाही एक अंग है, केवल बीसवीं शताब्दी की प्रघटना नहीं है। हजारों साल पहले मिस्र और रोम में यह सुपरिष्कृत रूप में मौजूद थी। प्राचीनकाल में भारत और चीन में भी यह काफी विशिष्ट रूप में मौजूद थी। समकालीन समाज में इस संस्था ने विशेष आयाम हासिल कर ली है। कुछ लेखकों के लिए तो यही संस्था आधुनिक युग का प्रतीक बन गई है।

कार्यात्मक और दुष्प्रकार्यात्मक विचार : एक विचार और एक संरचनात्मक व्यवस्था के रूप में नौकरशाही को प्रशंसा और निन्दा दोनों का ही सामना करना पड़ रहा है। इसके पक्ष में भी तर्क दिए गए हैं और इस पर हमला भी बोला गया है। मोटे तौर पर कहा जाए तो इस संबंध में विचार की तीन प्रमुख धाराएं हैं। इनमें से एक धारा का प्रतिनिधित्व लेखकों का वह समूह करता है जिसकी अगुआई मैक्स वेबर करते हैं। इस लेखक समूह का मानना है कि आधुनिक समाज में नौकरशाही की अनिवार्य आवश्यकता, इस समाज के विकास और जटिल संरचना के कारण है।

एक दुसरा समूह है जिसकी अगुआई राबर्ट मर्टन और पीटर ब्लाऊ जैसे अमेरिकी विद्वान करते हैं। नौकरशाही को लेकर इस समूह का दृष्टिकोण सुधारवादी है। ये लोग स्वीकार करते हैं कि नौकरशाही की संस्था के साथ कुछ बुराइयां भी जुड़ी हैं। मसलन नौकरशाही मानवीय क्षमता को कम करके आंकती है। इसी तरह कार्य स्थल के वातावरण को वह अस्वस्थ करती है। लेकिन इस समूह का दृढ़ मत है कि अगर इस संस्था से इन दुष्क्रियात्मकताओं को हटा दिया जाए तो यह प्रकार्यात्मक साबित हो सकती है।

एक तीसरा समूह भी है और नौकरशाही के बारे में इसकी राय पहले के दोनों समूहों से भिन्न है। इस तीसरे समूह का नेतृत्व कार्ल मार्क्स करते हैं जो न केवल क्रांतिकारी हैं बल्कि समाजवादी और अर्थशास्त्री भी हैं। समाज विज्ञान के क्षेत्र में उनका योगदान अप्रतिम है। उन्होंने आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था की कार्य पद्धति को स्पष्ट किया जिसके तहत ही आधुनिक संगठन काम करते हैं। मार्क्स की विचारधारा आधुनिक संगठनों की कार्य प्रणाली के बारे में गहरी समझ विकसित करने में योगदान देती है। विचार और विश्वास का वह दर्शन जिसे हम मार्क्सवाद कहते हैं मार्क्स और एंगेल्स के लेखन पर ही आधारित है।

बाल हेनरिक मार्क्स का जन्म 5 मई सन् 1818 को जर्मनी के ट्रियर शहर में हुआ था। उन्होंने अपनी शिक्षा बर्लिन विश्वविद्यालय में ग्रहण की। यहीं वह हीगेल के दर्शन से परिचित हुए। मार्क्स विद्यार्थी जीवन में राजनीतिक रूप से विद्रोही छात्र थे। अप्रैल 1841 में उन्होंने जेना विश्वविद्यालय से डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। अपने शोध में मार्क्स ने डेमोक्रेटिस और एपीक्यूरस के प्राकृतिक दर्शनों के बीच अंतर का लेखण किया। 1848 में वह पेरिस चले गए और पेरिस क्रांति में भाग लिया। 1849 में उन्हें पेरिस से निष्कासित कर दिया गया। अगस्त 1849 में वे लंदन चले गए जहां वे अपनी मृत्यु 14 मार्च, 1883 तक लगातार रहे।

उन्होंने अनेक किताबें जैसे 'क्रिटीक आफ हीगेलस फिलॉसफी ऑफ राइट' (1844), 'द होली फैमिली' (1844), (फ्रेडरिक एंगेल्स के साथ), 'थीसिस ऑन फ्यूअरबाख' (1845), 'द जर्मनी आइडियोलॉजी' (एंगेल्स के साथ), 'द पावर्टी ऑफ फिलॉसफी' (1847), 'द कम्युनिस्ट मेनिफेस्टो' (1848), 'वेज, लेबर एण्ड कैपिटल' (1849), 'द क्लास

स्ट्रगल इन फ्रांस' (1850), 'द एट्टींथ ब्रुनेय ऑफ लुइस बोनापार्ट' (1850), 'ए कंट्रीब्यूशन टू द क्रिटीक ऑफ पालिटिकल इकोनामी' (1859) लिखीं। मार्क्स की सबसे महत्वपूर्ण कृति 'कैपिटल' का प्रथम खण्ड सन 1867 में छपा था। अपनी बीमारी के कारण मार्क्स इसे पूरा नहीं कर पाए थे। 'कैपिटल' के दूसरे और तीसरे खण्डों को एंगेल्स ने संशोधित किया जो कि क्रमशः 1885 और 1894 में छपे।

नौकरशाही शोषण के औजार के रूप में : मार्क्स के मुताबिक नौकरशाही शोषणपरक समाज व्यवस्था का अभिन्न अंग है। नौकरशाही के बारे में मार्क्स ने अपना दृष्टिकोण अपने निजी अनुभवों के आधार पर निश्चित किया। उन्हें यह अनुभव मोजेल जिले में पड़े अकाल के दौरान राज्य प्रशासन की अकुशलता के कारण हासिल हुआ। मार्क्स नौकरशाही की अवधारणा का स्रोत सत्ताधारी संस्थाओं और उनके अधीन सामाजिक समूहों के बीच मौजूद नौकरशाही रिश्तों को मानते हैं। शोषणकारी पूंजीवादी समाज व्यवस्था में नौकरशाही समाज में व्याप्त हो जाती है तथा शोषण को लगातार जारी रखने वाले तंत्र के रूप में काम करती है। मार्क्स का मानना था कि नौकरशाही के औजार को तोड़े बिना संस्थागत तौर पर राज्य को नहीं मिटाया जा सकता। मार्क्स का यह भी मानना था कि विभिन्न राजनीतिक संरचनाओं के मूल्यांकन का पैमाना इनकी राजनीतिक व्यवस्था के चरित्र का व्यावहारिक स्वरूप होता है। मार्क्स नौकरशाही को उसके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य और उसके द्वारा संपन्न कार्यों के आधार पर समझने की आवश्यकता पर बल देते हैं। उनके लिए नौकरशाही आधुनिक राज्य को समझने की कुंजी है। आमतौर पर यह माना जाता है कि मार्क्स के पूंजीवादी राज्य के समष्टि सिद्धांतों में नौकरशाही को ज्यादा महत्व नहीं दिया गया। साथ ही यह भी माना जाता है कि चूंकि नौकरशाही श्रम के विभाजन की राजनीतिक अभिव्यक्ति है, इसलिए उसे न केवल प्रकार्यात्मक आधार पर बल्कि संरचना के स्तर पर भी समझने की जरूरत है। मार्क्स का मानना है कि नौकरशाही के तहत मानव विषय छल योजन की वस्तुमात्र है। वह फ्युअरबाख की रूपांतरकारी आलोचना को इसके विवेचन हेतु काम में लाते हैं और साबित करते हैं कि अर्थशास्त्र के लिए 'फेटिशिज्म ऑफ कमोडिटीज' के जो मायने हैं, वही मायने नौकरशाही का राजनीति के लिए है।

ज्ञातव्य है कि मार्क्स ने नौकरशाही पर कभी भी उस तरह से नहीं लिखा जैसा कि मैक्स वेबर ने लिखा है। मगर नौकरशाही पर व्यापक तौर पर न लिखने के बावजूद मार्क्स ने आधुनिक समाज में इसके महत्व की अनदेखी नहीं की। संयोग से, 'डाई रेडनिशेजाई टुंग' अखबार के प्रधान संपादक का पद संभालने पर मार्क्स ने स्वतंत्र प्रेस और राज्य सेंसरशिप और जंगल से काटी जाने वाली लकड़ी की चोरी पर लेख लिखे। उन्होंने प्रेस सेंसरशिप के मामले में नौकरशाही के दमनात्मक चरित्र का उल्लेख किया। सेंसरशिप के बारे में उनका मानना था कि यह नौकरशाही का वह हथियार है जो राजनीति को एक विशिष्ट वर्ग के लिए सुरक्षित बनाए रखने का काम करता है। नौकरशाही के बारे में मार्क्स का चिंतन पहली बार उनकी पुस्तक 'क्रिटीक ऑफ हीगेल्स फिलॉसफी ऑफ राइट' में परिलक्षित हुआ। अपनी इस किताब में मार्क्स ने नौकरशाही को राजनीतिक अलगाव के संस्थागत अवतार के रूप में देखा। मार्क्स का विचार है कि आधुनिक राज्य व्युत्क्रमवादी चरित्र के होते हैं और इसलिए यहां हर चीज जो होती है, उससे भिन्न दिखती है। इस भिन्नता को नौकरशाही संस्थावादी स्वरूप प्रदान करती है। इन स्थितियों में नौकरशाही का अंत तभी हो सकता है जब राज्य सर्वहारा के हितों की प्रतिनिधि बन जाए।

हीगेल का सार्वभौमिकता का आग्रह : हीगेल समाज में तीन तरह के वर्ग पाते हैं–कृषक वर्ग, व्यापारी वर्ग और सार्वभौमिक वर्ग। इन सभी वर्गों में से हर एक वर्ग एक विशेष प्रकार की चेतना से ओतप्रोत होता है। यह चेतना क्रमशः रूढ़िवादी, व्यक्तिवादी और सार्वभौमिक चेतना है। हीगेल नागरिक समाज और राज्य में भेद इस तरह करते हैं कि नागरिक समाज जहां सामान्य हितों को व्यक्त करता है, राज्य विशिष्ट हितों का प्रतिनिधित्व करता है। नौकरशाही इन दोनों के बीच सम्पर्क सूत्र की भूमिका निभाती है। इसी को देखते हुए अविनेरी (Avineri) ने हीगेल के विचारों की विवेचना करते समय उन्हें आम और खास तथा नागरिक समाज और राज्य के बीच 'मध्यस्थता प्रतिमान' कहा है। हीगेल कहते हैं, ''सार्वभौमिक वर्ग (नौकरशाही) का काम समुदाय के सार्वभौमिक हितों का ध्यान

रखना है''। उनके अनुसार नौकरशाही एक ''सार्वभौमिक जागीर'' है जो ''राज्य के आम हितों और वैधानिकता को संभालती है।'' नौकरशाही के हित सार्वभौमिक इसलिए नहीं होते क्योंकि उनमें नकारात्मक सार्वभौमिकता की आकांक्षा होती है। इसकी वजह यह भी है कि सकारात्मक सार्वभौमिकता राज्य के रूप में उनके पास पहले से ही मौजूद रहती है। हीगेल कहते हैं कि सार्वभौमिक वर्ग को अपने ही उत्पाद से अलगाव के भाव से ग्रस्त व्यथित चेतना समझने की भूल नहीं करनी चाहिए। इसके विपरीत वह तो 'आम–संतुष्ट चेतना' है जो दुनिया को दुनिया समझती है और उसे वैसे ही स्वीकार – करती है।

नियामक तंत्र : हीगेल मानते हैं कि सार्वभौमिक दृष्टि और इच्छाशक्ति, नौकरशाहों में व्यक्तिगत स्तर पर नहीं अपितु स्वयं नौकरशाही के मूलभूत चरित्र में होती है। नौकरशाही संबंधों की वह व्यवस्था है जो पदसोपान और विशेषीकरण के साथ–साथ उस निश्चित पद से परिभाषित होती है जो पदेन व्यक्ति को समूह से अलग करती है। मध्यम वर्ग की अस्थिरता और उसकी स्वार्थ अभिमुखता, नौकरशाही की राह में बाधा नहीं बनती। नौकरशाही के प्रतिनिधि इसी मध्यम वर्ग से चुने जाते हैं और एक बार चुने जाने के बाद वे नौकरशाही व्यवस्था के अंश बन जाते हैं। नौकरशाह कई तरह के बाह्य और आंतरिक दबावों से गुजरते हैं जो उन्हें लोकहितों का ज्ञान कराते हैं तथा सार्वजनिक इच्छाओं के बारे में शिक्षित करते हैं। आंतरिक दबावों से आशय है नौकरशाही के वे लोकाचार जो आदत और कर्तव्य निर्वाह से प्राप्त प्रोत्साहनों से उद्‌भूत होते हैं। बाह्य नियंत्रण (दबाव) से आशय है – राजा द्वारा किया जाने वाला शीर्ष नियंत्रण और शिकायतों, निगमों के प्रतिवेदन पत्रों, स्वतंत्र प्रेस और लोगों की राय के जरिए नीचे से नियंत्रण इत्यादि। इसीलिए हीगेल ने नियामक व्यवस्था की ऐसी रूपरेखा सुझाई है जो नौकरशाहों पर अच्छा प्रभाव डालती है।

हीगेल की दृष्टि में नौकरशाही 'विचारों का मूर्त रूप' है। वह सोचते हैं कि नौकरशाही अपनी स्वायत्तता और स्वतंत्रता के गुणों के चलते स्वयं नागरिक समाज पर 'गति नियंत्रक' (इतांम) का काम करेगी और सुनिश्चित करेगी कि लोकनीति नागरिक समाज को परिलक्षित नहीं करे।

मार्क्स पर हीगेल का प्रभाव : हालांकि मार्क्स हीगेल की इस अवधारणा से सहमत थे कि तार्किक राज्य को समुदाय के सामान्य हितों का प्रतिनिधित्व करना चाहिए, वह हीगेल की इस मान्यता को बिल्कुल नहीं मानते थे कि नौकरशाही समुदाय के सामान्य हितों की रक्षा करती है। मार्क्स का मानना था कि समुदाय के हितों के प्रति राज्य संवेदनशील नहीं होता और इसी संदर्भ में नौकरशाही महत्वपूर्ण हो जाती है। यहां इस बात को ध्यान में रखने की जरूरत है कि हीगेल की सार्वभौमिक वर्ग की धारणा ने मार्क्स को शुरुआती तौर पर प्रभावित किया था। मार्क्स ने सर्वहारा शब्द का सृजन इसी सार्वभौमिक वर्ग के गुणों के परिप्रेक्ष्य में किया।

आरंभिक प्रतिपादन : 1843 में जब मार्क्स हीगेल के नौकरशाही से संबंधित सिद्धांत का आलोचनात्मक विश्लेषण कर रहे थे उन दिनों 'नौकरशाही' जैसे शब्द का गंभीर राजनीतिक लेखन में कोई विशेष महत्व नहीं था। इसलिए नौकरशाही का सामाजिक प्रवर्ग के रूप में विशिष्ट विश्लेषण का श्रेय मार्क्स को ही दिया जाना चाहिए। वैसे एक विशेष प्रकार के 'शासक वर्ग' के रूप में नौकरशाही का उल्लेख प्रथम बार 1808 में एक जर्मन पुस्तक में हुआ जिसके लेखक सी.जे. क्रांस थे। नौकरशाही से क्रांस का अभिप्राय उस शासक वर्ग से था जिसने प्रशा में शासन किया था। इस शब्द का पहले इस्तेमाल एक जर्मन पत्रिका ने शुरू किया। यह पत्रिका इस शब्द को 1789 के बाद फ्रांसीसी क्रांति के संदर्भ में इस्तेमाल करती थी। 1819 में इस शब्द को ब्रोकांस 'एनसाइक्लोपीडिया' ने मान्यता दी तथा जर्मन विधिवेत्ता जे.जे. कोरेस ने इसे 1820 के दशक में प्रचलित बनाया। उस समय युवा मार्क्स इस लेखन से परिचित थे।

1843 वह साल था जब पहली बार मार्क्स ने नौकरशाही पर खुला हमला किया। उन्होंने सरकारी कर्मचारियों की 'अफसरी' के अहंकार की शिकायत की तथा नौकरशाही शब्द की वास्तविक प्रकृति तथा सरकारी

दफ्तरों द्वारा पेश की जाने वाली तस्वीर में मौजूद अन्तर्विरोधों को लेकर खिन्नता प्रकट की। दरअसल मार्क्स की असली रुचि इस तथ्य का विवेचन करने में थी कि नौकरशाही का आविर्भाव कैसे हुआ? यह समाज से किस तरह पोषण प्राप्त करती है और इसकी सक्रियता उत्पादन संबंधों में कैसे परिलक्षित होती है? नौकरशाही की संरचना से ज्यादा मार्क्स को उसकी विषयवस्तु ने आकर्षित किया।

मार्क्स के लिए नौकरशाही 'राज्य के भीतर एक विशिष्ट किस्म का बंद समाज' है। मार्क्स की नजर में राज्य के तीन मूलभूत तत्व होते हैं। पहला तत्व यह है कि राज्य वर्गीय प्रभुत्व का साधन है। दूसरा, एक ऐसी व्यवस्था विकसित करने का इसका लक्ष्य होता है जो एक वर्ग द्वारा किए गए दमन को संघर्ष कम कर वैधानिक करार दे और इसे बनाए रखे। तीसरा तत्व यह मान्यता है कि राज्य एक अस्थाई प्रघटना (तथ्य) है जो वर्गों के न रहने पर ढह जाएगा। नौकरशाही हीगेल द्वारा प्रस्तुत सोपानीय प्रणाली में विद्यमान सभी तत्वों को धोतित करती है जिसमें सह–शासन सलाहकार बोर्ड भी शामिल है। नौकरशाही को लेकर की गई मार्क्सवादी विवेचना की परिधि में प्रशासन की व्यवस्था और इस व्यवस्था को चलाने वाले प्रशासक दोनों ही आ जाते हैं।

सामाजिक विभाजनों से उद्‌भव : नौकरशाही का जन्म, कार्य–संचालनों की जरूरतों की पूर्ति के लिए नहीं होता जैसा कि हीगेल का मानना था, अपितु इसकी आवश्यकता समाज के वर्गीय विभाजन के कारण पैदा होती है। यह कोई स्वतंत्र सामाजिक श्रेणी नहीं है। इसका अस्तित्व स्पष्ट रूप से नागरिक समाज और राज्य के बीच पैदा हुए पृथक्करण पर टिका होता है। नौकरशाही का अस्तित्व एक तरह से नागरिक समाज के भीतर विभाजन और उन निगमों के अस्तित्व पर टिका होता है जिनके अपने विशेष हित होते हैं। जिन परीक्षाओं के द्वारा नौकरशाहों का चयन होता है वे परीक्षाएं नागरिक समाज और राज्य के बीच 'मध्यस्थता' का प्रतिनिधित्व नहीं करतीं बल्कि नागरिक समाज से लोगों और उनकी गतिविधियों के सामान्य हित से पृथक्करण का प्रतिनिधित्व करती हैं। साथ ही यह उन गतिविधियों का राज्य की ओर अंतरण है। मार्क्स के मुताबिक ऐसी परीक्षा ''और कुछ नहीं बल्कि ज्ञान की नौकरशाही दीक्षा'' है। यह दूसरा संबंध कुछ ज्यादा ही जटिल है।

नौकरशाही की परजीवी भूमिका : मार्क्स का विचार है कि निष्पक्ष राजनीतिक व्यवस्था, समाज के लोगों की सम्पूर्णता में निहित उत्पादक गतिविधियों से उपजती है। यहां यह बात ध्यान में रखना उपयोगी होगा कि 'राजनीतिक अर्थव्यवस्था की आलोचना में एक योगदान' (1859), नामक किताब की प्रस्तावना लिखते हुए उन्होंने लिखा कि वे हीगेल की आलोचना पर लिखी गई अपनी पिछली कृति से आश्वस्त हैं कि कानून और राज्य न तो स्वायत्त हैं और न ही मनुष्य के मस्तिष्क के परिणाम हैं। वह मानते हैं कि 'कानून' और 'राज्य' के जन्म का आधार 'जीवन की भौतिक परिस्थितियां' हैं। यही बात राजा की उत्पत्ति पर भी लागू होती है। वास्तव में राजा का पद प्रकृति से पैदा नहीं होता बल्कि सामाजिक सहमति वह ताकत है जो किसी व्यक्ति को राजा बनाती है। यही बात राज्य और नौकरशाही पर भी लागू होती है। मार्क्स के मुताबिक उत्पादन संबंधी कार्यकलाप ही मनुष्य के सभी क्रियाकलापों का आधार है। इसे मात्र 'व्यक्तियों के भौतिक अस्तित्व का पुनरुत्पादन' नहीं माना जाना चाहिए। मार्क्स के ही शब्दों में, वह तो उनकी गतिविधियों का एक सुनिश्चित रूप है और उनके जीवन को अभिव्यक्ति देने का एक तरीका है। कोई व्यक्ति अपने जीवन को जिस तरह अभिव्यक्त करता है, वह उसी तरह का होता है। मतलब यह कि कोई व्यक्ति उत्पादन की वस्तु और उत्पादन की पद्धति से जाना जाता है। अतः व्यक्तियों की प्रकृति, उनकी भौतिक परिस्थितियों द्वारा निर्धारित होती है। ये वही परिस्थितियां होती हैं जो उसके द्वारा किए जाने वाले उत्पादन को निर्धारित करती हैं।

मार्क्स का मानना है कि सामाजिक संरचना और राज्य कुछ निश्चित व्यक्तियों की जीवन प्रक्रिया से लगातार विकसित होते हैं। लेकिन ये निश्चित व्यक्ति वही नहीं होते जो खुद अपने आपको ऐसा समझते हैं या कि जिन्हें दूसरे लोग ऐसा मानते हैं बल्कि ये वह लोग होते हैं जो सचमुच ही ऐसे होते हैं। उत्पादन संबंधों के वाहक सामाजिक वर्ग होते हैं। उत्पादन की प्रत्येक विधि के भीतर ये सामाजिक वर्ग दो प्रकार के होते हैं। एक वर्ग वह

होता है जिसके पास उत्पादन के साधन होते हैं अर्थात् वह उत्पादन साधनों का मालिक होता है और दूसरा वर्ग वह होता है जिसके पास उत्पादन के ये साधन नहीं होते। मार्क्स नौकरशाही. को सांवयिक दर्जा देने से इसलिए इंकार करते हैं क्योंकि उनके अनुसार नौकरशाही का उत्पादन की प्रक्रिया से स्वयं कोई सीधा संबंध नहीं होता। वह नौकरशाही को 'परजीवी' कहते हैं। उनकी दृष्टि में नौकरशाही को इसलिए बनाया जाता है कि यह एक ओर तो यथास्थिति बनाए रखने और दूसरी ओर समाज के प्रबल वर्ग के विशेषाधिकारों को भी सुरक्षित रखे।

नौकरशाह के निजी साध्य : राज्य नौकरशाही के लिए वही भूमिका अदा करता है जो भूमिका निजी सम्पत्ति इस सम्पत्ति के स्वामी के प्रति अदा करती है। मार्क्स के शब्दों में, 'नौकरशाही, राज्य के अपने सार तत्व के रूप में समाज का आध्यात्मिक सार रखती है, यह इसकी निजी जागीर है।', मार्क्स के ही शब्दों में कहें तो वह 'असली राज्य के भीतर एक नकली राज्य विकसित करती है तथा राज्य की आध्यात्मिकता का पर्याय बन जाती है।' वह आगे कहते हैं, 'किसी व्यक्तिगत नौकरशाह के लिए राज्य के उद्देश्य उसके निजी उद्देश्यों में परिणत हो जाते हैं और वह उच्च पदों की होड़ में तथा अपना कैरियर बनाने में जुट जाता है।'

अपनी पुस्तक 'जर्मन विचारधारा' में मार्क्स राज्य तथा उसके साथ सामाजिक संस्थाओं की उत्पत्ति का स्रोत श्रम का विभाजन मानते हैं। उनके नजरिए से उत्पादन की हर एक पद्धति, इतिहास के दौरान हमेशा एक विशेष राजनीतिक संगठन को जन्म देती है जो कि प्रभुता संपन्न लोगों के हितों की सुरक्षा करता है। उनके शब्दों में ''राज्य वैसा ही राजनीतिक संगठन है जिसमें शासकवर्ग अपने हितों की सुरक्षा देखता है।'' मार्क्स का मानना है कि नौकरशाही राज्य में शोषण के हथियार के रूप में काम करती है और इसका प्रमुख कार्य है–समाज के कार्यों को इस ढंग से निपटाना कि निजी हित पूरे होते रहें। नौकरशाही समाज में अपने प्रभाव और निगमों से अन्तर्संवाद के जरिए कोई जनभावना विकसित नहीं करती जैसा कि हीगेल को भ्रम था बल्कि कुल मिलाकर नागरिक समाज के निजीकरण का प्रयास करती है।

जान–बूझकर ओढ़ी गई रहस्यात्मकता : नागरिक समाज के 'निजीकरण' के अपने उद्देश्य को पाने के लिए नौकरशाही राज्य की गतिविधियों को बाहरी लोगों के लिए जान–बूझकर गोपनीयता के आवरण में प्रस्तुत करती है। जैसा कि मार्क्स का मानना है, ''नौकरशाही का सामान्य तेवर ही गोपनीय और रहस्यात्मक है.नौकरशाही राज्य के कामों को सार्वजनिक रूप से करने से डरती है और समाज में मौजूद राजनीतिक चेतना को "अपनी रहस्यात्मकता के विरुद्ध अपराध मानती है। मार्क्स आगे लिखते हैं कि नौकरशाही 'प्राधिकार' को अपने ज्ञान का सिद्धांत मानती है तथा अधिनायकवाद को अलौकिकता प्रदान करना अपना कर्तव्य समझती है।

ज्यादातर लोग नौकरशाही को अजीब रहस्यात्मकता और श्रद्धा के भाव से किसी दूरस्थ संस्था की तरह देखते हैं। उसको लेकर लोगों में रहस्यात्मकता की यह भावना एक बंद संस्था होने के कारण उत्पन्न होती है। रहस्यात्मकता के उसके इस स्वभाव की रक्षा पदसोपान द्वारा होती है। उसकी इस प्रकृति के कारण जनता से उसका अलगाव हो जाता है। नौकरशाहों में भी अलगाव की यह भावना विकसित हो जाती है क्योंकि वे अपने कार्य के परजीवी आधार और दमनात्मक स्वभाव को नहीं समझ पाते।

अलगाव का प्रतीक : इस तरह मार्क्स की दृष्टि में नौकरशाही शोषित जनता के लिए अलगाव का प्रतीक है। इस अलगाव के दो निहितार्थ हैं। पहला निहितार्थ यह है कि नौकरशाही के इस मौजूदा संरचना के खात्मे के लिए यह जरूरी है कि पहले राज्य का मौजूदा ढांचा खत्म हो तथा इस अलगाव का दूसरा अर्थ यह है कि समाज में नौकरशाही जिस हद तक व्याप्त है उससे यह पता चलेगा कि समाज को क्रांति से रूबरू कराने के लिए किस सीमा तक हिंसा की जरूरत पड़ेगी। जहां तक नौकरशाही को खत्म करने से पहले राज्य के ढांचे को ध्वस्त करने की बात है तो मार्क्स ने 'एट्टींथ बुमैर' में लिखा है। कि अतीत की क्रांतियों की तरह नौकरशाही पर नियंत्रण पाने के बजाय सर्वहारा को इस संस्था को खत्म ही करना चाहिए। 'मेनिफेस्टो' में मार्क्स और उनके सहयोगी एंगेल्स ने

स्पष्ट किया है कि यह कम्युन की शिक्षा है कि 'मजदूर वर्ग राज्य की पहले से बनी' – बनाई मशीनरी पर अधिकार करके इसे अपने उद्देश्य को पूरा करने में प्रयुक्त नहीं कर सकता। मार्क्स के अनुसार यूरोप के देशों में 'सर्वहारा क्रांति के लिए अब पहले जैसी स्थितियां नहीं रहीं क्योंकि नौकरशाही का ढांचा यहां बहुत सशक्त हो चुका है' जिसे एक वर्ग से छीनकर दूसरे वर्ग के हाथों में सौंपा नहीं जा सकता। अब तो इन ढांचों को जड़ से ही नष्ट करना पड़ेगा।

हीगेल की इस धारणा से भी मार्क्स सहमत नहीं हैं कि नौकरशाही को सार्वभौमिक इच्छा प्राप्त है जो दूसरे समूहों को प्राप्त नहीं है क्योंकि जैसाकि पेरेज दियाज इस संबंध में मार्क्स के दृष्टिकोण का संकलन करते हुए कहते हैं, ''कार्यात्मक और सोपानीय का विभेद परस्पर अकर्मण्यता को जन्म देता है क्योंकि उच्च पद पर आसीन व्यक्ति मामले की विशिष्टता को नहीं जानता होता और नीचे के पद पर कार्यरत व्यक्ति को सभी कामों के साधारण सिद्धांतों का पता नहीं होता भले ही उसे परिस्थिति की पूरी जानकारी क्यों न हो।''

ज्ञान का सोपान : मार्क्स उन रक्षोपायों को गलत करार देते हैं, जिन्हें हीगेल ने नौकरशाही पर आंतरिक और बाह्य नियंत्रण बनाए रखने के लिए सुझाए थे। मार्क्स के मुताबिक हीगेल के ये रक्षाउपाय नौकरशाही के अंदर व्याप्त निजी महत्वाकांक्षा और कैरियरवाद को रोक नहीं पाते। दरअसल नौकरशाही का सोपान एक तरह से ज्ञान का सोपान है। नौकरशाही में शीर्ष पद, नीचे के लोगों को व्यक्ति के बारे में दृष्टिकोण प्रदान करते हैं जबकि नीचे के पदासीन लोग शीर्ष पदासीनों को सार्वभौमिकता का ज्ञान प्रदान करते हैं।

मार्क्स के शब्दों में कहें तो – नौकरशाही एक ऐसा वृत्त है जिससे कोई भी बच नहीं सकता। उसका पदसोपान ज्ञान का पदसोपान है। उच्च पदस्थ अधिकारी निचले स्तर की समझ पर यकीन करता है जबकि निम्नस्तर अपने शीर्ष स्तर को निचले स्तर की समझ से सम्पन्न मानता है। इस प्रकार एक–दूसरे को छलने का यह खेल सतत चलता रहता है।

मार्क्स इस धारणा से भी असहमत हैं कि नौकरशाही में मानवीय गुणों का संचार करने के लिए काई उपाय सुझाया जा सकता है। वह कहते हैं : "अफसर की भूमिका में मनुष्य अपने ही विरुद्ध अफसर की रक्षा करेगारू क्या गजब की एकता है।

बिखरे किसान : नौकरशाही के विकास का आधार : मार्क्स का कहना है कि असंगठित किसान ही वह आदर्श धरातल प्रदान करता है जहां नौकरशाही फलती–फूलती है। वह इसे यूं कहते हैं :छोटे स्वामित्व वाली सम्पत्ति अपने स्वभाव से ही असंख्य और सर्वशक्तिशाली नौकरशाही की स्थाई आधार भूमि बनती है। यह समग्र भूमि पर संबंधों और व्यक्तियों का एक समान स्तर बनाती है। इसलिए यह संपूर्ण समुदाय पर शीर्षस्तर से एक जैसी कार्रवाई की संभावना भी पैदा करती है। नौकरशाही जन सामान्य और राजसत्ता के बीच कुलीन मध्यवर्ती ग्रेडों को मिटा देती है। इसलिए वह चारों तरफ राजसत्ता के प्रत्यक्ष हस्तक्षेप तथा अपने मध्यवर्ती अंगों को अन्तः स्थापित करने की आवश्यकता बताती है। इस तरह वह अंत में बेरोजगार जनता की एक ऐसी फौज खड़ी कर देती है जिनके लिए न तो खेतों और न ही शहरों में जगह होती है। परिणामस्वरूप पढ़े–लिखे लोगों की अच्छी–खासी फौज तैयार हो जाती है जो अंततः राज्य पर सरकारी नौकरियां पैदा करने के लिए दबाव डालते हैं।

मार्क्स ने अपनी किताब 'एट्टींथ ब्रुमैर ऑफ लुई बोनापार्ट' (1852) में स्पष्ट किया है कि फ्रांस में नौकरशाही के लिए उपयुक्त आधार वहां की छोटी जमीनों वाले किसानों ने तैयार किया। चूंकि यहां सरकार और किसानों के बीच कोई अन्य मध्यवर्ती सत्ता न थी इसलिए इन पर राज्य ने सीधे हस्तक्षेप किया। मार्क्स ने अपनी किताब में लिखा है कि लुई बोनापार्ट को एक कृत्रिम जाति बनानी पड़ी और इस कृत्रिम जाति के लिए उसका सत्ता में बने रहना जीविकोपार्जन के लिए जरूरी हो गया। मार्क्स आगे लिखते हैं कि उस समय बोनापार्टवाद ही सरकार का वह एकमात्र रूप था जो संभव हो सकता था क्योंकि बुर्जुवा वर्ग पूरी तरह दम तोड़ चुका था और सर्वहारा वर्ग तब तक

देश में शासन कर सकने लायक गुण नहीं हासिल कर सका था। लुइस नेपोलियन के शासन काल में बुर्जुवा वर्ग की कमजोरी के कारण नौकरशाही ने राज्य पर नियंत्रण कायम कर लिया था क्योंकि तब बिखरे हुए किसान असंगठित थे जिनके लिए नौकरशाही बहुत बड़ी ताकत थी। लेकिन बाद में जब यही किसान संगठित होकर लुई। बोनापार्ट की ताकत का आधार बन गए तो नौकरशाही के लिए उन किसानों पर शासन करना मुश्किल हो गया। बोनापार्ट फ्रांस की छोटी जमीन वाले किसानों के विशाल वर्ग का प्रतिनिधि था।

नौकरशाही का लोप : मार्क्स का विचार है कि सर्वहारा क्रांति की बदौलत निर्मित समाज में नौकरशाही के लिए कोई जगह नहीं होगी। उनके लिए 'नौकरशाही का खात्मा उसी स्थिति में संभव है जब आम हित वास्तव में (न कि विचारों में जैसा कि हीगेल कहते हैं) एक होकर विशेष हित बन जाएं। लेकिन यह उसी स्थिति में संभव है जब विशेष हित वास्तव में सामान्य हितों में बदल जाएं। राज्य के समापन के साथ ही, उसके तमाम कार्यों का स्वरूप पूर्णतः बदल जाता है। मार्क्स लिखते हैं, जैसे ही सर्वहारा के आन्दोलन का लक्ष्य यानी वर्गों का सफाया पूरा हो चुका होगा, वैसे ही राज्य की उस सत्ता का लोप हो जाएगा जिसका काम बहुसंख्यक उत्पादक समुदाय को अल्पसंख्यक शोषक समुदाय के अधीन रखना होता है। इसके बाद सरकारी काम महज साधारण प्रशासनिक काम तक सीमित रह जाएंगे।

यहां यह स्पष्ट कर देना बहुत जरूरी है कि सर्वहारा राज्य में केन्द्रीकरण की आवश्यकता तथा राज्य के खात्मे के बीच किसी तरह का कोई विवाद नहीं है। केन्द्रीकरण नए राज्य (खात्मे के बाद सृजित) की मुख्य विशेषता है। इसे और ज्यादा स्पष्ट करते हुए मार्क्स लिखते हैं, सर्वहारा अपनी राजनीतिक सर्वोच्चता का उपयोग बुर्जुवा वर्ग से पूंजी छीनने तथा सारे उत्पादन साधनों को छीनकर राज्य के हाथों सुपुर्द करने का काम करेगा.....। केन्द्रीकरण और राज्य के ध्वंस में कोई टकराव नहीं है इसे मार्क्स के 'दि एट्टींथ ब्रुमैर' में और स्पष्ट ढंग से समझा जा सकता है। वह लिखते हैं : 'राज्य के तंत्र के विनाश से केन्द्रीकरण को कोई खतरा नहीं है। नौकरशाही तो केन्द्रीकरण का क्रूर और भोंडा तरीका है जो अभी भी अपने विरोधी, सामंतवाद से परिचालित है।

संक्रमण काल के राज्य में नौकरशाही : संक्रमण काल के राज्य में सरकारी अधिकारियों की भूमिका और प्रकृति में आमूल–चूल परिवर्तन होगा। इन सरकारी अधिकारियों को शुरू में सर्वहारा वर्ग के अधीन तथा बाद में समूची जनता के अधीन लाया जाएगा। अपनी पुस्तक 'फ्रांस में गृह युद्ध' में जो मार्क्स ने, पेरिस कम्यून के नाम से जानी जाने वाली, अस्थाई सरकार के विरुद्ध .. हुई बगावत को खूनी ढंग से कुचले जाने के तुरंत बाद लिखी, उन्होंने संक्रमणकालीन राज्य का खाका खींचने की कोशिश की है। कम्यून को बड़े–बड़े औद्योगिक शहरों से लेकर छोटी–छोटी ग्रामीण बस्तियों की स्थानीय सरकारों का रूप लेना था। मार्क्स लिखते हैं कुछ महत्वपूर्ण कामों को जो अब भी केन्द्रीय सरकार की बदौलत ही संपन्न होते थे, छेड़ा नहीं गया था। लेकिन चूंकि ये काम अब कम्यून को करने थे, ये काम अत्यंत जिम्मेदार लोगों को सौंपे जाने चाहिए। संक्रमण काल के राज्य में अधिकारी उन श्रमिकों और उनके प्रतिनिधियों से मिलकर बनेंगे जिनका निर्वाचन सार्वभौमिक मताधिकार के द्वारा होना था और जिन्हें कभी भी हटाया जा सकता था। मार्क्स का मानना था कि यह प्रयोग इस भ्रम को दूर कर देगा कि ष्प्रशासन और राजनीतिक शासन गोपनीय रहस्यात्मक हैं और श्रेष्ठ कार्य का दायित्व इसी परजीवी जाति के हाथों में सौंपा जा सकता है जोकि अच्छी खासी तनख्वाह पाने वाले सत्ता के अंधभक्त लोग हों... इस स्थिति में राज्य के पदसोपान को पूरी तरह से खत्म करते हुए तथा जनता के विभिन्न मालिकों की जगह, कभी भी हटाए जा सकने वाले उन नौकरों को रखकर दायित्वों का वहन होगा जो झूठी जिम्मेदारी की जगह सच्ची जिम्मेदारी निभाएंगे क्योंकि ये लोग लगातार लोक नियंत्रण में काम करेंगे। प्रशासनिक कर्मचारी समाजवाद के संक्रमण काल में रहेंगे। लेकिन "कम्यून के सदस्य से लेकर निचले स्तर तक 'जन–सेवा' मजदूरों की तनख्वाह (मजदूरों के स्तर की तनख्वाह) पर की जानी चाहिए। इस व्यवस्था में निहित स्वार्थ और राज्य के उच्च पदस्थ लोगों के प्रतिनिधि भत्ते स्वयं उच्च पदस्थों के समाप्त होने से खत्म हो जाएंगे।

इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या : उपर्युक्त विश्लेषण से हम पाते हैं कि मार्क्स द्वारा नौकरशाही का यह विश्लेषण उनके इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या के सिद्धांत पर आधारित है। नौकरशाही की वस्तुगत खोज में मार्क्स ने पाया कि नौकरशाही में राज्य के हित और विशेष उद्देश्यों वाले निजी हित आपस में इस तरह एक हो जाते हैं कि राज्य के हित एक तरह के विशिष्ट निजी उद्देश्य बन जाते हैं। ये निजी उद्देश्य दूसरे निजी उद्देश्यों से टकराते हैं। एंड्रस हागेडस मार्क्स के सिद्धांत में सम्पत्ति और उसके स्वामित्व के बीच द्वंद्वात्मक संबंधों की श्रेष्ठ अभिव्यक्ति से दो–चार होते हैं। वह कहते हैं

सम्पत्ति का स्वामित्व जो उत्पादन संबंधों की ऐतिहासिक तौर पर विकसित, परिभाषित और ठोस व्यवस्था है, व्यक्तियों के सम्पत्ति के अधिकारों को लागू करने के दौरान अपने आप या व्यक्तिगत स्तर पर संबंध विकसित करता है। राज्य प्रशासन की संस्थाएं ऐतिहासिक तौर पर विभिन्न सामाजिक एवं आर्थिक रूपों में विकसित होती हैं जिनके भीतर सत्ता के संबंध जो व्यक्तियों की निजी संपत्ति से सीधे जुड़े नहीं होते, वास्तविक सत्ता का रूप धारण करते हैं। इस पर ध्यान देना रोचक होगा कि नौकरशाही की उत्पीड़न युक्त कार्यप्रणाली के यथार्थ में जो दर्शन युवा मार्क्स ने एक पत्रकार की हैसियत से मोजेल जिले के अपने दौरे में किया, उसी ने उनकी आंखें खोली। जैसा कि उन्होंने लिखा भी है :

प्रशासन, नौकरशाही की वजह से प्रशासनिक क्षेत्र में उत्पीडन के कारणों को समझ पाने में असमर्थ था और प्रशासनिक दायरों से बाहर केवल प्रकृति एवं नागरिकों में ही इस तरह के उत्पीड़न को देख पा रहा था। सच्चे इरादों, अंध मानवतावाद तथा तीव्र बुद्धि के बावजूद प्रशासनिक अधिकारी केवल तात्कालिक और अस्थाई टकरावों को हल करने में समर्थ थे। साथ ही ये प्रशासनिक अधिकारी वास्तविकता और प्रशासनिक सिद्धांतों के बीच के स्थाई टकरावों को खत्म करने में भी अक्षम थे क्योंकि नेक इरादे भी वास्तविक संबंधों में असफलता लाने के लिए बाध्य थे। दूसरे शब्दों में कहें तो नियति ही ऐसी थी। अन्य शब्दों में, तार्किक या मौलिक संबंध, प्रशासनिक ढांचे और प्रबंधित निकाय के मामले दोनों के भीतर नौकरशाही के संबंध थे।

निष्कर्ष

मार्क्स के नौकरशाही सिद्धांत का समाजशास्त्रीय, आर्थिक और राजनीतिक दृष्टि से प्रचुर महत्व है। जैसा कि आविनेरी कहते हैं, ''नौकरशाही का ढांचा स्वतः सामाजिक सत्ता को परिलक्षित नहीं करता बल्कि उसे भ्रष्ट और बदशक्ल बनाता है। नौकरशाही विद्यमान सामाजिक सत्ता की तस्वीर है जो सार्वभौमिकता के लिए अपने दावे के कारण विकृत हो चुकी है। मार्क्स नौकरशाही को राज्य से पृथक और स्वायत्त उपकरण नहीं मानते। जैसा कि हाल डॉपर वर्णन करते हैं, मार्क्स के लिए ष्नौकरशाही, महज एक अभिवृद्धि नहीं है और न ही राज्य नामक स्वस्थ शरीर में एक दुर्भाग्यपूर्ण फोड़ा है बल्कि यह तो राज्य के जन्म से ही उसका एक अविभाज्य अंग है।

नौकरशाही की मार्क्सवादी अवधारणा का राजनीतिक महत्व क्या है? यह उनके द्वारा दुनिया के क्रांतिकारियों को दिए गए संदेश में निहित है। मार्क्स दुनिया की व्याख्या करने के बजाय उसे बदल डालने में रुचि रखते थे। वह राज्य नामक संस्था को हिंसक तरीके से उखाड़ फेंकने में यकीन करते थे। उनका मानना था कि सर्वहारा क्रांति के लिए जो खून–खराबा करना पड़ेगा वह संबंधित राज्य की नौकरशाही और सैन्य शक्ति की क्षमता पर निर्भर करेगा। ऐसे में क्रांतिकारियों के लिए यह दायित्व बन जाता है कि वह शोषक राज्य में नौकरशाही की प्रकृति और शक्ति का गंभीर मूल्यांकन करें।

अध्याय – 11

येहेज्केल ड्रोर
(YEHEZKEL DROR)

''नीति–विज्ञान (Policy Science) का विकास तेजी से करने की आवश्यकता है तथा महत्त्वपूर्ण समस्याओं को समुचित तरीके से सुलझाने के लिए इस विकसित नीति–विज्ञान का पूर्ण उपयोग किया जाना चाहिए।'
–येहेज्केल भोर

एक प्रशासनिक विचारक के रूप में येहेज्केल ड्रोर का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान उनका 'नीति–विज्ञान' का विकास करने की वकालत करने वाले चिन्तक के रूप में है। नीति–विज्ञान (Policy Science) के विषय में हमारी जानकारी न केवल हमारे बौद्धिक–क्षैतिज का ही विस्तार करती है, अपितु हमारे खण्डित ज्ञान (Fragmented Knowledge) को भी एकीकृत करने में हमारी मदद करती है। लोक प्रशासन के जनक वुडरो विल्सन ने अपने लेख 'द स्टडी ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' (1887) में स्पष्ट रूप से राजनीति और प्रशासन के द्वैतभाव (Dichotomy) की वकालत की थी। परन्तु यथार्थ में लोक प्रशासन को राजनीति सन्दर्भ से पूर्णतया पृथक् करके देखना अव्यवहारिक है। यही यथार्थता हमें नीति–विज्ञान के बारे में अध्ययन करने का आग्रह करती है।

यहेजकेल ड्रोर ने अपनी 'स्नातक' तथा 'मैजिस्टर ज्यूरिस' (Magister Juris) की उपाधियाँ जेरुशलम के हिब्रू विश्वविद्यालय (Hebrew University) से प्राप्त की। इसके पश्चात् आपने हार्वर्ड विश्वविद्यालय से 'विधि स्नातकोत्तर' तथा 'एस.जे.टी.डी.' (Dr. of Jurdical Sciences) की डिग्रियाँ प्राप्त की। ड्रोर ने हिब्रू विश्वविद्यालय में राजनीति विज्ञान विभाग के अन्तर्गत अध्यापन कार्य भी किया। आप इस विभाग के अध्यक्ष भी रहे तथा इसके लोक प्रशासन संभाग के अध्यक्ष भी आप रहे। आपने विजिटिंग प्रोफेसर तथा नीति–परामर्शदाता के रूप में अनेक देशों में कार्य भी किया। सन् 1962–63 में आप 'सेन्टर फॉर एडवान्स स्टडी इन बिहेवियरल साइन्सेज' के फैलो भी रहे । इजराइल में लोक प्रशासन के अध्ययन और व्यवहार की प्रगति में योगदान करने के लिए ड्रोर को 1965 में 'रोसोलिओ पुरस्कार' (Resolio Award) प्रदान किया गया। 1968 से 1970 के बीच आपने कैलिफोनियाँ और न्यूयोर्क के 'रैंड कॉरपोरेशन' में वरिष्ठ पेशेवर स्टाफ सदस्य के रूप में कार्य किया। वस्तुतः ड्रोर का पेशेवर अनुभव काफी व्यापक था जिसने आपको प्रसिद्धि दिलाई।

येहेज्केल ड्रोर ने नीति–विज्ञान पर काफी लिखा है। आपकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं तथा अनेक अन्तराष्ट्रीय पत्रिकाओं में आपके अनेक लेख प्रकाशित हो चुके हैं। आपकी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण रचनाएँ इस प्रकार है :– Public Policy Making Re-examined (1968), Design for Policy Sciences (1971), Ventures in Policy Sciences : Concepts and Applications (1971), Improving Public Policy Analysis Study Materiral for Top Executives (1993)

ड्रोर ने 'नीति–विज्ञान' के विकास की पुरजोर वकालत की। आपका मानना है कि यदि हम महत्त्वपूर्ण समस्याओं का समाधान करना चाहते हैं तो हमें नीति–विज्ञान का तेजी से विकास करना होगा तथा इस पूर्ण विकसित नीति–विज्ञान का उपयोग भी करना होगा।

नीति–विज्ञान (Policy Science) : येहेज्केल ड्रोर ने नीति–विज्ञान की आवश्यकता तथा महत्त्व पर काफी कुछ लिखा है। उल्लेखनीय है कि 'नीति–विज्ञान' की अवधारणा का सर्वप्रथम निरूपण हैरॉल्ड लॉसवेल ने अपनी

सह–सम्पादित पुस्तक 'द पोलिसी साइन्सेस' में किया था। सामाजिक समस्याओं के सम्बन्ध में अन्वेषण के एक नए क्षेत्र का निर्माण करने हेतु यह पुस्तक पहला व्यवस्थित प्रयास मानी जाती है। इसके अलावा आर. स्कॉट तथा ए. शोरे, आई. हारोविट्ज, एल. ट्रारब आदि विद्वानों ने नीति–विज्ञान के उद्भव की अधिक विस्तृत तस्वीर प्रस्तुत की। 1960 के दशक में कुछ कारकों यथा युद्ध, गरीबी, अपराध, प्रजातीय–रिश्ते, प्रदुषण आदि ने नीति–विज्ञानों में गहरी रुचि पैदा करने का कार्य किया। नीति–विज्ञान को अधिक लोकप्रिय बनाने का श्रेय येहेजकेल ड्रोर को ही जाता है।

मानवीय क्रिया (Human Action) के लिए विद्यमान ज्ञान के सम्बन्ध में ड्रोर का मत है कि इस ज्ञान को तीन स्तरों में बाँटा जा सकता है। पहला स्तर है वह ज्ञान जो पर्यावरण पर नियन्त्रण रखने के काम आता है दूसरे स्तर पर वह ज्ञान आता है जिसकी सहायता से समाज और व्यक्तियों को नियन्त्रित किया जा सकता है तथा तीसरा स्तर उस ज्ञान से सम्बन्धित है जो स्वयं नियन्त्रणों पर नियन्त्रण रखने से सम्बन्धित होता है। ड्रोर नियन्त्रणों पर नियन्त्रण सम्बन्धी व्यवस्था को 'परा–नियन्त्रण' (Meta-Control) कहते हैं। आपका मानना है कि पर्यावरण पर नियन्त्रण सम्बन्धी ज्ञान की प्रगति सर्वाधिक हुई है क्योंकि यह ज्ञान वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकीय प्रगति (Advancement) से जुड़ा होता है। समाज और व्यक्तियों पर नियन्त्रण सम्बन्धी ज्ञान की थोड़ी प्रगति हुई है हालाँकि इसका अभी उच्च स्तरीय विकास नहीं हो पाया है। इन दोनों के विपरीत 'परा–नियन्त्रण' सम्बन्धी ज्ञान का विकास काफी कम हआ है और अनुसन्धान के विशिष्ट क्षेत्र के रूप में इसकी पहचान नहीं बन पाई है। ड्रोर इसके विकास की वकालत करते हैं।

ड्रोर का मानना है कि मानवीय इतिहास के प्रारम्भ से ही मनुष्य का समाज के विभिन्न आयामों (Dimonsions) के सम्बन्ध में ज्ञान काफी कम रहा है। सामाजिक नियन्त्रण प्रणाली की डिजाइन और इसका परिचालन इसी प्रकार का एक क्षेत्र है। ड्रोर इसे 'सामाजिक निर्देशन प्रणाली' (Societal Direction System) कहते हैं। इसके सम्बन्ध में अल्प ज्ञान के कारण मानवीय मूल्यों के सन्दर्भ में सदैव पीड़ा और दुःखान्त (Tragedy) पैदा होते रहे हैं। परन्तु आज के समय में नियन्त्रण की व्यवस्था में विचित्र परिवर्तन आए हैं। आज अनेक कारणों से नियन्त्रणकारी–सत्ता के हाथों में व्यापक शक्तियाँ आ गई हैं। परमाणु बमों, परिस्थितिकी में जहर घोलने वाली तकनीकों, बच्चे का लिंग पता करवाने की तकनीकों, जेनेटिक इंजीनियरिंग आदि सम्बन्धी ज्ञान का परिणाम यह हुआ कि नियन्त्रणकारी–सत्ता अधिक शक्तिशाली हो गई है। इस प्रकार के भयानक विकास ने 'सामाजिक निर्देशन प्रणाली' को अत्यधिक नाजुक (Crucial) स्थिति में पहुँचा दिया है। 'सामाजिक निर्देशन प्रणाली' में अनेक परिवर्तन करने होंगे। इसके लिए हमें जहाँ एक ओर ज्ञान रूपी निकाय में उपस्थित रिक्तता (Gaps) को ही भरना होगा, साथ ही मूल्यों और विश्वासों की एक नई व्यवस्था की स्थापना करना भी आवश्यक होगा। अपने इस विश्लेषण के आधार पर ड्रोर ने निम्न नियम का प्रतिपादन किया जहाँ पर्यावरण, समाज और व्यक्तियों को निर्धारित (या नियन्त्रण) करने वाली मानवीय क्षमताओं की तेजी से वृद्धि हो रही है, इन क्षमताओं का उपयोग करने वाली 'नीति–निर्माण' सम्बन्धी क्षमताएं (Capabilities) वहीं की वहीं है।

निःसन्देह, डोर नीति–निर्माण सम्बन्धी क्षमताओं में वृद्धि करने का आग्रह करते हैं। इसके लिए वे 'नीति–विज्ञान' का विकास करने की वकालत करते हैं। परन्तु ड्रोर उन कतिपय कमजोरियों (Weaknesses) की पहचान करते हैं जो नीति–निर्माण के क्षेत्र में वैज्ञानिक ज्ञान के विकास के प्रयासों में सामने आयी हैं। इस सम्बन्ध में जो कमजोरियाँ या कमियाँ है वे निम्न प्रकार हैं– (क) वर्तमान अनुसन्धान में 'माइक्रो उपागम' को अपनाया जा रहा है जो कि नीति–निर्माण प्रणाली के लिए बहुत ही सीमित प्रासंगिकता रखता है (ख) ज्ञान के बिखराव के कारण यह खण्डित (Fragmented) हो गया है तथा प्रणाली–विश्लेषण उपागम को नजर अंदाज किया जा रहा है (ग) इसमें तार्किकता के घटक पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया गया है तथा तार्किकेत्तरता (Extra-Rationality) को विस्मृत कर दिया गया हैय (घ) नीति–निर्माण प्रगति उपायों (Improvement Measures) में अत्यधिक अभिवृद्धिकारिता (Incrementalism) है परन्तु इसमें नई डिजाइनों (नोवा–डिजाइन) के लिए कोई प्रयास नहीं किया

गया है (च) नीति–निर्माण में सुधार के प्रयास इतने संकीर्ण हो गए हैं कि इसके कई महत्त्वपूर्ण तत्त्वों की उपेक्षा तक हो गई है जैसे कि राजनीतिज्ञ, (छ) व्यवहारवादी उपागम और मानकीय उपागम के द्वैतभाव (Dichotomy) के कारण समग्र रूप से नीति–निर्माण व्यवस्था को समझने और उसमें सुधार करने का एक व्यापक उपागम नहीं बन पाया है (ज) मानकीय उपागम (Normative Approach) में गुणात्मक चरों से सम्बन्धित नए उपायों का विकास नहीं हो पाया है (झ) व्यवहारवादी उपागम में निर्देशात्मक पद्धतिशास्त्र (Prescriptive Methodology) के प्रति उदासीनता पाई जाती है, जिसके कारण समाज की व्यवहारिक (Practical) समस्याओं के समाधान में ज्ञान को कैसे लागू किया जा सकता है तथा (ट) अनुसन्धान की परम्परागत प्रकृति के कारण नीति–निर्माण अध्ययन विभिन्न स्रोतों से प्राप्त ज्ञान का उपयोग नहीं कर पाएं हैं। इन समस्त कमजोरियों के कारण जो ज्ञान विकसित होता है वह प्रभावशाली लोक नीति–निर्माण के लिए अपर्याप्त है।

प्रभावशाली नीति–निर्माण के लिए जरुरी है कि ज्ञान का एक ऐसा निकाय बनाया जाये जिसमें विभिन्न अवधारणाओं को एकीकृत किया गया हो। इसी प्रयास में अन्वेषण के एक नए क्षेत्र का जन्म हुआ जिसे नीति–विज्ञान कहा जाता है। ड्रोर नीति–विज्ञान को परिभाषित करते हुए कहते हैं – नीति–विज्ञान को एक ऐसी विद्या के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो नीति सम्बन्धी ज्ञान की खोज करती है, नीति सम्बन्धी मामलों की सामान्य जानकारियाँ एकत्रित करती है, सामान्य नीति–निर्माणकारी ज्ञान का अन्वेपण करती है और इन्हें एक विशिष्ट अध्ययन का रूप देने के लिए संयोजित करती है।

एक पृथक् क्षेत्र के रूप में नीति–विज्ञान आवश्यक और अनिवार्य है क्योंकि इसकी सहायता से नीति ज्ञान के विकास को बढ़ावा दिया जा सकता है तथा बेहतर नीति–निर्माण में इसका उपयोग किया जा सकता है। ड्रोर यह भी मानते हैं कि इसका उपयोग उन्नत अनुसंधान में किया जा सकता है तथा साथ ही पेशेवर नीति–वैज्ञानिकों और नीति–निर्माताओं की भर्ती और प्रशिक्षण में भी इसका उपयोग किया जा सकता है। अनेक प्रसिद्ध सामाजिक वैज्ञानिकों ने नीति विज्ञान रूपी इस नए क्षेत्र में गहरी रुचि दिखाई है तथा साथ ही साथ अनेक विश्वविद्यालयों में भी नीति–विज्ञान विषयक कोर्सेज उपलब्ध हैं।

ड्रोर सच्चे मन से नीति–विज्ञान के विकास का सपना तो देखते ही हैं साथ ही साथ वे इस बात के प्रति भी सचेत हैं कि उपलब्ध अकादमिक और राजनीतिक संस्कृति नीति–विज्ञान के विकास में बाधा बन सकते हैं। फिर आगे यह भी संदेहास्पद है कि इस नई चुनौती का सामना करने के लिए मानव की बौद्धिक क्षमताएँ पर्याप्त हैं भी की नहीं। बहरहाल, अब तक इस क्षेत्र में प्रारम्भ हो चुके प्रयासों को गति प्रदान करने के लिए ड्रोर नीति–विज्ञानों के कुछ नए पैराडाइमों (Paradigms) का सुझाव देते हैं (क) नीति–विज्ञान का मुख्य सम्बन्ध मैक्रो–नियन्त्रण प्रणालियों और विशेषतः लोक नीति प्रणालियों को समझने तथा उनमें सुधार करने से है। इसमें निम्न बातें शामिल हैं :– नीति विश्लेषण, वैकल्पिक नवाचार (Alternative Innovations), मास्टर नीतियाँ (Megapolicies), मूल्यांकन और फीडबैक, मेटानीतियों को सुधारना (Metapolicy) आदि। (ख) नीति–विज्ञान विभिन्न सामाजिक विज्ञान अनुशासनों जिसमें व्यवहारवादी विज्ञान और निर्णय अनुशासन शामिल हैं, के बीच की बाधाओं और परम्परागत दीवारों (Boundaries) को तोड़ेगा। इससे आगे वे ज्ञान को एकीकृत करेंगे तथा एक ऐसे महा–विषय (Super-Discipline) का निर्माण करेंगे जो लोक नीति–निर्माण पर केन्द्रित होगा। इस प्रयास में भौतिक और जीवन विज्ञानों के लिए प्रासंगिक ज्ञान का उपयोग भी किया जा सकेगा। (ग) नीति–विज्ञान विशुद्ध (Pure) तथा प्रयुक्त (Applied) अनुसन्धान के बीच की खाई को भी पाटेगा। वास्तविक संसार ही नीति विज्ञानों के लिए मुख्य प्रयोगशाला होगी और इसी प्रयोगशाला में अधिकांश अमूर्त सिद्धान्तों (Theories) की प्रासंगिकता और व्यवहारिकता का परीक्षण किया जा सकेगा। (घ) नीति–विज्ञान अन्तःर्निहित ज्ञान (Tacit Knowledge) तथा व्यक्तिगत अनुभव को ज्ञान का महत्त्वपूर्ण स्रोत स्वीकार करेगा। नीति–विज्ञान के निर्माण में नीति–व्यवहारकर्ताओं (Practitioners) के अन्तः र्निहित ज्ञान का सार प्राप्त करने का प्रयास किया जायेगा। यही वह उपागम होगा जिसके आधार पर नीति–विज्ञान को समकालीन

सामान्य विज्ञानों से पृथक् पहचाना जा सकेगा। (च) सामान्य विज्ञानों से भिन्न नीति–विज्ञान 'मूल्य–मुक्त विज्ञानों' की प्राप्ति में आने वाली कठिनाइयों के प्रति अधिक संवेदनशील होगा। परिणामस्वरूप वे मूल्य प्रभावों, मूल्य सुसंगतियों (Consistencies), मूल्य लागतों (Costs) तथा मूल्य प्रतिबद्धताओं के व्यवहारवादी आधारों को खोजने का प्रयास करेंगे। नीति–विज्ञान ऐसे वैकल्पिक लक्षण (Features) भी प्रस्तुत करेंगे जिनके अपने मूल्य तत्त्व होंगे। इसके लिए वे 'संगठनात्मक रचनात्मकता' को प्रोत्साहित करेंगे। इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में वे समकालीन विज्ञानों, नीति–शास्त्र (Ethics) तथा मूल्यों के दर्शनशास्त्र तक को पृथक–पृथक् करने वाली ठोस दीवार को तोड़ेंगे तथा मूल्यों का एक परिचालनात्मक सिद्धान्त बनाएँगे। (छ) नीति–विज्ञान 'अ–ऐतिहासिक उपागम' (Non-Historic Approach) को अस्वीकार करता है क्योंकि यह समय के प्रति काफी संवेदनशील है। उन्नत नीति–निर्माण के लिए केन्द्रीय सन्दर्भ के रूप में वह एक ओर ऐतिहासिक विकासों पर जोर देगा तथा दूसरी ओर भविष्य के आयामों पर । (ज) नीति–विज्ञान व्यवहारवादी विज्ञानों के 'इसे लो–या–छोड़ दो' की प्रवृत्ति को अस्वीकार करता है। वह वास्तविक नीति–निर्माण और सम्पूर्ण सामाजिक निर्देशन प्रणाली की नीति–निर्माण और सम्पूर्ण सामाजिक निर्देशन प्रणाली की नीति–निर्माण स्थितियों में काम करने वाले पैशवरों को तैयार करने में बढ़े हुए ज्ञान का उपयोग करने के लिए प्रतिबद्ध है। (झ) नीति विज्ञान रचनात्मकता, अन्तःप्रज्ञा, करिश्मा और मूल्य–निर्णय जैसी तार्किकत्तर (Extra-Rational) प्रक्रियाओं और 'गहन अभिप्रेरणा' जैसी अतार्किक प्रक्रियाओं की अहम् भूमिका को पहचानते हैं। सामाजिक निर्देशन प्रणाली की डिजाइन और परिचालन (Operation) में लागू किये जा सकने वाले व्यवस्थित ज्ञान के निर्माण और संरचनात्मक तार्किकता को बनाने का प्रयास करेंगे।

ड्रोर अपने नीति–विज्ञान सम्बन्धी विश्लेषण में नीति–विज्ञानों के विकास से उत्पन्न प्रभावों की भी विस्तार से व्याख्या करते हैं। आपने नीति–विज्ञानों की वृद्धि के निम्न दूरगामी प्रभावों की विवेचना की है (क) नीति–विज्ञानों के ज्ञान का उपयोग मामलों पर विचार करने, विकल्पों की खोज करने तथा लक्ष्यों का स्पष्टीकरण करने में किया जा सकेगा। (ख) ये प्रकट मेगापॉलिसी निर्णयों को प्रोत्साहित करेगा जिनमें निम्न घटक शामिल हैं– नीतियों में स्वीकार्य नवाचारों की मात्रा, नीतियों में स्वीकार्य जोखिम (Risk) का विस्तार, व्यापक नीतियों और संकीर्ण मामला अभिमुखी नीतियों के बीच एक अधिमान्य मिश्रण (Preferable Mix) तथा आघात नीतियाँ (Shock Policies) (जो कि अस्थायी असाम्य के साथ सफलता का लक्ष्य रखती है।)। (ग) व्यापक मेगा–पॉलिसियों को प्रोत्साहित किया जाता है जिससे कि बिखरे हुए नीति मुद्दे, आधारभूत लक्ष्यों, परिस्थितियों और निर्देशों के वृहद् सन्दर्भ में लाये जा सकें। (घ) नीति–विज्ञान अतीत की नीतियों के व्यवस्थित मूल्यांकन द्वारा सीखने के लिए इच्छा रखेगा। (च) नीति–विज्ञान भविष्य के लिए बेहतर विचार पर अधिक ध्यान देगा। इसमें वे सभी संगठन, इकाइयाँ और स्टाफ शामिल होंगे जो सभी नीति विचारों में भविष्य की वैकल्पिक तस्वीरों का परीक्षण करेंगे। (छ) रचनात्मकता को प्रोत्साहित करने के लिए नीति–विज्ञान उन सभी व्यक्तियों और संगठनों का समर्थन करेगा जो साहसी सोच (Adventurous Thinking) तथा संगठित स्वप्न देखने (Organized Dreaming) से जुड़े हैं। यह उस समय प्राप्त हो सकेगा जब यह देखा जाए कि रचनात्मक मस्तिष्क समकालिन नीति–निर्माण प्रक्रिया में ही न उलझा रहे और उनको संगठनात्मक अनुरूपता दबावों से भी बचाना होगा। यह रचनात्मकता की उपयोगिता वृद्धिकारी उपायों और नवाचारी सोच को उत्तेजित करने वाले रसायनों का भी परीक्षण करेगा। (ज) नीति–विज्ञान उन नीति अनुसंधान संगठनों की बहुलता (Multiplicity) की स्थापना पर भी विचार करेंगे जो न केवल नीति सम्बन्धी प्रमुख मुद्दों पर ही काम करेंगे अपितु सरकार, विधायिका तथा व्यापक रूप से सारी जनता की मदद करेंगे। (झ) वर्तमान और उभरते हुए सामाजिक मुद्दों के समाधान जानने के लिए नीति–विज्ञान विस्तृत सामाजिक प्रयोगीकरण में विश्वास रखता है। इस प्रयोजन के लिए नई अनुसन्धान–प्ररचनाओं (डिजाइनों) की खोज करनी होगी। इस हेतु प्रयोगीकरण (Experimentation) के लिए आवश्यक राजनीतिक और सामाजिक माहौल (Climate) बनाना होगा। (ट) आनुवंशिक नीतियाँ (Genetic Policies) के माध्यम से मानवता की दूरगामी उन्नति की सम्भावनाओं को प्रोत्साहित करने के लिए संस्थागत व्यवस्थाएँ करनी होंगी। इसके लिए परिवार जैसी आधारभूत सामाजिक संस्था में परिवर्तन के प्रयास भी करने होंगे। (ठ) नीति–विज्ञान

यह मानता है कि आने वाले समय में व्यक्तिगत निर्णय–निर्माता को काम का मुख्य भार वहन करना होगा। इसलिए यह आवश्यक है कि एक–व्यक्ति–केन्द्रीय उच्च स्तरीय निर्णय–निर्माण को प्रोत्साहित किया जाये। समकालीन अनुसन्धान ने इस क्षेत्र को पूर्णतया नजर अंदाज किया है। इस अनुसन्धान में व्यक्तिगत प्रशासक के व्यक्तिगत गुणों, उसकी रुचियों (Tastes) तथा आवश्यकताओं का पर्याप्त ध्यान रखा जाएगा। (ड) नीति–विज्ञान राजनीतिज्ञों में सुधार लाने पर भी काफी ध्यान देगा क्योंकि यह मानता है कि शक्ति और ज्ञान के बीच एक नया पारस्परिक सम्बन्ध होता है। जब तक राजनीतिज्ञों को पर्याप्त ज्ञान नहीं होगा तब तक नीति–निर्माण में सुधार की कोई उम्मीद नहीं की जा सकती। (ढ) नीति–विज्ञान लोक नीति–निर्माण में नागरिक भागीदारी को बढ़ाने के प्रयास भी करेगा। निर्णय–निर्माण में जनता की भागीदारी बढ़ाने के लिए उन सभी आधुनिक उपकरणों का उपयोग किया जायेगा जो विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने प्रदान किए हैं जैसे– टेलीविजन, कम्प्यूटर आदि। (त) निर्णय–निर्माण में जनता की सहभागिता उनके ज्ञान की मात्रा (Quantum of Enlightenment) पर निर्भर करती है। इस चुनौती का सामना करने के लिए व्यस्क–शिक्षा की नई–डिजाइन (Nova-Design) की आवश्यकता होगी। ये डिजाइन जन संचार माध्यमों में सार्वजनिक मुद्दों के प्रस्तुतीकरण और विश्लेषण की नई तकनीकों का विकास करेंगी और जनमत तथा लोक नीति–निर्माण प्रक्रिया के बीच बेहतर संचार को बढ़ायेगी। प्रशिक्षण उपकरणों में एकल–अध्ययन (Case-Studies), नीति–खेल तथा व्यक्तिगत नीति–खोज कार्यक्रम शामिल हैं। इन कार्यक्रमों के माध्यम से नीति–निर्माण के लिए व्यस्क शिक्षा को सुदृढ़ बनाया जायेगा। नीति अभिमुखी शैक्षणिक गतिविधियों में सहभागिता के लिए प्रोत्साहन उपलब्ध कराये जाएंगे। इन्हीं क्षेत्रों में एक विस्तृत अनुसन्धान गतिविधि को भी प्रारम्भ करना होगा। (थ) नीति–विज्ञान बच्चों को भी एक सीमा तक निश्चित साँचे में ढालेंगे क्योंकि वे ही नीति–निर्माण भूमिकाओं के लिए भविष्य के नागरिक होंगे। इस प्रयोजन के लिए विद्यालयी शिक्षा को इस प्रकार ढ़ालना होगा कि यह बच्चों को सामाजिक गतिकी (Dynamics) के सभी प्रकारों की जानकारी दे सके जिससे उनमें सामाजिक परिवर्तन को सहने व सामना करने की क्षमता बढ़ सके। इस हेतु विद्यालयी पाठ्यक्रमों तथा पढ़ाई की विधियों में बदलाव लाना होगा। उदाहरण के लिए इतिहास जैसा विषय यह प्रकाश में लाये कि मानव के ऐतिहासिक उद्विकास में नीति–प्रक्रियाएँ और नीतिगत् मुद्दे किस प्रकार के थे। गणित जैसा विषय उस समस्या–समाधान उपागम के साथ पढ़ाया जाना चाहिए जिसमें प्रायिकता सिद्धान्त पर ज्यादा जोर दिया गया हो। कुछ ऐसे नए विषय विकसित किए जाने चाहिए जो नीति समस्याओं तथा नीति–विश्लेषणों की प्रकटता को उजागर करें। (द) नीति–विज्ञान को इस स्थिति से बचना होगा कि नीति–विज्ञान सम्बन्धी ज्ञान पर केवल कुछ ही लोगों का एकाधिकार हो जाये। इसके बजाय इसे व्यापक रूप से फैला होना चाहिए तथा सभी तक इसका संचार होना चाहिए यहाँ तक कि स्कूली बच्चों तक भी। (ध) नीति–विज्ञान राजनीति, जनता तथा शिक्षा में परिवर्तनों की उम्मीद करता है। यह नीति–निर्माण में वैज्ञानिकों के योगदान में बड़े परिवर्तन की अपेक्षा रखता है। इन वैज्ञानिकों को केवल अपने विशेषीकरण के क्षेत्रों पर ही केन्द्रीत नहीं होना चाहिए, अपितु अनुकरण करने योग्य मूल्यों पर निर्णय, लिए जाने वाले जोखिम पर निर्णय, समय प्राथमिकताओं (Time-Preferences) पर निर्णय आदि मामलों से भी सम्बन्धित होना चाहिए। नीति–विज्ञान के लिए अधिक उपयोगी होने के लिए वैज्ञानिकों को चाहिए कि वे अपने ज्ञान का आधार न केवल तथ्यों (Facts) को ही बनाये अपितु सामाजिक प्रासंगिकता तथा मनुष्य के भविष्य पर दूरगामी प्रभावों को भी आधार बनाना चाहिए।

इस प्रकार ड्रोर का मानना है कि नीति–विज्ञान से नीति–निर्माण और निर्णय–निर्माण की प्रक्रियाओं में सहायता मिलती है। हालाँकि ड्रोर इस बात को भी मानते हैं कि इसके विकास में अनेक कठिन चुनौतियाँ भी हैं।

येहेज्केल ड्रोर अपने नीति–विज्ञान सम्बन्धी विश्लेषण के दौरान लोक–नीति निर्माण के विभिन्न प्रतिमानों (Models) का प्ररीक्षण करते हैं तथा स्वयं का एक प्रतिमान प्रतिपादित करते हैं। ड्रोर ने निम्न प्रतिमानों की पहचान की है– (1) विशुद्ध तार्किकता प्रतिमानय (2) 'मितव्यवता' तार्किक प्रतिमान (3) क्रमबद्ध निर्णय प्रतिमान (4) अभिवृद्धिकारी परिवर्तन प्रतिमान (5) संतुष्टिकारक प्रतिमान तथा (6) तार्किकेत्तर प्रक्रिया प्रतिमान। ड्रोर इन

आदर्शात्मक या मानकीय (Normative) प्रतिमानों का परीक्षण करते हैं तथा पाते हैं कि वे अपेक्षाओं पर खरे नहीं उतरते। 'विशुद्ध तार्किकता प्रतिमान' (Pure-Rationality Mobel) की प्रमुख आलोचना यह है कि इसका प्रथम चरण, जिसमें परिचालनात्मक लक्ष्यों के एक पूर्ण स्रोत की स्थापना की जाती है, सामान्य लक्ष्यों का वर्णन करने की तुलना में 'राजनीतिक' रूप से अधिक मुश्किल है। इसका परिणाम यह होता है कि राजनीतिज्ञ यह काम प्रशासकों के लिए छोड़ देते हैं तथा ये प्रशासक दब्बू एव रुढ़िवादी होते हैं। इस प्रथम चरण की कठिनाइयों के साथ–साथ इस प्रतिमान के दूसरे चरण (जिसमें मूल्यों और संसाधनों की एक पूरी सूची बनाई जाती है) तथा तीसरे चरण (जिसमें वैकल्पिक नीतियों का एक पूर्ण सैट तैयार किया जाता है) में भी काफी कठिनाइयाँ आती हैं। इनके बाद के तीन चरण क्रमशः प्रत्येक विकल्प के लागत और लाभ के पूर्वानुमानों का स्पष्ट सैट तैयार करना, प्रत्येक विकल्प के लिए शुद्ध विभेदात्मक अपेक्षा (Net Differential Expectation) का हिसाब लगाना और अन्त में सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन करना भी काफी कठिनाइयों से भरे हैं। चौथा, पाँचवा तथा छठा चरण व्यापार नीति की कतिपय गुणात्मक समस्याओं के सम्बन्ध में ही लागू किये जा सकते हैं। संक्षेप में, 'विशुद्ध–तार्किकता प्रतिमान' के निम्न चरण हैं

I : परिचालनात्मक लक्ष्यों के सैट की स्थापना करना
↓
II : मूल्यों तथा संसाधनों की सूची तैयार करना
↓
III : वैकल्पिक नीतियों का सैट तैयार करना
↓
IV : विकल्पों के लागत-लाभों के पूर्वानुमानों का सैट तैयार करना
↓
V : विकल्पों के लिए विभेदात्मक अपेक्षा की गणना करना
↓
VI : सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चुनाव

इस प्रकार ड्रोर उपर्युक्त समस्त चरणों में आने वाली कठिनाइयों और समस्याओं की ओर ध्यान खींचते हैं तथा इस प्रतिमान को अस्वीकार करते हैं।

नीति–निर्माण सम्बन्धी दूसरा प्रतिमान जिसे 'मितव्ययता तार्किक प्रतिमान' (Economically Rational Model) कहा जाता है, कि यह कहकर आलोचना की जाती है कि यह भी 'विशुद्ध तार्किकता प्रतिमान' के समान ही है। इसमें सर्वाधिक ध्यान मितव्ययता पर दिया जाता है। कहने का आशय यह है कि 'विशुद्ध तार्किकता प्रतिमान' के चरणों का अनुसरण इस प्रतिमान में भी किया जाता है। अन्तर केवल इतना है कि इसमें सर्वाधिक मितव्ययता वाले विकल्प का चयन किया जाता है। 'क्रमिक निर्णय प्रतिमान' (Sequential Decision Model) में दो विकल्पों की तुलना की जाती है कि दोनों में से कौनसा श्रेष्ठ है। इन दो विकल्पों में से तुलना के आधार पर श्रेष्ठ विकल्प का चुनाव किया जाता है। इस प्रतिमान की भी अपनी सीमाएँ हैं। 'अभिवृद्धिकारी प्रतिमान' (Incremental Model) की भी काफी आलोचना हुई है। यह प्रतिमान उन्हीं परिस्थितियों में सफल रहता है जबकि वर्तमान परिस्थितियों के सन्दर्भ में भविष्य हास्यास्पद लगे। यह प्रतिमान केवल तभी तक वास्तविक व्यवहार से मेल खाता है जहाँ तक कि एक सामान्य नीति–निर्माता भविष्य को जानने एवं तीव्र परिवर्तनों से उपजे मतभेदों को जानने के लिए अतीत पर निर्भर रहता है। इस प्रकार यह प्रतिमान भी कमियों से घिरा है। अन्य दो प्रतिमानों– सन्तुष्टिकारक प्रतिमान (Satisficing Model) तथा तार्किकेक्तर प्रतिमान (Extra-Rational Model) भी आलोचनाओं से परे नहीं हैं। इन सभी मानकीय प्रतिमानों की कमियों के कारण इनकी सफलता सीमित ही रहती है।

उपर्युक्त मानकीय प्रतिमानों की सीमाओं को दृष्टिगत रखते हुए येहेज्केल ड्रोर एक 'सर्वोत्तम प्रतिमान' (Optimal Model) का सुझाव प्रस्तुत करते हैं । इस 'सर्वोत्तम प्रतिमान' में जहाँ एक ओर विभिन्न प्रतिमानों के सामर्थ्य को एकीकृत किया जा सकेगा वहीं दूसरी ओर उन प्रतिमानों की कमजोरियों से भी बचा जा सकेगा। ड्रोर इस बात को स्वीकार करते हैं कि उनका 'सर्वोत्तम प्रतिमान' मितव्ययता–तार्किक प्रतिमान तथा 'तार्किकेत्त्क्तर प्रतिमान' का संयोजन प्रस्तुत करता है। ड्रोर के 'सर्वोत्तम प्रतिमान' की कतिपय विशेषताएँ इस प्रकार हैं इस प्रतिमान की प्रथम् विशेषता यह है कि 'सर्वोत्तम प्रतिमान' गुणात्मक प्रकृति का है, न कि परिमाणात्मक प्रकृति का। दूसरी विशेषता यह है कि इस प्रतिमान में तार्किक और तार्किकेत्तर दोनों ही प्रकार के घटक शामिल हैं। तीसरे, यह प्रतिमान मितव्ययता–तार्किक के लिए आधारभूत तर्क रखता है। चौथे, यह प्रतिमान 'मेटा–पॉलिसी' निर्माण से सम्बन्ध रखता है। तथा पाँचवा, यह प्रतिमान 'फीडबैक' पर काफी ध्यान देता है। डोर के 'सर्वोत्तम प्रतिमान' के तीन क्रमबद्ध चरण हैं– पहला, मेटा–पॉलिसी निर्माण, दूसरा, पॉलिसी निर्माण तथा तीसरा, पोस्ट–पॉलिसी निर्माण। ये तीनों चरण संचार और फीडबैक के चौनलों के माध्यम से एक–दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं। ड्रोर ने इन समस्त चरणों के अन्तर्गत अनेक अवस्थाओं (Phases) की पहचान की है। ड्रोर ने 'मेटा–पॉलिसी' निर्माण के चरण की निम्न अवस्थाएँ बतायी हैं– (क) मूल्य–प्रसंस्करण (Processing Values) (ख) यथार्थता–प्रसंस्करण (Processing Reality) (ग) समस्या–प्रसंस्करण (Processing Problems) (घ) संसाधनों का सर्वेक्षण, प्रसंस्करण तथा विकास करना (च) नीति–निर्माण प्रणाली की डिजाइन तैयार करना, मूल्यांकन करना तथा पुनर्डिजाइनिंग करना (छ) समस्याओं, मूल्यों तथा संसाधनों का आवंटन करना तथा (ज) नीति–निर्माण की रणनीति (Strategy) निर्धारित करना। उपर्युक्त सात अवस्थाओं से गुजरने के पश्चात् 'नीति–निर्माण' का चरण आता है। ड्रोर ने 'नीति निर्माण' चरण की निम्न अवस्थाएँ बताई हैं– (क) संसाधनों का उप–आवण्टन करना (ख) प्राथमिकताओं के क्रम में परिचालनात्मक लक्ष्यों की स्थापना करना (ग) अन्य महत्त्वपूर्ण मूल्यों का एक सैट स्थापित करना (घ) प्रमुख वैकल्पिक नीतियों का एक सैट तैयार करना (च) विकल्पों के लाभों और लागतों के विश्वसनीय–पूर्वानुमान तैयार करना (छ) पूर्वानुमानित लाभों और सर्वश्रेष्ठ की तुलना करना तथा (ज) सर्वश्रेष्ठ विकल्पों के लाभों और लागतों (Benefits and Costs) का मूल्यांकन करना और यह तय करना कि वे अच्छे हैं या नहीं। नीति–निर्माण के 'सर्वोत्तम प्रतिमान' के अन्तिम चरण 'पोस्ट–पॉलिसी निर्माण' की निम्न अवस्थाएँ हैं– (क) नीति के क्रियान्वयन को अभिप्रेरित करना (ख) नीति को क्रियान्वित करना तथा (ग) क्रियान्वयन के पश्चात् नीति–निर्माण का मूल्यांकन करना। ड्रोर मानते हैं कि उपर्युक्त 17 अवस्थाएँ संचार और फीडबैक चौनलों के जरिये एक–दूसरे से घनिष्ठता से जुड़ी हैं। ड्रोर इसे अपने प्रतिमान की एक अवस्था मानते हैं।

ड्रोर का मानना है कि नीति–विज्ञान के महत्त्व को देखते हुए यह आवश्यक है कि इस क्षेत्र में विशेषज्ञता हासिल करके नीति–वैज्ञानिक बना जा सकता है। अपने लम्बे अनुभव और नीति निर्माण में गहन रुचि के आधार पर आपने नीति–वैज्ञानिकों के लिए 9 आवश्यक बातें बताई है ऐतिहासिक और तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य प्राप्त करना नीति–निर्माण से सम्बन्धित वास्तविकताओं को जानना, अपने समाज का गहन अध्ययन करना, बड़े नीति सम्बन्धी मुद्दों को स्वीकारना, 'मेटा–पॉलिसी' निर्माण की ओर बढ़ना, ज्ञान और क्रिया का एक उचित दर्शन बनाना, पद्धतिशास्त्र का विस्तार करना, बहु–विषयी आधार बनाना तथा अपनी पैशेगत नैतिकता के प्रति सजग रहना। ड्रोर का मानना है कि यह सब आसान नहीं है। अतः आपने उन लोगों के लिए 5 परिचालनात्मक सिफारिशें प्रस्तुत की हैं जो नीति–वैज्ञानिक बनना चाहते हैं। ये सिफारिशें उनको सहायता देंगी तथा साथ ही उनका मार्गदर्शन भी करेंगी। ये सिफारिशें (सुझाव) निम्न हैं– खूब और व्यापक रूप से पढ़ना चाहिए। विभिन्न प्रकार के मामलों पर कार्य करना चाहिए विभिन्न कार्य स्थलों का अनुभव लेना चाहिए कुछ साल किसी दूसरी संस्कृति में बिताने चाहिए तथा किसी एक प्रमुख भाषा का अध्ययन करना चाहिए। ड्रोर का दावा है कि उपर्युक्त सूची में बतायी गई बातों पर अमल करने के पश्चात् नीति–वैज्ञानिकों को ओर अधिक कठिन आवश्यकताओं का सामना करने के लिए तैयार

रहना चाहिए। उनके मत में सन्तुष्ट हो जाना गैर–जिम्मेदाराना है और स्वयं या दूसरों को सन्तुष्ट दिखाना लापरवाहीपूर्ण है।

नीति–विज्ञान : बाधाएँ (Policy Science : Barriers) : अपनी पुस्तकों पब्लिक पॉलिसी–मैकिंग रि–एक्सामिंड तथा 'डिजाइन फॉर पॉलिसी साइन्सेज' में डोर ने नीति–विज्ञान के विकास के मार्ग में आने वाली बाधाओं और कठिनाइयों की विस्तार से चर्चा की है। जो निम्नलिखित है :– (क) नीति–निर्माण की प्रक्रिया में सहायता करने वाले विज्ञान अर्थात् नीति–विज्ञान की योग्यता में विश्वास की कमी एक प्रमुख बाधा है। इसे एक अर्द्ध रहस्यवादी तरीके वाली एक कला माना जाता है जिस पर अनुभवी राजनीतिज्ञों तथा निर्णयकर्ताओं का एकाधिकार रहता है। (ख) ऐसी संस्थाओं ओर विश्वासों के प्रति निषेधात्मक (Taboos) और कर्मकाण्डीय लगाव जिनका महत्त्व उस स्थिति में कम हो सकता है जब नीति–विज्ञान विकसित हो जाएँगे। अर्थात् नीति–विज्ञान का महत्त्व बढ़ जाने से कुछ परम्परागत संस्थाओं और विश्वासों की साख कम हो सकती है। यह भय नीति–विज्ञान के विकास की एक बाधा है। (ग) नीति–विज्ञान के विकास के मार्ग में एक बड़ी बाधा के रूप में वैज्ञानिकों और नीति निर्माताओं के बीच पाई जाने वाली सामाजिक–सांस्कृतिक दूरियाँ हैं। इन दूरियों के कारण इनमें समन्वय का अभाव दृष्टिगोचर होता है। (घ) समान रूप से विख्यात वैज्ञानिकों द्वारा परस्पर विरोधाभासी निष्कर्ष निकालने से उपजी दुविधा की स्थिति के कारण वैज्ञानिक योगदान को समग्र रूप से नजर अंदाज करने की प्रकृति पनपती है। तथा (च) नीति–निर्माण को वैज्ञानिकों और विज्ञान के योगदानों का बुरा अनुभव भी नीति–विज्ञान के विकास की एक बाधा है।

उपर्युक्त बाधाओं के अलावा ड्रोर संयुक्त राज्य अमेरिका तथा अधिकांश पश्चिमी राष्ट्रों में नीति–विज्ञान के विकास में बाधक दो मुख्य परस्पर सम्बन्धित सामाजिक–सांस्कृतिक कारकों की पहचान करते हैं। इनमें पहला है, विज्ञान की नीति–निर्माण सम्बन्धी भूमिकाओं का भय तथा दूसरा है, एक बौद्धिकता–विरोधी तथा तार्किक–विरोधी आन्दोलन की शुरुआत हो जाना। यह भय प्रकट किया जा रहा है कि वैज्ञानिक इस क्षेत्र में राज कर लेगें ओर एक नया 'विज्ञानशाही' (Scientocracy) वर्ग बन जाएगा। ड्रोर मानते हैं कि नीति–विज्ञान के विकास में एक अन्य बाधा विश्वविद्यालयों की रुढ़ि–वादिता है। विश्वविद्यालयों में वैधानिक–उपागम (Juridical-Approach) ही हावी रहती है तथा उच्चतर सामाजिक विज्ञान का अभाव रहता है। एक आदर्शवादी विश्वविद्यालय, जहाँ आमूल–चूल परिवर्तनवादी विचारधाराओं के प्रतिनिधियों हेतु अकादमिक परिस्थिति की माँग के लिए अकादमिक बहुलतावादिता का उपयोग किया जाता है, भी एक बाधा है। अधिकांश आमूल–चूल परिवर्तनवादी विचारधाराएँ नीति सम्बन्धी अध्ययनों और अनुसंधान को अस्वीकार करती है क्योंकि वे मानती हैं कि ये भ्रष्ट प्रतिष्ठानों (व्यवस्था) की सेवक होते हैं जिनके कारण आवश्यक क्रान्ति में देरी आती है। ड्रौर यह भी मानते हैं कि नीति–विज्ञान के विकास में एक बाधा ऐसे लोगों की कमी है जो नीति सम्बन्धी शोधकार्यों में लग सकें।

आलोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Evaluation) : येहेज्केल ड्रोर का 'नीति–विज्ञान' को अध्ययन के एक पृथक् क्षेत्र के रूप में स्थापित करने का प्रयास निःसन्देह काफी साहसिक और नवाचारपूर्ण है। नीति–विज्ञान का उपयोग समस्याओं को समुचित तरीके से सुलझाने में किया जा सकता है। हालाँकि ड्रोर के इस प्रयास की काफी आलोचनाएँ भी की गयी है। ड्रोर का नीति–विज्ञान सम्बन्धी उपागम को बहुत ही कम व्यवहारिक माना जाता है। इसकी परिचालनात्मक उपयोगिता नगण्य है। नीति–निर्माण की प्रक्रिया में व्यवहारिकता का होना अति आवश्यक है। साथ ही ड्रोर की यह कहकर आलोचना की जाती है कि वह एक तरफ तो विशुद्ध अकादमिक उपागम की आलोचना करते हैं तथा वहीं दूसरी तरफ अपने नीति विज्ञान के लिए जो तर्क दिए हैं वे भी पूर्णतयाः अकादमिक ही हैं। अपनी दोहरी बात के कारण डोर को आलोचनाओं का शिकार होना पड़ा। ड्रोर ने अपने विश्लेषण में सामाजिक निर्देशन प्रणाली पर विस्तार से लिखा है तथा मानवीय क्रियाओं पर नियन्त्रण के स्तरों की विवेचना की है। नियन्त्रण प्रणाली पर अनेक विचारों को पूर्ण नहीं माना जा सकता। ड्रोर यह भी स्पष्ट नहीं कर पाएँ हैं कि लोक नीति निर्माण में सुधार लाने और सामाजिक निर्देशन प्रणाली में क्या सह–सम्बन्ध है।

ड्रोर ने नीति–विश्लेषण में सुधार लाने की दृष्टि से तार्किकेत्तर तत्त्वों पर काफी जोर दिया है। रचनात्मकता, अन्तः प्रज्ञा, करिश्मा, मूल्य–निर्णय आदि तार्किकेत्तर तत्त्व नीति–विश्लेषण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अपने विश्लेषण में आपने अतार्किक तत्त्वों जैसे गहन अभिप्रेरणा के महत्त्व को भी स्वीकारा है। तार्किक, तार्किकेत्तर तथा अतार्किक तत्त्वों के इतने व्यापक विस्तार के कारण ड्रोर को यदि 'यूटोपियन' कहा जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। उनके विचार इतने अमूर्त हैं कि उनकी व्यवहारिक उपयोगिता काफी सीमित है। फिर ड्रोर ने पश्चिमी समाजों और इजराइल के अपने अनुभव के आधार पर ही नीति–विज्ञान की विवेचना की है। एक नए व्यापक विषय की स्थापना के लिए केवल कुछ राष्ट्रों के विश्लेषण के आधार पर ही निष्कर्ष निकालना उचित नहीं जान पड़ता है। समाजवादी और तीसरी दुनियाँ के देशों के अनुभवों को नजर अंदाज करना भारी भूल होगी। ड्रोर के विचारों में अस्पष्टता और दोहराव भी पाया जाता है क्योंकि उन्होंने बहुत सी बातों को नजर अंदाज कर दिया और कुछ बातों को बार–बार अनावश्यक रूप से दोहराया। सम्भवतः ड्रोर अति–उत्साह में थे और नीति–विज्ञान के प्रति अत्यधिक प्रतिबद्धता के कारण उन्होंने उपर्युक्त त्रुटियाँ की। नीति–निर्माण के चरणों का उल्लेख करते हुए ड्रोर ने अत्यधिक जटिलता धारण कर ली। 'मेटा–पॉलिसी' निर्माण चरण के दौरान उन्होंने कई महत्त्वपूर्ण तथ्यों जैसे– सचेत संरचनात्मक परिवर्तन, नीति पर उनके प्रभाव आदि को वे स्पष्ट नहीं कर पाए। वस्तुतः ड्रोर का नीति–विज्ञान कोई पृथक् विषय नहीं बल्कि नीति–विश्लेषण के ही विविध आयाम हैं।

भले ही ड्रोर के 'नीति–विज्ञान' की स्थापना के आग्रह की आलोचनाएँ की जाती हों, उनके इस साहसिक प्रयास को सामान्य प्रयास नहीं कहा जा सकता और इसके महत्त्व को किसी भी रूप में कम करके नहीं आंका जा सकता। नीति–निर्माण की प्रक्रिया को सुधारने में नीति विज्ञान के महत्त्व को निर्विवाद रूप से स्वीकार किया गया है। आज के समय में जब नीति निर्माण का कार्य काफी तकनीति, जटिल व महत्त्वपूर्ण हो गया है, ड्रोर का 'नीति–विज्ञान' काफी प्रासंगिकता रखता है। सामाजिक विज्ञानों के अध्येताओं के लिए 'नीति–विज्ञान' काफी अकादमिक प्रासंगिकता रखता है। नीति–विज्ञान की मदद से ही उन कृत्रिम दीवारों को तोड़ा जा सकता है जो ज्ञान को अलग–अलग भागों में बाँटती है। इनकी मदद से मैक्रो–नियन्त्रण प्रणाली और विशेषकर लोक नीति–प्रणालियों में सुधार किया जा सकता है। विशुद्ध और प्रयुक्त अनुसन्धान के बीच जो खाई है उसे नीति–विज्ञान की मदद से पाटा जा सकता है। नीति–विज्ञान का ज्ञान मामलों पर विचार करने, विकल्पों की खोज करने तथा लक्ष्यों के स्पष्टीकरण में प्रयुक्त किया जा सकता है। इसकी सहायता से 'राजनीतिज्ञों' में सुधार किया जा सकता है क्योंकि यह शक्ति और ज्ञान के बीच श्रेष्ठ सम्बन्ध स्थापित करता है। नीति–निर्माण में नागरिकों की सहभागिता बढ़ाने में भी नीति–विज्ञान सहायक होगा। नीति–विज्ञान का ज्ञान भविष्य के लिए श्रेष्ठ नीति–निर्माताओं का निर्माण भी करता है। निःसन्देह येहेज्केल ड्रोर का यह प्रयास नवाचारी, साहसिक तथा प्रासंगिक है।

अध्याय – 12

डवाइड वाल्डो

(Dwight Waldo)

डवाइड वाल्डो लोक प्रशासन के इतिहास तथा सिद्धांत से किसी भी अन्य चिन्तक की अपेक्षा नजदीक से जुड़े हुए हैं। एक कालक्रमिक, एक दार्शनिक, इतिहासकार और चिन्तक तथा लोक प्रशासन के जाने–माने व्यक्ति के रूप में, लोक प्रशासन विषय में उनका शानदार योगदान रहा हैं। वे केवल प्रशासनिक अध्ययन तथा सीखने में रूचि नहीं रखते थे बल्कि सामाजिक विश्व के बड़े पहलूओं के स्वरूप तथा सरकार के प्रशासनिक केन्द्रों को आकार देने में भी विश्वास करते थें। बीसवीं शताब्दी के उतरार्द्ध में लोक प्रशासन के अध्ययन तथा सिद्धांतो पर डवाइड वाल्डो महत्वपूर्ण प्रभाव रखते हैं। कोरोल तथा फेडरिक्सन के अनुसार – लोक प्रशासन में आज जो पढ़ा जा रहा है वह डवाइड वाल्डो द्वारा बताया गया है। लोक प्रशासन के अनुसन्धान कार्य भी डवाइड वाल्डो द्वारा बताए गए हैं। लोक प्रशासन के आज के प्रयोग भी डवाइड वाल्डो द्वारा बताए गए हैं।'' वह लोक प्रशासन के पाठ्यक्रम तथा शिक्षा शास्त्र पर प्रभाव रखते है तथा इस विषय के अध्यापन क्षेत्र से जुड़े लोगों की समझ को भी प्रभावित करते हैं। उनके द्वारा लोकतांत्रिक सरकारो में नौकरशाही के विभिन्न मानक तय किए गए। साथ ही उनके द्वारा लेखन की गुणवता, प्रदर्शन तथा लोक प्रशासन विषय को ज्ञान से समझ ओर ले जाने के लिए भी मानक तय किए हैं।

जीवन परिचय और कार्य :– किलफपोर्ड डवाइड वाल्डो (1913–2000) का जन्म अमेरिका के डेविड नेब्रास्का में हुआ। उच्च स्कूल के बाद वाल्डो ने 1935 में पेरू के Wesleyan College से स्नातक उतीर्ण की। इसके बाद उन्होंने अध्यापक की नौकरी के लिए प्रयास किया परन्तु महामन्दी के कारण वह असफल रहे। फिर उन्होने लिंकन में स्थित नेब्रास्का विश्वविद्यालय में पत्र पढ़ने का कार्य किया तथा साथ ही राजनीतिक विज्ञान विषय के स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में दाखिला लिया और 1937 में यह उपाधि प्राप्त की। इसके बाद उन्होने येल विश्वविद्यालय में एक निदेशक के रूप में कार्य किया तथा 1942 में यहाँ सें पी. एच. डी. की उपाधि प्राप्त की। शुरूआत में उनको शोध कार्य ''Theories of experetise in the democratic tradition'' पर था परन्तु समय के साथ इसकी महता कम हो गई और उनका शोध कार्य ''Theortical aspects of the American literature in Public Administration" शीर्षक से पुर्ण हुआ।

वाल्डो, एक अनैच्छिक नौकरशाह ने वाशिंगटन डी.सी. के बजट ब्यूरो के मूल्य प्रशासनिक कार्यालय में 1942–44 एक मूल्य आकलन कर्ता के रूप में कार्य किया तथा बाद में वे 1944–46 प्रशासनिक आकलनकर्ता रहे। इन चार वर्षों में उन्होंने लोक प्रशासन पर अंर्तदृष्टि तैयार की तथा इसी ने उनके भविष्य में किए जाने वाले कार्यों के लिए नींव का काम किया। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद वाल्डो ने वर्कले स्थित कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में सहायक प्रोफेसर के रूप में कार्य किया। वाल्डो द्वारा लोक मामलो पर एक स्नातक स्कूल स्थापित करने में मदद की गई तथा University Bureau of Public Administration को institutes of Government Studies में बदलने में योगदान दिया तथा इसमें 1958 से 1967 तक निदेशक के रूप में सेवा दी। इसके बाद वे इटली में वहां के प्रशासन को सुधारने के कार्यक्रम पर गए और यहां उन्हें अनुभव हुआ कि प्रशासन के सिद्धांतो की कुछ सीमाएँ हैं। 1967 में वे Syracuse University में राजनीतिक विज्ञान के प्रोफेसर बने। 1979 में वे सेवानिवृत हुए तथा अगले दो वर्ष उन्होंने Smithsonian Institute के वुडरो विल्सन केन्द्र में बिताए। वह निरन्तर कार्य करते रहे तथा बहुत से राष्ट्रीय तथा अर्न्तराष्ट्रीय संगठनों के सदस्य रहे। 27 अक्टुबर 2000 को 87 वर्ष की आयु में उनका निधन हुआ। वाल्डो के द्वारा

बहुत सी पुस्तकें, निबंध तथा लेख लिखे गए। Administrative State के प्रकाशन जो कि उनके शोध कार्य का ही रूपान्तरण था ने उन्हें लोक प्रशासन विषय का एक महत्वपूर्ण व्यक्ति बना दिया। उनके अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन निम्नलिखित हैं – The Study of Public Administration (1955), The Novelist on Organisation and Administration (1968), Public Administration in a Time of Turbulence (1971), Democracy, Bureaucracy and Hypocrisy (1977), The Enterprise of Public Adm. (1980), Bureaucracy and Demooccracy – A strained Relationship unpublished manuscript with franc marini, 1999) । वाल्डो के लेखन कार्य लोक प्रशासन विषय को अंर्तदृष्टि, आलोचना, विचार, उसका विकास तथा उसके भविष्य को दिशा प्रदान करते है। उनके द्वारा लोक प्रशासन के बहुत से छुपे हुए उपागमों को उजागर किया गया। किन्तु वाल्डो सटीक उत्तर नहीं देते, उनके द्वारा उठाए गए प्रश्न तथा अंर्तदृष्टि हमें उपलब्ध विकल्पों में से सही चयन की सूचना प्रदान करते हैं।

वाल्डो American Society for Public Administration और इसके Comparative Administrative Group में सक्रिय थे तथा उन्होनें Society's Council (1963-66) की सेवा की। उनके द्वारा The Council and the executive committee of the American Political Science Association में 1957–60 कार्य किया गया तथा 1961 में वे इसके Vice – President बने। 1977–78 में वे The National Association of Schools of Public Affairs and Administrtion के President भी रहे। वे 1959–63 तक American Political Science Review एवं 1958–66, Public Administrative Review के संपादक मंडल में रहे तथा 1966–67 में इसके मुख्य संपादक के रूप में कार्य किया। इतने लंबे संपादन कार्य के दौरान वाल्डो ने लोक प्रशासन को एक स्वायत क्षेत्र बताया। वे International Review of Administrative Sciences के संपादक मंडल के सदस्य भी रहे। उनके जीवन भर के कार्यो के सम्मान में American Society of Public Administration के द्वारा अपने सर्वोच्च पुरस्कार का नाम 1979 मे डवाइड वाल्डो पुरस्कार रख दिया गया। 1987 में वाल्डो को John Gaur Lecture Award भी प्राप्त हुआ।

The Administrative State (प्रशासनिक राज्य) :- Waldo (वाल्डो) ने 1940 में प्रशासन एक राजनीतिक उपागम के रूप में लोक प्रशासन पर दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। प्रारम्भ में उनके कार्यो की प्रतिक्रिया शास्त्रीय उपागम पर निर्भर थी। परन्तु बाद में उनका लेखन व्यवहारात्मक उपागम पर रहा। वाल्डो ने राजनीति और नीति कार्यो को प्रशासन से अलग नहीं माना। साथ ही उन्होने कहा कि तथ्यों को मूल्यों से अलग नहीं किया जा सकता। इसीलिए प्रशासन कला तथा विज्ञान दोनों है, शायद विज्ञान की अपेक्षा कला अधिक है। तब प्रशासन को राजनीति से अलग नहीं किया जा सकता। वाल्डो अनुसार लोक प्रशासन निजी प्रशासन से भिन्न है, और यह अन्तर राजनीतिक पर्यावरण से है जिसमें लोक प्रशासकों को कार्य करना होता है। उनके अनुसार हमारा उद्देश्य प्रशासकों को नीतियों और राजनीतिक मामलों से अलग करना नहीं बल्कि राजनीति ओर प्रशासन ज्ञान क्षेत्र में सहयोग बढ़ाना है जिसके द्वारा प्रशासनिक अधिकारीयों की सृजनात्मक क्षमता तथा योगदान का लाभ प्राप्त किया जा सके। वाल्डो अनुसार लोक प्रशासन सांसारिक वस्तुओं से संबंधित पुर्व निर्धारित प्रयासों का एक निम्न कार्य है जैसे मुख्य द्वारों की संख्या को गिनना। किन्तु वह सोचते थे है कि लोक प्रशासन तथा राजनीतिक सिद्धांत एक दूसरे की सहूलियत के लिए है, राजनीतिक सिद्धांत का एक पहलू तो लोक प्रशासन से कार्य लेना तथा दूसरा पहलू अपनी उपयोगिता तथा संबंधता को बनाए रखना है। वाल्डो का शोध कार्य बाद में 1948 में The Administrative State नाम से प्रकाशित हुआ। इन आठ वर्षों के दौरान लोक प्रशासन के बारे में वाल्डों के विचार तथा अभिवृति निरन्तर परिवर्तित होते रहे। उन्होंने अपने नौकरशाही अनुभवों से सीखा तथा अपने शोध कार्य को प्रकाशन से पहले संशोधित किया। हालाँकि वाल्डो स्वयं को नौकरशाह के रूप में असफल पाते हैं, उनके प्रशासनिक अनुभव पुन : समाजीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ करते है तथा जिसके परिणामस्वरूप वे स्वयं की पहचान राजनीतिक सिद्धांत की अपेक्षा लोक प्रशासन से पाते हैं। उन्होने सरकारी सेवा के दौरान प्रशासनक की समस्याओं को देखा और प्रशासको से सहानुभूति हुई तथा कहा कि किसी को भी लोक प्रशासन के अनुभवों के बिना राजनीतिक सिद्धांत पढ़ाने की अनुमति नहीं देनी चाहिए।

वाल्डो ने चार केन्द्रीय विचार दिए। पहला लोकतंत्र तथा नौकरशाही में एक स्वाभाविक खिंचाव है जो लोक सेवकों को लोकतांत्रिक सिद्धांतो की सुरक्षा के लिए बाधा करता है। दूसरा राजनीति – प्रशासन द्वन्द झूठ है लोक सेवक राजनीतिक पद पर बैठे है क्योंकि चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा बनाई गई नीतियों को लागू करना होता है। तीसरा लोक सेवक ही वैज्ञानिक प्रबन्ध आन्दोलन द्वारा मांग की जाने वाली आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं तथा सरकार तक जनता की पहुँच निश्चित करते हैं। चौथा, सरकार किसी उधम की तरह नहीं चलती। संविधान का सम्मान तथा अन्य लोकतांत्रिक संस्थाएं सरकार को एक इकाई के रूप में प्रबन्ध करने में अधिक चुनौतीपूर्ण बनाती है जबकि निजी क्षेत्र के संगठनो में ऐसा नहीं होता। वाल्डो ने लोक प्रशासन को विज्ञान बनाने की संभावनाओं को स्वीकार नहीं किया, प्रशासन के सिद्धांतो के अस्तित्व पर शंका की, संगठन के एकीकृत सिद्धांत पर प्रश्न उठाए, राजनीति और प्रशासन को भिन्न मानने वालों में अविश्वास प्रकट किया, तथा लोक प्रशासन क्षेत्र की एक परिभाषा पर पहुँचने को निराशा माना। इसके अतिरिक्त उन्होने कहा किसी भी सभ्यता का विकास प्रशासन की कार्य क्षमता पर निर्भर करता है। उनकी रूचि समाजशास्त्र, उद्यमी प्रशासन तथा सांगठतिक सिद्धांतो में थी। उन्होने पाया कि ये विषय राजनीति विज्ञान की अपेक्षा लोक प्रशासन के लिए अधिक सार्थक हैं। वे लोक प्रशासन को लोकतांत्रिक मूल्यों से जोड़ने वाले एक महान चिन्तक थे।

लोक प्रशासन – इतिहास : वाल्डो के अनुसार लोक प्रशासन मानव सभ्यता के उदय के समय से ही एक क्षेत्र ओर अभ्यास के रूप में रहा है। प्रशासन और सभ्यता हमेशा से साथ रहे है तथा वे एक दूसरे का पोषण करते रहे हैं। दोनों ही मानव उन्नति के आन्तरिक भाग है। यदि हम वाल्डो के सबसे प्रभावशाली कार्य की बात करें तो संभवत वह यहीं हे कि उन्होंने प्रशासन को इतिहास से जोड़ा और उन्होंने इसकी एक मजबूत समझ पैदा की कि "What is Past in Prologue". वाल्डो का विश्वास था कि इतिहास से बहुत कुछ सीखने योग्य है और उन्होंने इस बात पर खेद प्रकट किया कि लोक प्रशासन का ज्यादातर साहित्य प्रकृति से इतिहास विरोधी है। वाल्डी ने जोर दिया कि इतिहास विभिन्न रास्तो और कभी न खत्म होने वाले प्रसंगो के माध्यम से स्वयं को दोहराता है और जो लोग अपने अतीत को अनदेखा करते है अपनी अंर्तदृष्टि, परिकल्पना और वैज्ञानिक निर्णय लेने के एक महत्वपूर्ण स्त्रोत को खो देते हैं। इतिहास के एक महत्वपूर्ण अध्याय पर वह कहते हैं कि प्रशासन की तकनीकें राजनीति–सरकारी विकास के केन्द्र में है। इसके अतिरिक्त वह सरकार व प्रशासन को एक समान मानते है। वाल्डो के अनुसार प्रशासन सभ्यता के लिए नींव का कार्य करता है तथा इसके विकास के लिए आधार प्रदान करता है। इस प्रकार सरकार, प्रशासन तथा सभ्यता एक दूसरे से जुड़े हुए हैं।

वाल्डो के विचारानुसार :– प्रकृति के राज्य में सरकार और उसका प्रशसन केवल कृत्रिम रूप से थोपा गया है अन्यथा यह निर्मल एवं समृद्ध है। सरकारें अब बाजार और निजी उद्यम स्थापित करने वाली संस्थाएं बन गई हैं तथा उन्होंने अपने रचनात्मक, पालन–पोषण करने वाली तथा सतत भूमिका को नजर अंदाज कर दिया है। वाल्डो ने पाया कि सरकारे हमेशा थोडी उत्पीड़क होती है और कभी – कभी ज्यादा भी इसलिए सरकारों को क्या करना चाहिए और क्या नहीं इसमें बहुत अनाड़ीपन पाया जाता है। 1940 के दशक में लोक प्रशासन के शास्त्रीय उपागम के सामने चुनौतीया आने लगी। वाल्डो के शब्दो में पाखंड ने रूढ़िवाद का स्थान ले लिया "Heterodoxy replaced orthodoxy" वाल्डो कहते हैं कि लोक प्रशासन के क्षेत्र की परिप्रेक्ष्य के अनुसार विभिन्न विशेषताएँ रखता है जिसमें शास्त्रीय उपागम इन नए परिप्रेक्ष्यों, संसाधनो तथा फैलावों के अनुसार अपना परित्याग नहीं कर रहा। इस प्रक्रिया के दौरान शास्त्रीय उपागम को कई दार्शनिको और विचारकों ने नकार दिया तथा कई भूमिगत हो गए। इसके बाद उद्यमशील मानसीकता का प्रभाव कम हुआ मौलिक कानून का विचार, उच्च नैतिक आज्ञाओं की तरह बढ़ा तथा प्रगति की धारणा के प्रति संदेह बढ़ने लगा। यद्यपि प्रयोजनवाद अब शौकीन मिजाज दर्शन बन पतन की ओर अग्रसर हुआ।

A Classical Approach एक शास्त्रीय उपागम (दृष्टिकोण) :– वाल्डो जोर देकर कहते हे कि लोक प्रशासन 20वीं सदी में आरम्भ नहीं हुआ। प्रशासनिक तकनीकों का प्रवाह शताब्दीयों में विकसित हुआ है न कि आधुनिक समय में, इसके विकास में लोक विभाग ने सबसे महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वाल्डो 19वीं शताब्दी के अंतिम तथा 20वीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों को लोक प्रशासन की स्व–जागृति के विकास का श्रेय देते है, जो कि मानव इतिहास का एक नया पैमाना था।

वाल्डो अमेरिका को प्रशासनिक अध्ययनों का एक महत्वपूर्ण केन्द्र मानते हैं। फिर भी इस क्षेत्र की सम्पूर्ण रूपरेखा को आकार प्रदान करने में कई शक्तियां महत्वपूर्ण रही। वाल्डो ने दावा किया कि लोक प्रशासन की विशेष सामग्री सुधार आन्दोलनो तथा विकासशील युग का परिणाम रही है। वे कार्यकारी नेतृत्व, लोक सेवा सुधार, नागरिकों के लिए शिक्षा तथा अकुशलता को वैज्ञानिक तकनीक द्वारा उजागर करने पर जोर देते हैं। ये सभी विशेषताएँ लोक प्रशासन के शास्त्रीय उपागम में सम्मिलित की जाती है।

वाल्डो ने लोक प्रशासन के शास्त्रीय दृष्टिकोण की पाँच मूलभूत विशेषताओं की पहचान की, जिनका प्रभाव 1940 ई0 तक रहा। जो निम्नलिखित थी – राजनीति – प्रशासन द्वन्द को स्वीकारना, एक सामान्य प्रबन्धन निर्देशन, वैज्ञानिक विश्लेषण द्वारा प्रशासन के सिद्धांतो की खोज, कार्यकारी नौकरशाही के केन्द्रीकरण पर जोर तथा लोकतंत्र के प्रति प्रतिबधता। राजनीति–प्रशासन द्विभाजन का प्रथम एवं मूलभूत क्षेत्र यह था कि राजनीति प्रशासन से अलग है और इसलिए प्रशासन विशेषज्ञो का क्षेत्र है तथा राजनीति इससे बाहर है। यह प्रशासनिक शाखा की महत्वपूर्ण शक्तियों के लिए शक्तिशाली मुख्य कार्यकारी की मांग करती है। दूसरी विशेषता–सामान्य प्रबन्धन निर्देशन यह कल्पना कि निजी प्रबन्धन की तकनीकों को लोक क्षेत्र में प्रयोग किया जा सकता है। वाल्डो के मतानुसार लोक प्रशासन उद्यम प्रक्रिया तथा उद्यमशील विचार दोनो को स्वीकार करता है। जैसे की उद्यम प्रतिमान शक्ति समानता को निरूत्साहित करता है, मुख्य कार्यकारी की भूमिका को बढ़ाता है साथ ही पदानुक्रम नियंत्रण मशीनरी अपनाना, योग्य नियुक्ति और उद्यम अनुसार बजट प्रक्रिया को अपनाता है।

तीसरी विशेषता प्रशासन के विज्ञान की खोज थी। यह विश्वास करता था कि प्रशासन का वैज्ञानिक अध्ययन, प्रशासन के सामान्य सिद्धांतो की खोज करता है जिस पर कुशल सरकार निर्भर करती है। चौथा कार्यकारी गतिविधियों के केन्द्रीकरण पर जोर था।

इसका सामान्य निर्धारण केन्द्रीकरण, सरलीकरण तथा एकीकरण था। इसके उद्देश्य जिम्मेदारियो का केंद्रीकरण, कार्यकारी शाखा मे पदानुक्रम नियंत्रण द्वारा मुख्य कार्यकारी की शक्ति में वृद्धि करना, कार्यक्षमता के नाम पर अनावश्यक कार्यालयों को समाप्त करना। अंतत/पाचवा शास्त्रीय आगम की लोकतंत्र के प्रति प्रतिबधता। किन्तु लोकतन्त्र कार्यप्रणाली से नहीं बल्कि मूल रूप में परिभाषित होता है। लोकतन्त्र की प्राप्ति के लिए एक मजबूत प्रतिक्रियाशील तथा जिम्मेदार सरकार की आवश्यकता है ताकि महान समाज के लोगों की आवश्यकताओं को पूर्ण किया जा सके।

राजनीति और प्रशासन :– वाल्डो ने राजनीति–प्रशासन के द्वंद्व को असमान रूप से त्याग दिया। वह बताते हैं कि राजनीति/प्रशासन लोकतंत्र/नौकरशाही से संबंधित है। ''उन्हें राजनीति–प्रशासन द्वंद्ववाद के एक विषम आलोचक के रूप में जाना जाता था। यह प्रतिष्ठा उनके शुरूआती प्रकाशन प्रशासनिक राज्य पद आधारित प्रतीत होती है जिसमें उन्होंने राजनीति/प्रशासन को निर्णायक रूप से संकल्पित किया था। क्रियान्वयन। लेकिन उनके बाद के प्रकाशन। बहुत व्यापक अवधारणा और अधिक उभयलिंगी और यहां तक कि द्वंद्ववाद के अधिक सकारात्मक मूल्यांकन की पेशकश करते है, वाल्डो का तर्क है कि अलगाव अपर्याप्त है, या तो वास्तविकता काकक वर्णन या प्रशासनिक व्यवहार के लिए एक नुस्खे के रूप में। उनके लिए द्वैतवाद का उद्देश्य नौकरशाही और लोकतन्त्र के बीच के संघर्ष को सुलझाने के लिए निर्वाचित अधिकारियों को जिम्मेदार ठहराना और प्रशासको को उस नीति के

क्रियान्वयन के लिए प्रतिबंधित करना था। वास्तविकता में शास्त्रीय काल में लोक प्रशासन लोकतन्त्र के आदर्श के लिए गलत था। लोकतन्त्र को वांछनीय के रूप में देखा गया था, लेकिन दक्षता को केंद्रीय सिद्धांत के लिए प्रशासन और शत्रुतापूर्ण की अवधारणा के लिए परिधीय। शास्त्रीय आंदोलन ने केन्द्रापसारक लोकतन्त्र का संकेत दिया और राजनीति और प्रशासन के बीच एक अलगाव का प्रस्ताव करके और वाल्डो को केन्द्रीकरण के डोगमास समस्या के समाधान के रूप मे एकीकरण के कानून के रूप में भरोसा करने के आधार पर केन्द्रित लोकतन्त्र के अपने संस्करण को लागू करने की मांग की। दक्षता मूल्य–समस्या को हम करने उद्देश्य से राजनीति प्रशासन द्वंद्ववाद भी था। यह जोर दिया गया था कि राजनीतिक प्रणाली मूल्यों को स्थापित करेगी और प्रशासन के लिए लक्ष्य निर्धारित करेगी। वाल्डो इसे असभ्य मानते है क्योंकि यह प्रशासन के विज्ञान के कम्पास को कभी–कभी बड़ी घटना के रूप में विस्तारित करने की इच्छा को अनदेखा करता है। नतीजतन, लोक प्रशासन ने नीति के दायरे को खत्म करने की धमकी दी – जैसा कि ब्रिटिश ने भारत पर विजय प्राप्त की – इरादे से नहीं बल्कि सीमा को बांधने की एक सतत प्रक्रिया द्वारा। वाल्डो का तर्क है कि शास्त्रीय लेखकों द्वारा उठाया गया वास्तविक सवाल यह नहीं था कि क्या राजनीति और नीति को प्रशासन से अलग किया जाना चाहिए, लेकिन प्रशासनिक कार्यो को मूल्यों और नीतियों के प्रश्न का निर्धारण करने में कितना आगे बढ़ना चाहिए, जिस के लिए वे एक उपयुक्त उत्तर प्रदान करने में विफल रहे। वाल्डो का विचार है कि हमें एक ऐसे दर्शन की ओर बढ़ना चाहिए जो शक्तियों के बीच सहयोग को प्रोत्साहित करे, वे प्रशासनिक या राजनीतिक हो, न कि अलग–अलग शक्तियों के बीच प्रतिस्पर्धा।

Organisation Theory (संगठनात्मक सिद्धान्त) :- वाल्डो ने संगठन सिद्धांत के विकास को तीन चरणों में विभाजित किया है, पहला शास्त्रीय सिद्धांत काल था, जिसे टेलर, गुलिक, फेयोल और मूनी जैसे लेखकों के कामों से अवगत कराया गया था। संगठन सिद्धांत का शास्त्रीय चरण संगठन के मशीन उपागम पर आधारित था और मानव व्यवहार के तर्कसंगत पहलुओं पर जोर देता था। यह चरण 1930 के दशक में चरम बिन्दु पर पहुंच गया और Papers on the Science of Administration के प्रकाशन से समाप्त हुआ। ''वाल्डो ने संगठन सिद्धांत के विकास के दूसरे चरण को नवशास्त्रीय दृष्टिकोण कहा। यह चरण 1920 के दशक में हॉथोर्ने के अध्ययन के साथ शुरू हुआ और मध्य शताब्दी तक बहुंत महत्वपूर्ण बना रहा शास्त्रीय सिद्धांत के विपरित नव– शास्त्रीय सिद्धांत ने मानव व्यवहार के सामाजिक–मनौवैज्ञानिक तथा भावनात्मक पक्ष पर जोर दिया। संगठन सिद्धांत के विकास में अंतिम चरण आधुनिक संगठन सिद्धांत है, जो वाल्डो के अनुसार, 1958 के मार्च ओर साइमन के organizations के प्रकाशन के साथ शुरू हुआ। यह सिद्धांत एक जैविक या प्राकृतिक प्रणाली मॉडल पर आधारित है जो संगठनात्मक विकास और अस्तित्व पर बल देता है। यह समर्थन करता है कि संगठनों के संगठन की पदानुक्रम नियंत्रण पर कम निर्भरता, प्राधिकरण के अधिक मान्यता प्राप्त स्त्रोत, व्यक्तिगत गतिशीलता के लिए अधिक महत्व और संगठनात्मक परिवर्तन के लिए अधिक ग्रहणशीलता।

तुलनात्मक लोक प्रशासन :– समकालीन अवधि का दूसरा प्रमुख ध्यान तुलनात्मक सार्वजनिक प्रशासन रहा है। वाल्डो के अनुसार, तुलनात्मक लोक प्रशासन आधुनिक संगठन सिद्धांत से मिलता जुलता और भिन्न दोनो हैं। आधुनिक सिद्धांत के साथ पद्धति संबंधी समस्याओं के लिए चिंता के निम्न विषय हैः व्यवस्था ढ़ांचे और संरचनात्मक कार्यात्मकता जैसे मॉडल पर निर्भरता, एक अंतः विषय अभिविन्यास, सार्वभौमिक अवधारणाओं, सूत्रों और सिद्धांतों की खोज और अनुभवजन्य विवरण पर जोर। हालांकि CPA आधुनिक सिद्धांत से निम्न प्रकार अलग है इसका स्पष्ट तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य, सांस्कृतिक विविधता पर इसका ध्यान और वेबरियन नौकरशाहों के साथ इसका आकर्षण। यद्यपि यह एक समय में व्यापक रूप से माना जाता था कि CPA समकालीन सार्वजनिक प्रशासन में सबसे विश्वसनीय क्षेत्र था, परन्तु वाल्डो को लगता है कि वह विश्वास अभी तक पूरा नहीं हुआ है। CPA हमें प्रशासन और सामजिक घटको के बीच के संबंधो, प्रभावी सरकारी प्रशाससन पर सभ्यता की महत्वपूर्ण निर्भरता और प्रशासन के पश्चिमी मॉडल को अन्य संस्कृतियों में स्थानांतरित करने में कठिनाइयों के बारे में बताता है। लेकिन CPA

आंदोलन की मूल समस्या नियोजित सैद्धांतिक मॉडल और क्षेत्र अनुसंधान के साक्ष्य के बीच की दूरी थी और यहां तक कि अपने मजबूत सैद्वांतिक तुलना के साथ, वाल्डो का दावा है कि आंदोलन कठोर सिद्धांत के रास्ते में कुछ भी उत्पन्न करने में विफल रहा। व्यावहारिक परिणामों के लिए CPA विकासात्मक प्रशासन के लिए एक शुरूआत का नेतृत्व करता है। हालांकि इस तरह की शुरूआत ने उत्साहजनक परिणाम नहीं दिए।

New Public Administration (नव लोक प्रशासन) ;- तुलनात्मक लोक प्रशासन में एक महत्वपूर्ण विकास नया लोक प्रशासन आंदोलन है। यह आंदोलन सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र द्वारा फैला है, 1960 के दशक के उतरार्ध और 1970 के दशक के प्रारंभ में, वाल्डो के अनुसार युवाओं के विद्रोह का हिस्सा था और non- marxia की विरोध संस्कृति को छोड़ दिया गया था। वाल्डो द्वारा सम्मेलन की मेजबानी युवा और प्रगतिशील विद्वानों और चिकित्सकों को एक साथ लाकर की गई जो 35 वर्ष से कम उम्र के थे। मिन्नोब्रुक – साइक्रूज विश्वविद्यालय के सम्मेलन कैंद्र को विचारों के एक नए स्कूल के लिए शीघ्रलिपि माना जाता है। सम्मेलन ने भविष्य को ध्यान में रखते हुए 'वाल्डोवियन परिप्रेक्ष्य के उदय पर हस्ताक्षर किया।'' इसका लक्ष्य क्षेत्र के लिए नई दिशाओं को स्थापित करना था और सामाजिक उथल–पुथल के संदर्भ में सार्वजनिक प्रशासन की भूमिका को समेटना था। नव लोक प्रशासन ने पारंपरिक लोक–प्रशासन की एक स्पष्ट वैचारिक–दार्शनिक ढांचे की कमी के लिए आलोचना की और सामाजिक समानता की खोज में प्रशासक के लिए एक सक्रिय भूमिका का समर्थन किया। वाल्डो ने आंदोलन को ''New Romanticism'' के रूप में संदर्भित किया है, क्योंकि यह दार्शनिक आंदोलन के साथ यह धारणा सांझा करता है कि आदमी स्वाभाविक रूप से अच्छा है, लेकिन बुरे संस्थानों द्वारा दूषित है, और यह तर्क पर तर्क की भूमिका पर जोर देकर प्रतिक्रिया करता है। राजनीतिक भागीदारी को शक्ति और सरकार में नागरिक भागीदारी बढ़ाने के साधन के रूप में देखा गया। इस आंदोलन ने वाल्डो द्वारा वर्णित वैकल्पिक विकल्पों के पक्ष में सरल साम्यवाद और बहुलवाद दोनों को खारिज कर दिया, जिसमें जैविक साम्यवाद से लेकर नैतिक और राजनीतिक अभिजात्यवाद शामिल थे। यह संगठन के भीतर परिवर्तन और प्रसार शक्ति को बढ़ावा देने के लिए एक साधन होना था। विकेंद्रीकरण, भागीदारी की तरह, सत्ता को फैलाने और सरकारी और संगठनात्मक प्रक्रियाओं में नागरिक भागीदारी को बढ़ाने के लिए था। प्रतिनिधि लोकतन्त्र ग्राहक–केंद्रित प्रशासन को बढ़ावा देने और प्रशासकों द्वारा ग्राहक हितों का प्रतिनिधि करने के लिए था। हालांकिं, वाल्डो को नए लोक प्रशासन आंदोलन की अवधारणाओं पर कुछ आशंकाए थी। भागीदारी और प्रतिनिधि नौकरशाही पर, वह दावा करते है कि तर्क अकसर बेइमानी और असंगत होते है, अगर बेइमानी नहीं होती है। भागीदारी के समर्थक, वाल्डो का तर्क है, लगता है कि कुछ अदृश्य हाथ समन्वय की समस्याओं को हल करेंगे।

वाल्डो को नये लोक प्रशासन के संगठनात्मक रूख में कुछ वैधता का पता चलता है, लेकिन वह अभियोग के बारे में, अनुचित, सहज और सबसे ऊपर, अवास्तविक पर विचार करते है। राजनैतिक संगठन और नौकरशाही का युग तीव्र परिवर्तन का युग रहा है। भले ही नौकरशाही यथास्थिति का कार्य करती है, लेकिन यथास्थिति स्वयं एक अखंड हित नहीं है, बल्कि हितों की विविधता है, जो सभी को परोसा जाना चाहिए। दक्षता के सवाल को संबंधित करते हुए, वाल्डो ने आरोप लगाया कि आलोचकों ने दक्षता की एक संकीर्ण अवधारणा पर हमला किया है जो लम्बे समय से खारिज कर दिया था। वह कहते है कि ''सार्वजनिक दर्शन'' नाम की कोई चीज नहीं है और यह समस्या अब सार्वजनिक प्रशासन की सीमाओं का पता लगाने के लिए है।

Public Administration as a Profession (लोक प्रशासन एक पेशे के रूप में) :- वाल्डो सार्वजनिक प्रशासन में एक ''पेशेवर'' अभिविन्यास के प्रति अधिक सहानुभूति रखते थे। वे स्वीकार करते है कि लोक प्रशासन सख्त अर्थों में एक पेशा नहीं है, हालांकि, वह व्यावसायिकता को एक अच्छा दृष्टिकोण या रणनीति मानते है और कहते है कि सार्वजनिक प्रशासन को एक अनुशासन से आगे बढ़ना चाहिए। इस संबंध में वाल्डो की पसंदीदा उपमा दवा हैं, जो विज्ञान और कला दोनों हैं। सिद्धांत और व्यवहार दोनो मे एकल सिद्धांत के बजाय एक बहु–विषयक सिद्धांत पर

बल है, और एक व्यापक सामाजिक उद्देश्य द्वारा इसे नेशन दिय जाता है। लोक प्रशासन को एक पेशे के रूप में सोचना, वाल्डो का कहना है कि, लोक प्रशासन को उदार कला के महाविद्यालयों में उसकी परिस्थितिकीय श्रेणी की स्थिति से मुक्त कर देना चाहिए इसे एक विशिष्ट प्रतिमान न होने के अपराध बोध से मुक्त कर देना चाहिए। इस प्रकार, वाल्डो का सुझाव है कि लोक प्रशासन एक पेशे के रूप में कार्य कर सकता है।

''सार्वजनिक प्रशासन और भविष्य :– वाल्डो, एक स्व–वर्णित शौकिया भविष्यवादी के रूप में अशांत एवं परिवर्तनकारी विश्व के भविष्य को देखते हैं और परिवर्तन का मुख्य आधार उत्तर औद्योगिक समाज से औघोगिक समाज था। यह सब आर्थिक–सामाजिक–राजनीतिक परिवर्तन की त्वरित गति के परिणामस्वरूप होगा जो संस्थागत और मनोवैज्ञानिक सामाजिक संकट पैदा करेगा। ये शक्तियां समस्याओं का एक समूह बनाती हें जिन्हें कम से कम भाग में सार्वजनिक प्रशासन द्वारा संबोधित किया जाना चाहिए। लोक प्रशासन के लिए एक विशेष समस्या संगठन और प्रबंधन के नए रूपों और नई जिम्मेदारियों की धारणा के लिए काल के साथ काम करेगी। वाल्डो ने भविष्यवाणी की है कि भविष्य के संगठन कम नौकरशाही वाले होगे, एक मिश्रित सार्वजनिक–निजी प्रकृति के अधिक, एकसमान संगठनों की तुलना में अधिक चेन, कॉम्पलेक्स या संगठनों के सिस्टम और उनके संचालन में अधिक अन्तर्राष्ट्रीय और बहुराष्ट्रीय होंगे। ये नई संगठनात्मक शैली सवाल उठाती है कि अराजकता को बढ़ावा दिए बिना कम नौकरशाही संगठनों को कैसे विकसित किया जाए और संघर्ष और संकट की बढ़ती संभावना के साथ कैसे सामना किया जाए। इसके अलावा, सार्वजनिक प्रशासन ओर भी अधिक कार्य करने के लिए कहा जाता है। यह एक प्रणाली में अधिभार के खतरे को उठाता है जो पहले से ही प्राधिकरण से परे की जिम्मेदारी है जिसे वह कमांड कर सकता है या वह पुण्य जो उसे बुला सकता है। सार्वजनिक प्रशासन के लिए इस भविष्य के निहितार्थ कई गुना है। लोक प्रशासन ऊपर उल्लिखित बलों से निपटने के लिए सरकार का प्राथमिक तन्त्र है। इस प्रकार यह परिवर्तन और परिवर्तन में केन्द्रीय रूप से शामिल होगा। लोक प्रशासकों के निर्णय अनिवार्य रूप से नीतिगत निर्णय, वाद्य निर्णय, कानूनी निर्णय और नैतिक निर्णय का एक संयोजन होगे। लोक प्रशासन को उद्यम को दार्शनिक, अनुशासनात्मक और पद्धतिगत बहुलवाद द्वारा चिंहित किया जाएगा क्योंकि हम जीवित रहने, अनुकूलन और परिवर्तन को नियंत्रित करने का प्रयास करते है।

मूल्यांकन :– वाल्डो एक रचनाकर की तुलना में सार्वजनिक प्रशासन के क्षेत्र में अधिक आलोचक और एक टिप्पणीकार है। लोक प्रशासन के इतिहास में वाल्डों के दृष्टिकोण के विवरणों से वंचित करना संभव है, लेकिन वाल्डो के काम के साथ बड़ी समस्या उनकी आवश्यक महत्वाकांक्षा है। वाल्डो ने जोर देकर कहा कि सार्वजनिक प्रशासन राजनीति में आवश्यक रूप में शामिल है, लेकिन वह राजनिति–प्रशासन के द्वंद्ववाद में कुछ निरंतर मूल्य देखता है। वह कहते हैं कि लोक प्रशासन कला और विज्ञान दोनों हैं, लेकिन उस क्षेत्र को निर्दिष्ट करने में विफल है जिसमें प्रत्येक लागू हो सकता है। उनका तर्क है कि सार्वजनिक प्रशासन दोनों से अलग है, और समान, अंतर और उनके परिणामों के विवरण में निर्दिष्ट किए बिना निजी प्रशासन। वह सोचता है कि हमारे पास लोकतंत्र और नौकरशाही दोनों होनी चाहिए, लेकिन वह हमें यह भी नहीं बताता है कि उन ताकतों के बीच के संघर्षों को कैसे सुलझाया जा सकता है या उनके बीच इष्टतम संतुलन क्या है। वह कहते हैं कि सार्वजनिक प्रशासन नहीं है, और शायद नहीं होना चाहिए, एक पेशा नहीं है, लेकिन वह आग्रह करता है कि यह एक जैसा कार्य करे। वाल्डो का मानना है कि प्रशासन और सभ्यता अंतरिम रूप से जुड़े हुए हैं और यह प्रशासन परिवर्तन से निपटने के लिए सरकार का केंद्रीय तंत्र है।

अभ्यास हेतू प्रश्न

1. हर्बर्ट साइमन के लोक प्रशासन के क्षेत्र में योगदान के सम्बन्ध में प्रस्ताव लिखिए।
2. एल्टन मेयो द्वारा हार्थोन सयंत्र में किए गए प्रयोगों की चर्चा कीजिए।
3. द्वी–घटकीय सिद्धान्त के विशेष संदर्भ में हर्जबर्ग के योगदान का विवरण दीजिए।
4. अब्राहम–मास्लो के आवश्यकता सिद्धान्त के पदानुक्रम का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।
5. मानव व्यक्तित्व के बारे में क्रिस आर्गिरिस के विचारों और संगठन की कार्यप्रणाली पर उसके प्रभावों की चर्चा कीजिए।
6. पीटर ड्रकर के उद्देश्यों द्वारा प्रबन्धन के विचारो का परीक्षण कीजिए।
7. नीति विज्ञान के संदर्भ में येहेज्केल ड्रोर के योगदान का वर्ण कीजिए।
8. नवीन लोक प्रशासन में डवाइड वाल्डो की भूमिका का वर्णन करें।
9. चेस्टर बरनार्ड द्वारा प्रतिपादित कार्यपालिका कार्यों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
10. हरबर्ट साईमन के निर्णय निर्माण मॉडल का परीक्षण कीजिए।
11. अब्राहम मास्लो के आवश्यकता पदक्रम सिद्धान्त का मूल्यांकन कीजिए।
12. सिद्धान्त 'वाई' एकीकरण एवं आत्म नियन्त्रण की वैकल्पिक मान्यता है स्पष्ट कीजिए।
13. क्रिस आर्गीरिस के संगठनात्मक विकास के लिए व्यूह रचना का विवेचन कीजिए।
14. रेन्सिस लिकर्ट के सहयोगी सम्बन्ध व लिंक्ड–पिन मॉडल का परीक्षण कीजिए।
15. पीटर ड्रकर का एक प्रशासनिक विचारक के रूप में योगदान का वर्णन कीजिए।
16. येहेज्केल ड्रोर के नीति विज्ञानों मे योगदान का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।

Short Answer Type Question

1. औपचारिक संगठनों को परिभाषित कीजिए।
2. उदासीनता के क्षेत्र से आपका क्या अभिप्राय है?
3. निर्णय–निर्माण में तथ्य व मूल्य से आपका क्या अभिप्राय है?
4. अब्राहम मास्लो के अनुसार सुरक्षा आवश्यकता क्या है?
5. स्कैनलान प्लान क्या है?
6. संतोषकों से आपका क्या अभिप्राय है?
7. क्रिस आरगीरिस के दो आलोचनात्मक बिन्दुओं की विवेचना कीजिए।
8. नीति विज्ञान क्या है?
9. साम्य का सिद्धान्त किसके द्वारा विकसित किया गया?
10. सामाजिक व्यवस्था विचारधारा का प्रवर्तक कौन है?
11. हर्जबर्ग व मास्लो के सिद्धान्तों को 'पूर्णत गलत सिद्धान्तं' किसने कहा?
12. कार्मिक उत्पादन की सामाजिक व मनोवैज्ञानिक तत्व प्रभावित करते है सबसे पहले ये किसने सिद्ध किया?
13. चेस्टर बरनार्ड द्वारा लिखित पुस्तक 'कार्यकारी के कार्य' किस वर्ष प्रकाशित हुई।
14. रैनसिस लिकर्ट द्वारा दिए गए परोपकारी सत्तात्मक व्यवस्था का वर्णन करें।
15. लोक प्रशासन में टी–ग्रुप तकनीक व संवेदनशील प्रशिक्षण के प्रयोग का सुझाव किसने दिया?
16. 'राज्य मेरी संतोषप्रद संस्था है' के रूप में नौकरशाही को किसने वर्णित किया?